अंक 81 अप्रैल-जून, 98

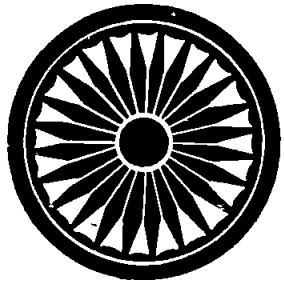

राजभाषा भारती

राजभाषा विभाग गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

'संविधान – सभा में हिन्दी'

संविधान सभा में हिन्दी को राज-भाषा के रूप में स्वीकार करने के साथ-साथ हिन्दी कैसी हो और अन्य भारतीय भाषाओं के भी पल्लवित और विकसित होने के लिए देश में एक वातावरण बने इसकी चिंता भी बहस का मुद्दा बनी रही। संसद में विभिन्न प्रांतों के सदस्यों ने अपनी बात और अपनी आशंकाएँ किस प्रकार व्यक्त कीं इसका एक नमूना है दिनांक 13-9-1949 की यह बहस...

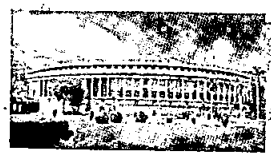

पं० लक्ष्मीकान्त मैत्र
(पश्चिम बंगाल)

"अहिन्दी भाषी सदस्य यह माँग नहीं कर रहे हैं कि उनकी भाषाओं को राजभाषा का दर्जा दिया जाए। क्या आप इस बलिदान की भावना का महत्व समझते हैं? मैंने कभी आग्रह नहीं किया कि बंगला इस देश की राजभाषा हो।... मैंने सोचा कि देश के व्यापकतर हित में हमें देश में एक भाषा विकसित करनी होगी। वह भाषा हिन्दी है, जिसे हमें परस्पर सहयोग के द्वारा सारे देश के लिए उपयोगी बनाना है।

... लेकिन एक तरफ आप कहें कि हिन्दी थोपी नहीं जाएगी और दूसरी तरफ अपनी हर बात शत-प्रतिशत मनवा लेना चाहें तो कैसे चलेगा? भाषा सरीखे प्रश्न का समाधान जोर-जबर्दस्ती से नहीं हो सकता। भाषा राष्ट्र की जीवनशक्ति है, उसके साथ खिलवाड़ अच्छी नहीं। मैं नहीं समझता कि भाषाएँ किसी के आदेशानुसार [redacted] ती हैं या उनके विकास की कोई तारीख तय की [redacted] है। भाषा तो एक जीवित प्राणी की तरह विकसित और पल्लवित होती है।"

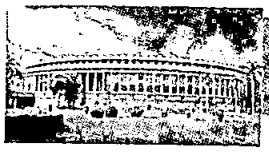

लक्ष्मीनारायण साहू
(उड़ीसा)

"ऐसी हिन्दी गढ़ना संभव नहीं, जिसमें सिर्फ़ सरल ही सरल शब्द हों।... आखिरकार जब हम 'सही' अंग्रेज़ी बोलने के लिए इतना प्रयत्न करते हैं तो अपनी राष्ट्रीय भाषा के विकास के लिए थोड़ी कोशिश करने में क्या हर्ज़ है?...

कुछ लोगों को लगता है कि अंग्रेज़ी गयी तो उनके प्राण ही चले जाएँगे... लेकिन हमें तो आगे बढ़ना है बतौर एक राष्ट्र के... कुछ लोगों को इससे असुविधा होती है तो क्या किया जाए...।

जब हम देवनागरी लिपि में लिखी हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकारने का बिल्कुल ठीक फैसला कर रहे हैं, उस वक्त हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि अन्य प्रांतीय भाषाएँ भी अपने-अपने क्षेत्रों में विकसित हो सकें और उनकी प्रगति में किसी तरह की बाधा न पड़े।"

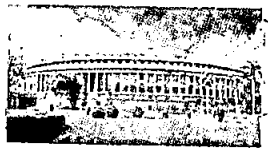

एन.वी. गाडगिल
(महाराष्ट्र)

"...आखिरकार ऐसा तो कोई भारतीय हो नहीं सकता जो अपनी मातृभाषा या अपने देश की भाषाओं से कहीं ज्यादा लगाव अंग्रेज़ी से रखता हो। इसलिए हिन्दी भाषी लोगों को अपनी बात धीरज के साथ, समझाने बुझाने के लहजे में अहिन्दी लोगों तक पहुँचानी चाहिए, न कि धमकाने के अंदाज में।...

हम ऐसा क्यों मानें कि सारी समस्याएँ हमीं को हल कर लेनी हैं, कुछ समस्याएँ दस पन्द्रह बरस बाद की पीढ़ी के लिए भी छोड़ दें... आज हम यह बात लगभग आम राय से स्वीकार कर रहे हैं कि संघ की राजभाषा हिन्दी को होना चाहिए... मैं तो समझता हूँ कि ऐसी घोषणा ही अपने आप में एक बड़ी उपलब्धि होगी।"

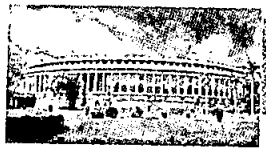

टी.ए. रामलिंगम चेट्टियार
(मद्रास)

"वास्तविक स्थितियों को देखते हुए हम नागरी में लिखी हिन्दी को राजभाषा स्वीकार कर तो रहे हैं लेकिन आप इस प्रसंग में 'राष्ट्रभाषा' शब्द का प्रयोग नहीं कर सकते। कारण यह कि हिन्दी भी उतनी ही राष्ट्रीय भाषा है

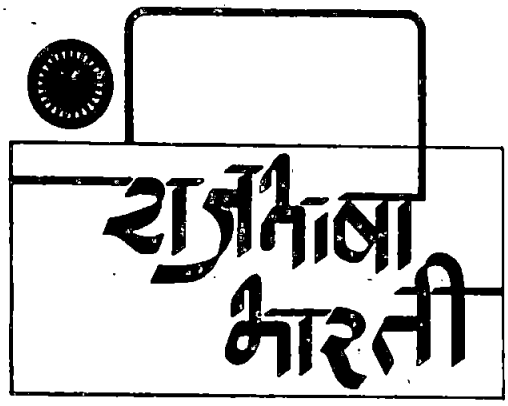

राजभाषा की त्रैमासिकी

वर्ष : 21
अंक : 81
चैत्र-आषाढ़:—1920, अप्रैल-जून, 98

☐ संपादक
प्रेम कृष्ण गोरावारा
निदेशक (अनुसंधान)
फोन : 4617907

☐ उप संपादक
नेत्र सिंह रावत
फोन : 4698054
सुरेन्द्र लाल मल्होत्रा
फोन : 4698054

☐ संपादन सहायक
शांति कुमार स्याल
फोन : 469804

निःशुल्क वितरण के लिए

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। सरकार अथवा राजभाषा विभाग का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

पत्र-व्यवहार का पता :

संपादक, राजभाषा भारती,
राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय,
लोकनायक भवन, (दूसरा तल)
खान मार्किट, नई दिल्ली-110003

अनुक्रम

				पृष्ठ
☐ संपादकीय				
☐ लेख				
1.	संविधान द्वारा राष्ट्रलिपि : देवनागरी	—	कैलाशनाथ गुप्त	5
2.	शब्दों के बदलते हुए अर्थ	—	विजय सिंह चौहान	11
3.	हिंदी दिवस	—	प्रो. किशोरी लाल शर्मा	16
4.	स्वतंत्रता की स्वर्ण जयंती एवं हिंदी	—	निशिकांत महाजन	19
5.	सरल हिंदी के अर्थ	—	जगन्नाथ	23
6.	भारत के रत्न : कलाम साहब	—	राजेन्द्र साहब	26
7.	लेखक बनाम अनुवादक ग्युंटर ग्रास की जर्मन रचना ''त्सुंगे त्साइगन'' के हिंदी अनुवाद का विश्लेषण	—	ए. एल. मेहता	27
☐ साहित्यिकी				
8.	मुस्लिम कवियों की कृष्ण-कल्पना	—	नोतन लाल	35
☐ पुरानी यादें नए परिप्रेक्ष्य				
9.	राष्ट्रभाषा हिंदी समर्थक : सुभाषचंद्र बोस	—	आचार्य राधागोविंद थोंगम	38
10.	बहुमुखी प्रतिभा के महापंडित राहुल सांकृत्यायन	—	डा. सुरेन्द्र प्रसाद जमुआर	39
☐ भाषा संगम				
	मलयालम कविताएं			
11.	मेरे गुरुदेव	—	वल्लत्तोल नारायण मेनन	40
12.	राजघाट के फूल	—	वी. ए. केशवन् नंपूतिरि	42

	☐ **पुस्तक समीक्षा** (इस स्तम्भ में लेखक का नाम/समीक्षक का नाम पूर्वापर क्रम में दिया गया है) पड़ोसन (राजकुमार सैनी/ईश्वर चन्द्र मिश्र), रबिया (मुहम्मद अलीम/रेणु अरोड़ा), हिंदी : मत-अभिमत (डा. विमलेश कांति वर्मा/डा. मुकेश अग्रवाल), प्रेम और युद्ध (शंकर सिंह/राम निवास तिवारी), समर्पण (कांता शुक्ला/डा. सूर्य प्रसाद दीक्षित) देवनागरी टंकण : सिद्धांत तथा व्यवहार (रमेश चन्द्र/पुष्पा गुप्ता), बालु के गुम्बद (विजया गोयल/रामनिवास तिवारी), आजीविका साधक हिंदी (डा. पूरनचंद टण्डन/हरीश कुमार सेठी, प्रतिनिधि बाल कहानियां (डा. दिनेश चमोला/सुभाष तनेजा), दसवें की राख (राजेश श्रीवास्तव/राकेश कुमार)	44
	☐ **कार्यशालाएं**	54
	☐ **समिति समाचार**	57
	☐ **संगोष्ठी/सम्मेलन**	60
	☐ **विविधा**	66
	●**समाचार** ●**पुरस्कार** ●**प्रतियोगिताएं** ●**आदेश-अनुदेश**	

संपादकीय

प्रायः लोक व्यवहार में किसी भाषा को महता और श्रेष्ठता का मूल्यांकन प्रचार, साहित्य और शब्द भण्डार के आधार पर किया जाता है। शताब्दियों से हिंदी का प्रचार होता चला आ रहा है। इसमें हिंदोतर संतों, मनीषियों, विद्वानों, राष्ट्रनेताओं की भी विशिष्ट भूमिका रही है। वर्तमान में भी अनेक अहिंदी भाषी मनीषी इस पुनीत कार्य में संलग्न हैं।

साहित्य की दृष्टि से हिंदी का पद्य भण्डार मध्ययुग से निरन्तर बढ़ता चला आ रहा था। भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के प्रयत्न से बहुत से लोग हिंदी की ओर आकृष्ट होने लगे। गत कुछ वर्षों में हिंदी में साहित्य रचना का कार्य प्रबल वेग से हुआ है और अब हिंदी में सभी विषयों पर अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो रही हैं।

संघ की राजभाषा हिंदी का प्रयोग विविध क्षेत्रों में क्रमिक रूप से बढ़ रहा है। वैज्ञानिक एवं तकनीकी कार्यों में हिंदी के प्रयोग को बढ़ाने के लिए संबंधित विषयों की तकनीकी एवं वैज्ञानिक और पारिभाषिक शब्दों की आवश्यकता होती है। इस संबंध में सरकार द्वारा लाखों नये शब्दों का निर्माण किया जा चुका है। अब आवश्यकता है इन शब्दों को प्रयोग में लाने की।

राजभाषा भारती का अंक 81 आपके समक्ष है। हमारा यह प्रयास रहता है कि पत्रिका में ऐसे लेख प्रकाशित किए जाएं, जिनसे केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में कार्यरत अधिकारियों एवं कर्मचारियों को हिंदी में कार्य करने की प्रेरणा मिले। प्रस्तुत अंक में अधिकांशतः इसी प्रकार के लेखों आदि को संकलित करने का प्रयास किया गया है।

संसार के सभी लोग सदा आपस में बात करते और सैकड़ो-हजारों शब्दों का नित्य व्यवहार करते रहते हैं। इसलिए हमारे लिए यह जरूरी हो जाता है कि शब्दों के महत्व और अर्थ को ढंग से समझें। शब्द और अर्थ का पारस्परिक संबंध नित्य भी होता है और अनित्य भी। देश भेद से भी और कालभेद से भी शब्दों के अर्थ अलग-अलग होते हैं और बदलते भी रहते हैं। वैदिक काल के कुछ शब्दों के अर्थ कुछ और होते थे, परवर्तीकाल की संस्कृत भाषा में उनके कुछ और अर्थ हुए और आजकल उन दोनों से भिन्न कुछ और ही अर्थों में उनका प्रयोग देखने को मिलता है। हिंदी में भी अनेक ऐसे शब्द हैं जिनके पुराने अर्थ कुछ और होते थे और आजकल कुछ और हैं। हो सकता है आगे चलकर वर्तमान अर्थ भी बदल जाएं। ''शब्दों के बदलते हुए अर्थ'' शीर्षक लेख में कुछ सामयिक शब्दों के अर्थ के विभिन्न पक्षों का वर्णन किया गया है।

लिपि का महत्व भाषा के लिए निर्विवाद है। वस्तुतः लिपि भाषा का प्रतिरूप ही है। लिपि से ही भाषा को स्थायित्व प्राप्त होता है। देवनागरी लिपि के उद्‌भव, विकास आदि के संबंध में विद्वानों के अलग-अलग मत हैं। ''संविधान द्वारा स्वीकृत राष्ट्रलिपि देवनागरी'' शीर्षक लेख में देवनागरी लिपि के विभिन्न पक्षों पर प्रकाश डाला गया है।

स्वतंत्रता की स्वर्ण जयंती सारे देश में मनाई गई। स्वतंत्रता के इन 50 वर्षो में क्या-क्या उपलब्धियां रही हैं तथा राजभाषा हिंदी की स्थिति में क्या परिवर्तन हुए हैं। इन सभी बातों का विस्तार से ''स्वतंत्रता की स्वर्ण जयंती एवं हिंदी'' शीर्षक लेख में विवेचन किया गया है। अन्य लेखों एवं विभिन्न स्तंभों के अन्तर्गत यथा साहित्यिकी, पुरानी यादें नये परिप्रेक्ष्य, भाषा संगम आदि में पठनीय एवं रोचक सामग्री संकलित करने का प्रयास किया गया है।

राजभाषा नीति के कार्यान्वयन की दृष्टि से अप्रैल माह का अपना महत्व है क्योंकि इसी माह से विभाग द्वारा प्रतिवर्ष तैयार किया जाने वाला वार्षिक कार्यक्रम लागू हो जाता है। वर्ष 1998-99 का कार्यक्रम मंत्रालयों एवं विभागों को उपलब्ध करवाया जा चुका है। कार्यक्रम में उल्लिखित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए चरणबद्ध ढंग से सघन प्रयास किए जाने आवश्यक हैं। इन सभी के प्रयासों के फलस्वरूप ही राजभाषा हिंदी के प्रयोग में गति आएगी।

—प्रेमकृष्ण गोरावारा

संविधान द्वारा स्वीकृत राष्ट्रलिपि देवनागरी

—कैलाश नाथ गुप्त

भारत के संविधान के अनुच्छेद 343(1) के अनुसार देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिंदी संघ की राजभाषा स्वीकार की गई है। देवनागरी लिपि जो उद्गम और विकास में सर्वथा भारतीय है और अन्य भारतीय लिपियों से अधिकतर मिलती-जुलती है, यदि उसे भारतीय भाषाओं की लिपि स्वीकार कर ली जाए तभी यह वास्तव में राष्ट्रलिपि होगी।

लिपि की उत्पत्ति और विकास के संबंध में कहना उसी प्रकार कठिन है जिस प्रकार भाषा की उत्पत्ति और उसके विकास के बारे में। लिपि की उत्पत्ति भाषा की उत्पत्ति की तुलना में बहुत बाद में हुई। संसार की लिपियों में कौन सी लिपि प्राचीनतम है, इस बारे में तथ्य को देखना असंभव है। इसके बारे में अभी तक अनुमान ही लगाये गये हैं। आज संसार में जितनी भी लिपियां हैं, उनमें पांच मुख्य हैं : (1) रोमन लिपि जिसका क्षेत्र पश्चिमी यूरोप, आस्ट्रेलिया और संपूर्ण अमेरिका है। (2) ग्रेशोरोमन लिपि, जिसका क्षेत्र पूर्वी यूरोप तथा सोवियत संघ का एशियाई भाग है। (3) चीनी लिपि जिसका क्षेत्र मुख्य रूप से पूर्वी एशिया है। (4) अरबी या फारसी लिपि जिसका क्षेत्र पश्चिम एशिया है। (5) ब्राह्मी लिपि जिसका क्षेत्र भारत तथा दक्षिण पूर्व एशिया है।

भारत में लिपि का इतिहास बड़ा ही रोचक है। कुछ प्राचीन नमूने जो सिंधु घाटी के हड़प्पा तथा मोहन-जोदड़ो में प्राप्त मोहरों पर अंकित हैं, उससे यह पता चलता है कि भारत में लिखने की कला का ज्ञान अत्यंत ही प्राचीनकाल से है। विश्व के सबसे प्राचीन ग्रंथ ऋग्वेद में भी मिले कुछ तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि उस काल में भी भारतीयों को लिपि का ज्ञान था। मौर्यकाल में ब्राह्मी लिपि का प्रचलन संपूर्ण देश में था। ईसा से लगभग तीसरी शताब्दी तक इस देश में ब्राह्मी लिपि का प्रचार रहा। चौथी शताब्दी के आरम्भ में ही उत्तर और दक्षिण की ब्राह्मी लिपि में अंतर परिलक्षित होने लगे थे। ब्राह्मी को वास्तव में भारतीय मस्तिष्क का एक चमत्कार समझना चाहिए जिसमें स्वर और व्यंजनों के सुव्यवस्थित चिह्नों द्वारा वर्ण माला की सभी मूलभूत ध्वनियों का स्पष्ट विभाजन है। ब्राह्मी लिपि भारतीय लिपियों की जननी है।

अब हम भारत की मुख्य लिपि देवनागरी को देखें जिसका स्रोत भारत की प्राचीनतम राष्ट्रीय लिपि ब्राह्मी को माना जाता है। देवनागरी नाम की उत्पत्ति के विषय में बहुत मतभेद हैं। ऐसा माना जाता है कि देवनागरी नाम काशी नगर के नाम के आधार पर दिया गया है, जिसे संस्कृत में देवनगर कहते हैं। विद्वानों का मत है कि एक बार भारत की समस्त प्राकृत भाषाओं के प्रतिनिधि काशी नगर में एकत्र होकर भारत की एकता को बनाए रखने के लिए एक सामान्य लिपि को अपनाने के संबंध में विचार विमर्श करने के बाद देवनागरी को सामान्य लिपि के रूप में स्वीकार करने को सहमत हुए। कुछ विद्वान इसका संबंध "नागर ब्राह्मणों" से मानते हैं। उनके अनुसार जो लिपि ब्राह्मणों में प्रचलित थी, वह नागरी कहलयी है। नोरगी एक बौद्धिक लिपि है। समय-समय पर इसमें परिवर्तन व विकास होता रहा है। इसमें स्वर और व्यंजनों को पृथक-पृथक रूप से लिपिबद्ध करने की क्षमता है।

श्रेष्ठ लिपि के गुणों के प्रकाश में देखा जाए तो भी देवनागरी लिपि इस सूची में सर्वोपरि स्थान रखती है। लिपि शास्त्रियों ने वैज्ञानिक लिपि में निम्न गुण बताये हैं :—

1. लिपि कलात्मक हो।
2. जिस भाषा के लिए उस लिपि का प्रयोग हो, उसकी सब भाषा प्रयुक्त ध्वनियों के प्रतीक उसमें आ जाएं।
3. जो लिखा जाए वही पढ़ा भी जाए।
4. एक ध्वनि के लिए सदैव एक चिह्न हो।
5. एक चिह्न से एक ही शब्द का बोध हो।
6. लिखते समय प्रत्येक शब्द के अक्षर मिलकर एक पूर्ण शब्द-करण धारण कर लें।
7. गतिपूर्वक ऐसा लिखा जा सके कि वह शुद्ध-शुद्ध पढ़ा जा सके।
8. अक्षरों के लिखित और मुद्रित रूप में भ्रम न हो।

देवनागरी लिपि निर्दोष, सर्वगुण-सम्पन्न और भारत की राष्ट्रलिपि होने की समस्त योग्यताएं रखती हैं।

देवनागरी लिपि हमारी राष्ट्रीय लिपि के रूप में स्वीकृत है। इसकी लोकप्रियता का प्रमुख कारण स्वाभाविकता और वैज्ञानिकता है। इस लिपि का महत्व केवल इस बात में ही नहीं है कि यह देश की राजभाषा हिन्दी की

2319 HA/98—2A

मान्य लिपि है, बल्कि इस बात में भी है कि इस लिपि का प्रयोग भारत की प्राचीन भाषा संस्कृत तथा एक आधुनिक भारतीय भाषा मराठी और गुजराती के लिए भी होता है। भारत की कई अन्य लिपियां भी देवनागरी लिपि के बहुत समीप हैं। नेपाली भाषा के लिए भी देवनागरी का प्रयोग किया जाता है। एक बार आचार्य विनोबा भावे ने कहा था—"हिंदुस्तान की एकता के लिए हिंदी भाषा जितना काम देगी, उससे बहुत अधिक काम देवनागरी लिपि देगी। इसलिए मैं चाहता हूं कि हिंदुस्तान की समस्त भाषाएं देवनागरी में लिखी जाएं।"

जवाहरलाल नेहरू जी का विचार था कि भारत की सारी भाषाओं के लिए किसी न किसी दिन एक सामान्य लिपि को प्रोत्साहित करना होगा। उन्होंने यह मत भी व्यक्त किया था कि समस्त भारत के लिए जो सामान्य लिपि स्वीकार की जाए, वह संबंधित लिपियों को हटाने के विचार से न होकर उनके लिए अतिरिक्त लिपि के रूप में स्वीकार करने हेतु होनी चाहिए। एक क्षेत्र के लोग दूसरे क्षेत्र की भाषाओं से अपना परिचय आसानी से बढ़ा सके, इसके लिए देवनागरी को समस्त भारतीय भाषाओं की एक अतिरिक्त लिपि के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए। पूरे देश के लिए एक सामान्य लिपि की महत्ता न्यायमूर्ति शारदाचरण मित्र ने भी स्वीकार की थी। उन्होंने अपने इस विचार के पोषण के लिए वर्तमान शती के प्रारंभ में "एक लिपि विस्तार परिषद्" नामक संस्था के तत्वावधान में और "देवनागर" नामक पत्रिका के माध्यम से यह आंदोलन चलाया था।

देवनागरी का प्रयोग भारत के बहुत बड़े भाग पर होने तथा इस लिपि की विशिष्टता के कारण ही देवनागरी लिपि को राजभाषा की लिपि के रूप में संविधान में स्वीकार किया गया है। भारत की एकता के लिए एक राष्ट्र-भाषा की जितनी आवश्कता है उतनी ही एक राष्ट्र लिपि की भी आवश्यकता है। यह संसार की लिपियों में एक आदर्श लिपि है। देवनागरी यानी नागरी लिपि में भारतीय भाषाओं की ध्वनियों को अंकित करने की अत्यधिक क्षमता है। नागरी लिपि अत्यंत सुगम भी है। इसके बारे में कहा जाता है कि कोई भी व्यक्ति अर्थात् अनक्षर व्यक्ति भी इस लिपि का आसानी से, शीघ्रता से अधिकारी बन सकता है। इसकी सुगमता सुलभ्यता ही ऐसा गुणधर्मी कारण है जो इसके व्यापक प्रसार के मार्ग में सहयोगी है।

अब हम इस (देवनागरी) लिपि की वैज्ञानिकता के संबंध में चर्चा करेंगे। प्रत्येक भाषा की अपनी एक लिपि होती है जिसके माध्यम से उस भाषा के विचारों को लिपिबद्ध किया जा सकता है। लिपि ऐसी होनी चाहिए जो वैज्ञानिकता की कसौटी पर खरी उतरती हो परन्तु अभी तक कोई भी लिपि पूर्ण वैज्ञानिक सिद्ध नहीं हो पाई है। प्रत्येक लिपि में कुछ विशेषताओं के साथ कुछ कमियां भी मिलती हैं। यह कमियां ही उस लिपि की वैज्ञानिकता पर प्रश्न चिह्न लगाती हैं। देवनागरी के विषय में इसके विरोधी यह भी मत देते हैं कि इस लिपि में गत्यात्मकता का अभाव है एवं शिरोरेखा के कारण इसका अंकन तथा टंकण अधिक समय सापेक्ष है। विभिन्न दिशाओं में लगने वाली मात्राओं के कारण भी यह लिपि अधिक कठिन तथा परिश्रम सापेक्ष है। कुछ वर्णों के एकाधिक रूपों के प्रचलन में होने तथा कुछ वर्णों के अवैज्ञानिक स्वरूप के कारण भी यह लिपि भ्रामक हो जाती है। संसार की प्रत्येक चीज में कुछ दोष भी हो सकते हैं। दोषों को दूर करने के लिए कुछ उपाय या समाधान ढूंढना चाहिए। कुछ कमियों के बावजूद भी देवनागरी लिपि अनेक दृष्टियों से काफी वैज्ञानिक तथा भारत की सर्वश्रेष्ठ लिपि की अधिकारिणी है।

किसी भी संपूर्ण लिपि में एकरूपता, निश्चितता, स्पष्टता, यंत्रयोग्यता, सुसाध्यता, सुंदरता तथा गत्यात्मकता आदि विशेषताएं होनी चाहिए। इन्हीं विशेषताओं के आधार पर किसी लिपि की वैज्ञानिकता की परख की जाती है। देवनागरी लिपि में लगभग इन सभी विशेषताओं का समावेश है। नागरी लिपि की सबसे प्रमुख वैज्ञानिकता है इसके उच्चारण एवं लेखन में एकरूपता। यह लिपि भाषा के उच्चारण के अनुरूप ही लिखी जाती है। इस लिपि में कोई भी वर्ण लुप्त नहीं होता अर्थात् प्रत्येक वर्ण का उच्चारण होता है। उच्चारण एवं लेखन में साम्य होने के कारण वर्तनी (स्पेलिंग) की समस्या बहुत कम हो जाती है।

देवनागरी लिपि कलात्मक दृष्टि से सुंदर तो है ही, इसके अक्षरों की व्यवस्थित संयोजना इसकी वैज्ञानिकता की भी पुष्टि करती है। अक्षर माला की ओर नजर डालें तो हमें मालूम पड़ेगा कि इसमें स्वराक्षर और व्यंजनाक्षर का चयन और वर्गीकरण कितने व्यवस्थित रूप से किया गया है। ह्रस्व और दीर्घ स्वर के लिए स्वतंत्र चिह्नों का प्रयोग होता है। इसकी वर्णमाला संपन्न है और भावाभिव्यक्ति के लिए भाषाओं में प्रयुक्त होने लायक है। व्यवस्था क्रम भी नागरी वर्णमाला का काफी अच्छा है। वर्णमाला में पहले स्वर और उनके बाद व्यंजन रखे गए हैं। उच्चारण अव्यवों को ध्यान में रखकर ही अत्यंत वैज्ञानिक ढंग से इस लिपि का निर्माण किया गया है। जिन ध्वनियों का उच्चारण कंठ की सहायता से होता है, वे ध्वनियां—अ, क, ख, ग, घ कण्ठ्य ध्वनियां हैं। जिन ध्वनियों का उच्चारण तालु की सहायता से होता है वे ध्वनियां—इ, च, छ, ज, झ तालव्य ध्वनियां हैं। इसी प्रकार मूर्धा की सहायता से उच्चारित होने वाली ध्वनियां मूर्धन्य और दंत तथा ओष्ठों द्वारा उच्चारित ध्वनियां दंत्य और ओष्ठ्य ध्वनियां हैं। इस व्यवस्था के कारण भाषा को एक रूप से पढ़ा जा सकता है।

नागरी लिपि लेखन की दृष्टि से भी वैज्ञानिक है। यह लिपि बांई से दांई ओर बढ़ने वाले पंक्तियों में भी अंकित होती है। इसके साथ नागरी लिपि की दिशा का दूसरा पक्ष ऊपर से नीचे लिखे जाने वाली क्रमित पंक्तियों में दिखाई देता है। इन द्विविध गतियों के कारण लिखित अंश आंखों के सामने बना रहता है। गणित विषयक लेखन में भी द्विविध गतियां होती है।

नागरी लिपि में जितने वर्ण हैं, लगभग उतने ही लिपि चिह्न हैं। 10 स्वर चिह्न, 33 व्यंजन चिह्न, 1 अनुस्वार, 1 अनुनासिक एवं विसर्ग चिह्न आदि पर्याप्त मात्रा में लिपि चिह्न होने के कारण विभिन्न भाषाओं की ध्वनियों को अंकन करने की क्षमता इस लिपि में है। नागरी लिपि की एक बहुत बड़ी विशेषता यह भी है कि इस लिपि में एक ध्वनि के लिए एक ही लिपि चिह्न है तथा एक लिपि चिह्न से एक ही ध्वनि की अभिव्यक्ति होती है।

देवनागरी तथा भारत की अन्य सभी लिपियां आक्षरिक लिपि हैं। इसमें ध्वनि चिह्न अक्षर को व्यक्त करता है जिसमें प्राय: व्यंजन तथा स्वर मिले होते हैं जैसे : क = क् + अ, प = प् + अ। देवनागरी लिपि के सभी स्वरों का स्वतंत्र उच्चारण संभव है अत: सभी स्वर अक्षर हैं। देवनागरी लिपि के सभी व्यंजनों में "अ" की सत्ता तथा स्वर वर्णों के लिए मात्रा चिह्नों की व्यवस्था एक आदर्श व्यवस्था है। अन्य लिपियों में स्वर तथा व्यंजन को अलग-अलग लिखा जाता है, जैसे रोमन में पि = पिन परन्तु देवनागरी में ऐसा नहीं होता। यह विशेषता अधिक समय और परिश्रम से बचाव करती है। देवनागरी लिपि में "महाभारत" लिखने में पांच वर्ण तथा दो मात्राएं आती हैं। जबकि अंग्रेजी में महाभारत शब्द लिखने पर ग्यारह वर्ण आते हैं।

नागरी में मात्रा प्रयोग के कारण स्थान, समय और परिश्रम की बचत होती है। अनेक दृष्टियों से देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता स्वयंसिद्ध है।

भारत जैसे विशाल राष्ट्र में भावात्मक एकता की दृष्टि से देश की समस्त भाषाओं की एक लिपि करने का स्वप्न लगभग एक शताब्दी से राष्ट्र के महापुरुषों ने देखा था। उस दिशा में काफी प्रयास भी किए गये हैं।

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने जिस प्रकार "स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है" की घोषणा कर राष्ट्र को स्वतंत्रता का मंत्र दिया, उसी प्रकार आपने राष्ट्रलिपि के रूप में नागरी तथा राष्ट्र भाषा के रूप में हिन्दी की घोषणा काशी नागरी प्रचारिणी सभा में सन् 1905 ई. में की थी। लोकमान्य तिलक की यह ऐतिहासिक घोषणा भारतीय कांग्रेस के सन् 1905 बनारस अधिवेशन के अवसर पर की गई थी। तिलक की इस विचारपूर्ण और दूरदर्शी घोषणा के महत्व को समझकर देश के नेताओं ने संविधान सभा में सर्वसम्मति से हिन्दी को राजभाषा के स्थान पर राष्ट्रभाषा और नागरी लिपि को राष्ट्रलिपि स्वीकार किया होता तो आज हिंदी देश की एकता और अखंडता का सक्षम माध्यम बनती। लोकमान्य तिलक की इस घोषणा के ऐतिहासिक महत्व को आज भी समझा जाए तो भाषा और लिपि संबंधी विवाद स्वयंमेव समाप्त हो जाये। देश की राष्ट्रभाषा राष्ट्रलिपि तथा नागरी अक्षरों को राष्ट्रीय स्तर पर ग्रहण करने का लोकमान्य तिलक के निर्णय एवं निर्देश को मान्य कर ही हम भाविक तथा राष्ट्रीय एकता तथा लक्ष्य की सिद्धि कर सकते हैं।

भारत की भाषाओं की आत्मा को पहचानने वाले महापुरुषों में स्वामी दयानन्द सरस्वती, महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक, बालकृष्ण दत्तात्रेय, काका कालेलकर, रांगेय राघव आदि अहिन्दी भाषी होकर भी हिन्दी की लोकप्रियता हेतु काफी प्रयत्नशील रहे। विनोबा जी का उदेश्य था कि एक समान लिपि द्वारा ही भारत की सभी भाषाओं को एक दूसरे के सन्निकट लाया जा सकता है और इसके द्वारा उन प्रादेशिक भाषाओं की संस्कृति, परम्पराओं एवं भावनाओं को बनाए रखते हुए एक दूसरे को समझने में सरलता पैदा की जा सकती है।

गांधी जी ने कहा था कि "हिन्दुस्तान में सर्वमान्य हो सकने वाली, अगर कोई लिपि है तो वह देवनागरी ही है—मुझे विश्वास है कि देवनागरी के द्वारा दक्षिण भाषायें भी आसानी से सीखी जा सकती हैं। ..... देवनागरी में सौंदर्य या सजावट की दृष्टि से लज्जित होने जैसी कोई बात नहीं"।

पूर्व केन्द्रीय मंत्री श्री अर्जुन सिंह के अनुसार भारतीय भाषाओं की अलग-अलग लिपियां अवश्य हैं लेकिन नागरी लिपि अनेक भाषाओं की लिपि का मूलाधार है। नागरी लिपि प्रचार-प्रसार के साथ राष्ट्रीय एकता का प्रश्न जुड़ा हुआ है।

गांधी जी देश की एकता के लिए एक संपर्क भाषा और एक संपर्क लिपि के प्रबल समर्थक थे। सन् 1937 के हरिजन सेवक के 3 अप्रैल के अंक में गांधी जी ने कहा था :

"हम जो राष्ट्रीय एकता हासिल करना चाहते हैं उसकी खातिर देवनागरी को सामान्य लिपि स्वीकार करना आवश्यक है। इसमें कोई कठिनाई नहीं है।"

आजादी की लड़ाई केवल सत्ता परिवर्तन के लिए ही नहीं लड़ी गई थी। स्वतंत्रता सेनानियों की स्पष्ट कल्पना थी कि देश का कामकाज भारतीय भाषाओं में चले। भारत की भाषाएं समृद्ध हों। भारत के लोग साथ-साथ बोलें। मन एक हों, ज्ञान एक हो, विचार एक हों, अंत:करण समान हो। अत: पं. जवाहरलाल नेहरू मानते थे :

"भारत की सभी भाषाओं के लिए एक लिपि अपनाना वांछनीय है। इतना ही नहीं यह सभी भारतीय भाषाओं को जोड़ने वाली एक मजबूत कड़ी का काम करेगी और इसी वजह से देश के एकीकरण में मददगार साबित होगी। भारत की भाषाई स्थिति में यह जगह केवल देवनागरी ही ले सकती है।"

पूरे देश के लिए एक सामान्य लिपि अपनाने की आवश्यकता पर महापुरुषों तथा विद्वानों ने काफी बल दिया है। स्वतंत्रता के उपरांत भारतीय संविधान में यह प्रावधान किया गया कि "देवनागरी लिपि में लिखित हिंदी संघ की राजभाषा होगी। इसके बाद से ही नागरी लिपि का महत्व और भी अधिक बढ़ गया। भारत की सभी भाषाएं यदि देवनागरी लिपि में भी लिखी जाने लगे तो यह एक संपर्क लिपि भी बन सकती है और यही एक वह लिपि है जो भारतीय भाषाओं को एक सूत्र में पिरो सकती है। यदि भावात्मक एकता की आवश्यकता है तो एक जोड़ लिपि के रूप में नागरी लिपि की आवश्यकता की ओर से आंखे नहीं मूंदी जा सकती।"

देश की पत्र-पत्रिकाओं ने, नेताओं और विद्वानों ने देवनागरी लिपि के संबंध में अपने अपने विचार व्यक्त कर इस लिपि के प्रचार-प्रसार व अपनाने पर अधिक बल दिया है। अब उसमें सरकार का भी पर्याप्त अंशों में कार्य-व्यवहार होने लगा है और नागरी प्रचार के इच्छुक देश के प्रबुद्ध वर्ग के सहयोग से देवनागरी लिपि सर्वत्र भारत में लिखी पढ़ी और समझी जाने लगी है। कहीं कहीं देवनागरी समझने वालों का प्रतिशत थोड़ा कम अवश्य है पर उसके प्रचार को नकारा नहीं जा सकता है। आज इस गति को बनाये रखने और बढ़ाने की आवश्यकता है।

आज विज्ञान के इस युग में कम्प्यूटर के आगमन से विश्व में नया क्रांतिकारी परिवर्तन आया है। प्राय: प्रत्येक क्षेत्र में कम्प्यूटर का-पर्याप्त प्रयोग प्रगतिशील राष्ट्रों द्वारा किया जा रहा है। भाषा के क्षेत्र में भी कम्प्यूटर का सहयोग अत्यंत महत्वपूर्ण साबित हुआ है। कम्प्यूटर पर किये गये वर्तमान संशोधन से यह साबित हुआ है कि संस्कृत और हिंदी भाषा जो नागरी लिपि में लिखी जाती है, वह कम्प्यूटर प्रणाली पर पूर्णत: वैज्ञानिक और समुचित है।

देवनागरी लिपि को कम्प्यूटर पर स्थापित करने के लिए सन् 1965 से ही प्रयास शुरू हो गये थे। वैज्ञानिकों के अथक प्रयासों के बाद 1971-72 में एक बहुत सरल कुंजीपटल और उसकी प्रणाली तैयार करने में सफलता प्राप्त हुई। सभी भारतीय भाषाओं में प्रयुक्त हो सकने वाला पहला "फोटो टाइप टर्मिनल" वर्ष 1978 में तैयार किया गया। इस टर्मिनल पर शोध प्रबंध "कम्प्यूटर पर आधारित सूचना प्रणालियों के भाषाई प्रभाव" का पठन इलैक्ट्रॉनिक आयोग द्वारा संगोष्ठी में किया गया। कम्प्यूटर पर नागरी लिपि में कार्य सुचारू रूप से लागू करने के लिए सरकारी तथा निजी कंपनियां कार्यरत हैं।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में तेजी से हो रहे विकास के परिप्रेक्ष्य में यह भी जरूरी हो जाता है कि राजभाषा हिंदी दिन-प्रतिदिन होने वाले परिवर्तनों के साथ कदम से कदम मिलाकर चलें। कुछ लोगों का कहना है कि देवनागरी लिपि टंकण की दृष्टि से सुविधाजनक नहीं, अत: इसमें सुधार करने की आवश्यकता है। लेकिन टंकण के लिए लिपि में सुधार करने के बजाय टंकण मशीनों में सुधार करने की आवश्यकता पर बल देने की जरूरत है। जब चीनी तथा जापानी लिपियों के लिए तीन सौ संकेतों वाली टंकण मशीनें बनाई जा चुकी हैं तब देवनागरी लिपि में ऐसी टंकण मशीन क्यों नहीं बन सकती जिसमें और अधिक वर्णों का प्रावधान हो।

राजभाषा विभाग द्वारा समय-समय पर यह निर्देश जारी किए गए हैं कि भारत सरकार के मंत्रालयों/विभागों/कार्यालयों में जो यांत्रिक उपकरण उपलब्ध हैं उनमें रोमन के साथ-साथ देवनागरी लिपि की सुविधा भी अवश्य प्राप्त होनी चाहिए। परिणामत: विभिन्न मंत्रालयों/विभागों में उपलब्ध अधिकांश यांत्रिक उपकरणों में रोमन के साथ-साथ देवनागरी लिपि की सुविधा भी उपलब्ध है।

नागरी लिपि का प्रयोग आज कम्प्यूटर, रेडियो पेजर, इंटरनेट आदि आधुनिक इलैक्ट्रॉनिक माध्यम द्वारा शुरू हो गया है तथा इंटरनेट के विश्वव्यापी प्रसार के कारण नागरी लिपि में मुद्रित साहित्य विश्व के कोने-कोने तक पहुंच रहा है। स्व. विनोबा भावे जी ने नागरी लिपि प्रसार के लिए सार्थक आंदोलन चलाया। उनके इस आंदोलन को आधुनिक विश्व में इलैक्ट्रॉनिक माध्यमों द्वारा सफल बनाया जा सकता है।

आज हम जबकि इस इलैक्ट्रॉनिक व संचार माध्यमों के अनुपम दौर से गुजर रहे हैं तो हमारे भाषाई प्रान्त भाषाई संकीर्णता के कारण दूसरे के भावात्मक संपर्क से दूर-दूर हो रहे हैं। भाषाई संकीर्णता एक प्रकार का पिछड़ापन है। विकास और पिछड़ेपन को जोड़ने वाली कड़ी है एक सह-भाषा और सह लिपि और इसमें संदेह नहीं कि भारतीय संस्कृति के आदान-प्रदान में भाषाओं और लिपियों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है। नागरी की उपादेयता पर विद्वानों, समाज सेवकों, राजनेताओं और भाषा-विदों द्वारा अनेक बार विचार किया गया है। सब लोग एकमत हैं, और विनोबा जी द्वारा सुझाए गए मार्ग का देश की स्वतंत्रता और एकता के लिए उदार रूप से अनुकरण करना चाहिए। आधुनिक काल के सभी लिपि विशेषज्ञ एवं भाषा विशारद विद्वान इस निर्णय पर पहुंच गये हैं कि देवनागरी लिपि ही हमारी स्वदेशी लिपियों में एकमात्र ऐसी लिपि है, जिसे सारे देश के निवासी कम प्रयत्न से सीख सकते हैं। नागरी के स्वर और व्यंजन प्राय: संपूर्ण हैं और आज भारत की सभी दिशाओं में प्रचलित अन्य लिपियों ने भी नागरी अक्षरों के स्वर व्यंजन क्रम को अपनाया है। संस्कृत भाषा की लिपि होने के कारण नागरी लिपि को व्यवहारिक रूप से अधिक व्यापकता प्राप्त हो गयी है।

आजकल देवनागरी का प्रयोग दिनों दिन कम करके रोमन लिपि को स्थापित करने का षड्यंत्र इतना गहराता जा रहा है कि छोटे-छोटे कस्बों और गांवों तक में अंग्रेजी भाषा के माध्यम वाले स्कूल खुलते जा रहे हैं। देवनागरी का ज्ञान रखने वाले हिन्दी भाषी लोग भी अपने परिचय पत्रों, निमंत्रण पत्रों आदि में रोमन लिपि के प्रयोग को ही अधिक महत्व दे रहे हैं। आश्चर्य का विषय यह है कि हिन्दी भाषा के नाम आदि भी रोमन लिपि में ही लिखे मिलते हैं। नगरों, महानगरों में तो दुकानों, दफ्तरों और मार्गों पर लगे विज्ञापनों तक के नाम-पट्ट रोमन लिपि में दिखाई देते हैं। लोग हिन्दी जानते हुए भी अंग्रेजी भाषा के प्रयोग में गर्व का अनुभव करते हैं। क्या इसे उचित कहा जा सकता है?

रोमन लिपि के बढ़ते प्रयोग के पक्ष में प्राय: एक तर्क यह दिया जाता है कि उसमें अक्षर संख्या कम है तथा शब्द सरलता और शीघ्रता से लिखे जाते हैं जो एक हास्यापद तर्क है। देवनागरी लिपि में अक्षरों या ध्वनियों की संख्या अधिक है किन्तु ध्यान देने की बात यह है कि सभी अक्षर एक ही रूपमाला में लिखे जाते हैं जबकि रोमन लिपि के अक्षर कम अवश्य हैं किन्तु वे चार प्रकार के हैं। छपाई के बड़े व छोटे अक्षर तथा लिखने के बड़े व छोटे अक्षर, जिससे कुल अक्षर रूप देवनागरी के अक्षरों से अधिक ही बैठते हैं। अत: रोमन लिपि की वर्णमाला देवनागरी की वर्णमाला की तुलना में अधिक कष्ट साध्य है। रोमन लिपि का गुणगान करने वालों को यह समझ लेना चाहिए कि देवनागरी के सामने रोमन लिपि किसी भी दृष्टि से टिक नहीं सकती। देवनागरी की वर्णमाला उच्चारण के वैज्ञानिक आधार पर चलती है और उसमें मात्राओं का भी ध्वनि क्रम नियमापेक्षी होता है, जब कि रोमन लिपि की वर्णमाला में उच्चारण की वैज्ञानिकता एवं मात्रादि के क्रमादि का कोई विशेष नियम नहीं है। अत: जहां देवनागरी पढ़ने लिखने में अत्यंत सरल लिपि है, वहीं रोमन ऐसी लिपि है जिसे सही उच्चारित नहीं किया जा सकता। आचार्य विनोबा भावे जी ने भी एक बार कहा था: "मैंने भारत की बहुत सी भाषाएं सीखी हैं। अंग्रेजी भी जानता हूं परन्तु केवल अंग्रेजी भाषा सीखने में जितना श्रम करना पड़ता है उतने श्रम में भारत की सब भाषाएं सीखी जा सकती हैं, ऐसा मेरा अनुभव है"।

रोमन लिपि में ह्रस्व और दीर्घ स्वर का भेद नहीं होता जिसके कारण उच्चारण में शुद्धता की कठिनाई होती है जैसे—तल (तला) = तल, ताल, ताला आदि का भ्रम होता है।

नागरी लिपि में उच्चारण और लेखन में तादात्मय एवं समानता है, जबकि रोमन में यह गुण नहीं है। रोमन लिपि में लिखा कमला को कमल, कमाल, कामला, कमाला, कामाल, कामाला आदि रूपों में पढ़ा जा सकता है।

प्रतिदिन के कामों में अनेक ऐसे उदाहरण मिलते हैं जिनसे देवनागरी लिपि की उपयोगिता रोमन लिपि की अपेक्षा अधिक वैज्ञानिक स्वयंसिद्ध होती है। रोमन लिपि में ड़ व ड के लिए "डी" अक्षर ही प्रयोग होता है जैसे दिल्ली से लगभग 35 कि. मी. दूर एक गांव का नाम "बड़खालसा" रोमन लिपि में "बैडखालसा" ही पढ़ा जाएगा। रोमन लिपि में लिखा "कला मंदिर" को "कोई काला मंदिर" पढ़े तो यह कोई विचित्र बात न होगी। रोमन लिपि में "त" तथा "ट" इन दोनों के लिए एक ही अक्षर होने के कारण पंजाब में स्थित "तरनतारन" नगर को रोमन लिपि में लिखने पर विदेश का व्यक्ति आसानी से यह नहीं पढ़ सकता कि यह नगर टारनतड़न है या टारान टरान अथवा टारन टारन। ऊपर के उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय भाषाओं के लिए रोमन लिपि को अपनाना व्यर्थ है।

हमें अपनी लिपि देवनागरी का प्रयोग करने में गर्व का अनुभव होना चाहिए। देवनागरी लिपि में भी भारत की भाषाएं लिखी जाने लगें तो उत्तर में रहने वाला दक्षिण में जाने पर देवनागरी के ज्ञान के कारण कम से कम नाम आदि तो पढ़ ही सकेगा। सड़कों, स्टेशनों, बसों और ऐसे ही आम स्थानों के नाम किसी भी भाषा के हों, अगर उन्हें देवनागरी में भी लिखा जाने लगे तो किसी भी भारतीय को कोई कठिनाई नहीं होगी। नागरी लिपि केवल हिन्दी की ही लिपि नहीं अपितु अन्य भारतीय भाषाओं में से कुछ भाषाएं भी देवनागरी लिपि में लिखी जाती हैं। नागरी लिपि को भारतीय भाषाओं के समन्वय के काम में लाने का उपदेश कई नेताओं ने दिया जिनमें से कई तो अहिन्दी भाषी क्षेत्रों के भी हैं।

आज भारत ही नहीं विदेशी विद्वानों ने भी इसकी मुक्तकंठ से प्रशंसा की है। आधुनिक युग में आशुलिपि के आविष्कारक आइजक पिटमैन ने देवनागरी के संबंध में कहा है कि—"संसार की कोई लिपि यदि सर्वाधिक पूर्ण है तो वह एक मात्र देवनागरी लिपि है"।

डाक्टर आइजैक टैलर ने नागरी के समान सुंदर, सबल और सटीक वर्णमाला किसी अन्य वर्णमाला की नहीं देखी। उनके अनुसार वैज्ञानिकता तो इसमें कूट-कूट कर भरी है। और भूल तो कभी इसमें हो ही नहीं सकती।

राष्ट्रीय आचार्य विनोबा भावे ने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि "देवनागरी को सारे भारत में चलाने का पहला उद्देश्य है कि इससे दक्षिण भारत के सभी प्रदेश एक हों, दूसरा उद्देश्य सारा उत्तरी भारत एक हो, तीसरा दक्षिण और उत्तर भारत एक हो, चौथा भारत और एशिया एक हो जाये और पांचवां भारत और विश्व एक हो जायें और उसमें विश्व नागरी और विश्व रोमन दोनों चलें।"

आचार्य विनोबा भावे जी की इच्छा थी कि देवनागरी लिपि की ध्वन्यानुसारी लेखन की विशेषता को देखते हुए इसे विश्वनागरी के रूप में स्वीकार किया जा सकता है और भारत इस दिशा में पहल कर सकता है। नेपाल में भी देवनागरी राजलिपि के रूप में पहले ही मान्य है। इसके अतिरिक्त जिन-जिन देशों में अप्रवासी भारतीय और भारत मूल के लोग रह रहे हैं उनमें भी देवनागरी लिपि हिन्दी के साथ-साथ प्रचलन में है। विश्व में चीनी भाषा के बाद हिन्दी भाषियों का दूसरा स्थान है और हिन्दी भाषा भाषी लोगों की संख्या विश्व में काफी अधिक है। इससे विश्व लिपि के रूप में देवनागरी के प्रयोग की संभावनाएं उभर कर सामने आती हैं। आवश्यकता इसके प्रयोग और चलन को बढ़ाने और प्रश्रय देने की है।

आज आवश्यकता इस बात की है हम कथनी और करनी का भेद किये बिना पूरी ईमानदारी, श्रद्धा और इच्छापूर्वक देवनागरी लिपि को अपनाएं और अपनी राष्ट्रभाषा भी बिना किसी भेदभाव के सीखने की कोशिश करें। विशेषकर अहिंदी भाषी अपनी क्षेत्रीय भाषा को देवनागरी में भी लिखें तथा हिंदी को अंग्रेजी भाषा से अधिक महत्व दें। हिंदी भारतवर्ष की राष्ट्रभाषा है। संकुचित प्रांतीयता और स्थानीय भाषाओं की भक्ति के कारण इसमें अवरोध उपस्थित नहीं किया जाना चाहिए। दक्षिण और अन्य अहिंदी भाषी राज्य अपनी क्षेत्रीय भाषा के साथ अंग्रेजी को तो अपना सकते हैं लेकिन हिंदी को नहीं क्योंकि उन्हें हिंदी सीखने में भी परिश्रम करना पड़ता है और अंग्रेजी सीखने में भी। क्योंकि अंग्रेजी सीखने पर उनके लिए रोजगार के अवसर अधिक खुल जाते हैं इसलिए वे अंग्रेजी को अधिक महत्व देंगे ही। यदि सरकार द्वारा सभी नौकरियों में अंग्रेजी की अनिवार्यता समाप्त कर दी जाए तो लोगों का अंग्रेजी के प्रति मोह कम हो सकता है। विकल्प के तौर पर हिंदी जानने वालों के लिए तो कम से कम अंग्रेजी की अनिवार्यता नहीं होनी चाहिए।

हिंदी भाषी क्षेत्रों में देखें जहां प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर पर शिक्षा का माध्यम हिंदी ही है। परन्तु उच्च शिक्षा तथा शोध के स्तर पर अभी देवनागरी हिंदी का प्रयोग अपेक्षित है। भारत के अनेक विश्वविद्यालयों में उच्च शिक्षा तथा शोध शिक्षा के क्षेत्र में रोमन लिपिबद्ध अंग्रेजी में प्रयोग होता है। चिकित्सा, अभियांत्रिकी, विधि, न्याय, प्रौद्योगिकी तथा अंतरिक्ष विज्ञान आदि क्षेत्रों में अभी देवनागरी का प्रयोग न के बराबर हो रहा है। जब हिंदी इन सभी प्रयोजनों को पूरा करने में सक्षम है, तो इन क्षेत्रों में देवनागरी का प्रयोग क्यों नहीं किया जाता?

हिंदी के बारे में आचार्य विनोबा भावे ने कहा था कि "मैं दुनिया की सब भाषाओं की इज्जत करता हूं, परन्तु मेरे देश में हिंदी की इज्जत न हो वह मैं सह नहीं सकता।"

देवनागरी लिपि को अपनाने का मतलब अन्य भारतीय भाषाओं की उपेक्षा करना नहीं है, बल्कि उपयोगिता को दृष्टि में रखते हुए एक सामान्य

भारतीय लिपि के रूप में उनकी स्वीकृति मात्र है। इसमें सभी देशवासियों को लाभ होगा, और राष्ट्रीय भावात्मक एकता सुलभ हो जाएगी। तात्पर्य यह है कि लिपि की वैज्ञानिकता, संपूर्णता, कलात्मकता, राष्ट्रीयता दृष्टि से नागरी लिपि को एक राष्ट्रीय लिपि के रूप में स्वीकार कर लेना चाहिए।

प्राचीन काल से ही समस्त भारत को जोड़ने वाली लिपि देवनागरी लिपि रही है। प्राचीन संस्कृत की लिपि होने के नाते देवनागरी इस देश की विशाल सांस्कृतिक परंपरा को स्वीकार करती दिखाई पड़ती है। पाली, प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं ने भी देवनागरी को अपनाया था और अनेक साहित्यिक रचनाओं को लिपिबद्ध कर दिया था। भारत की सब से प्राचीन भाषा संस्कृत से लेकर हिंदी, मराठी, कोंकणी, डोगरी, नेपाली तथा सिक्किम भाषाएं भी आज देवनागरी में लिखी जाती हैं। बंगला, गुजराती, उड़िया, असमी आदि भाषाओं ने थोड़े समय से परिवर्तन के साथ नागरी को स्वीकार किया है। इस प्रकार भारत की सर्वप्रमुख भाषा लिपि के रूप में देवनागरी का स्थान सर्वोपरि है।

हमारे लेखकों, कवियों और विद्वानों ने भी देवनागरी लिपि के लिए उसकी सफलता एवं प्रयोग में बढ़ाने हेतु काफी प्रयास किये हैं तथा अनेक भारतीय विभूतियों ने भी समय-समय पर इसके विकास में अपूर्व सहयोग दिया है। स्व. श्री मैथिली शरण गुप्त ने लिखा है कि :—

है एक लिपि विस्तार होना योग्य हिन्दुस्तान में,

अब आ गई है यह सभी विद्वज्जनों के ध्यान में।

है किन्तु इसके योग्य उत्तम कौन लिपि गुण आगरी?

इस प्रश्न का उत्तर यथोचित है उजागर "नागरी"।

जैसा लिखो वैसा पढ़ो कुछ भूल हो सकती नहीं।

है अर्थ का न अनर्थ इसमें एक बार हुआ कहीं।

इस भांति होकर शुद्ध अति सरल और सुबोध है?

क्या उचित फिर इसका कभी अवरोध और विरोध है?

नागरी लिपि जितनी प्राचीन भाषाओं के लिए प्रासंगिक थी, उतनी आधुनिक भारतीय भाषाओं के लिए भी प्रासंगिक है, यह तथ्य निर्विवाद है। सभी राज्यों में इसके समुचित उपयोग और विकास के लिए पहल जरूरी है। सभी भारतवासी अंग्रेजी-लिपि का अनावश्यक मोह छोड़ कर रोज-मर्रा के कार्य और व्यवहार में अपनी-अपनी प्रान्तीय लिपि के साथ-साथ देवनागरी लिपि के प्रयोग करने की आदत अभी से डालनी शुरू कर दें तो यह भारत की राष्ट्रीय एकता के लिए अत्यंत स्रोत बनेगा और इससे सभी भारतवासियों को लाभ पहुंचेगा।

भारत की प्रायः सभी लिपियों ने भारत की अमूल्य सांस्कृतिक धरोहर को जीवित रखा, किन्तु अंग्रेजी और रोमन लिपि आने के कारण भाषाई दृष्टि से इसमें कुछ कमियां आ गई हैं। जिन शब्दों का उच्चारण हमारे प्राचीन वाङ्मय में एक जैसा मिलता है, वह अंग्रेजी और रोमन लिपि के कारण विकृत हो गया है। उच्चारण में इस दोष का कारण रोमन लिपि ही है क्योंकि इस विदेशी लिपि में भारतीय भाषाओं के शब्दों को ठीक ढंग से उच्चारित करने की क्षमता नहीं है। आज देश के विभिन्न नगरों, कस्बों और गांवों के नामों के साथ-साथ राज्यों तक के नाम गलत ढंग से लिखे और पढ़े जा रहे हैं। अतः हमें रोमन लिपि के प्रयोग को नकारना होगा। ऐतिहासिक परंपरा और भावात्मक स्तर पर रोमन लिपि का प्रयोग ठीक नहीं, इसलिए राज्यों में क्षेत्रीय भाषाओं के लिए देवनागरी का प्रयोग बढ़ाना चाहिए।

मानवीय दृष्टि से यदि लिपिगत भेद की दीवार को विश्व के भेदकारक तत्वों में से हटा दिया जाये तो भाषाई समन्वय की साधना संभव है। इस दिशा में नागरी की बहुआयामी भूमिका निश्चय ही अद्वितीय सिद्ध हो सकती है। भाषा, मानव के समन्वय का सशक्त माध्यम है तो उसकी लिपि (लिखित रूप) देश-काल के बंधन को तोड़ने की दृष्टि से और अधिक समन्वयकारी सिद्ध हो सकती है। अपनी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, सांस्कृतिक धरोहर, वैज्ञानिकता और सरलता के कारण देवनागरी लिपि द्वारा यह कार्य सहज ही संभव है।

आज हमारे देश में नागरी लिपि में हिन्दी ही नहीं अपितु अन्य प्रादेशिक भाषाओं का मौलिक साहित्य काफी मात्रा में पढ़ने के लिए उपलब्ध है। इसका प्रसार बढ़ता ही जा रहा है। इसे और भी अधिक से अधिक प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है। यह सर्वविदित है कि देवनागरी लिपि सभी भारतीय भाषाओं के बीच संपर्क लिपि के रूप में भाषाओं को निकट लाने की क्षमता रखती है। इस लिपि का अधिक से अधिक प्रयोग एवं प्रचार-प्रसार करना राष्ट्रीय हितों के लिए अत्यंत लाभकारी होगा।

"भारत की सभी भाषाएं नागरी लिपि में लिखी जाएं"।

—आचार्य विनोबा भावे

<<<<>>>>

डी-1 ए/115, जनकपुरी, पंखा रोड, नई दिल्ली-110058

शब्दों के बदलते हुए अर्थ

—विजय सिंह चौहान

भाषा एक निरंतर प्रवाहमान वस्तु है, परिस्थितियों, संदर्भों, संस्कृति और बदलती हुई भौगोलिक स्थितियों के समानान्तर भाषा में भी निरंतर परिवर्तन होता रहता है। यह परिवर्तन कई रूपों में देखने में आता है। कहीं तो शब्दों के मूल अर्थ में विस्तार हो जाता है, तो कहीं संकोच। कहीं तो उसका वह अर्थ ही नहीं रह जाता, जो आरंभ में उसका अर्थ था क्योंकि शब्द और अर्थ का संबंध कोई नित्य या शाश्वत संबंध नहीं है। अत: हम कह सकते हैं कि समय के बदलाव ने शब्दों के अर्थ में तेजी से बदलाव लाया है। जैसे—संस्कृत युग में जंघा घुटने और टखने के बीच के भाग को कहते थे जबकि आज उसका प्रयोग कूल्हे और घुटने के बीच के भाग के लिए किया जाता है। अत: हम कह सकते हैं कि शब्दों के अर्थ परिवर्तन में कई लाक्षणिक प्रयोग के साथ ही भौगोलिक, सामाजिक तथा भौतिक परिवेश भी मुख्य जिम्मेदार हैं।

पुराने जमाने में लोग अपने बच्चों के नाम भगवान या देवी-देवताओं के नाम से रखना गर्व की बात समझते थे, जैसे—राम, बलराम, कृष्ण, रामकृष्ण, सीता, सीता-राम आदि। किन्तु, आजकल इसका प्रचलन खत्म होता जा रहा है। आज लोग अपने बच्चों के नाम चिंटू, पिंटू, किट्टी, डब्बू, डिम्पी, चम्पू, गप्पू आदि रखने लगे हैं। उल्लेखनीय है कि जो राजा महाराजा कुकृत्य के लिये प्रसिद्ध रहे हैं, उनके नाम से कोई व्यक्ति अपने बच्चों के नाम नहीं रखते हैं, जैसे—रावण, कंस, मंथरा, कैकयी, सूर्पणखा आदि। इसी प्रकार नारद, विभीषण और जयचंद ये नाम पौराणिक ऐतिहासिक विशेष व्यक्तियों के हैं। लेकिन, कलह कराने वाले, घर के भेदिया और गद्दार मात्र के सामान्य अर्थ में प्रचलित हैं। कई लोग अपने उपनाम भी ऐसे हास्यास्पद शब्द से रख लेते हैं जिससे स्वाभाविक रूप से हंसी आने लगती है, जैसे—हाथी, घोड़े, सामर, सिंह, हिरण, नाग, बम, धाकड़ आदि।

आजकल कई ऐसे शब्द भी प्रचलन में हैं जिनका वास्तविक अर्थ तो कुछ और ही है किन्तु वे सम्मानपूर्वक स्त्री व पुरूषों के नामों के आगे तथा पीछे लगकर नामों की शोभा बढ़ा रहे हैं, जैसे—"श्री" शब्द का अर्थ होता है, लक्ष्मी, सरस्वती, कीर्ति, शुभ, सुंदर तथा श्रेष्ठ। "श्री" अकसर पुरूषों के नाम के आगे ही लगकर आता है, जैसे—श्रीराम, श्रीकृष्ण आदि। किन्तु, आजकल "श्री" महिलाओं के नामों के आगे तथा पीछे दोनों ओर लगकर आने लगा है, जैसे— श्रीदेवी, राजश्री, भाग्यश्री आदि। इसी प्रकार "श्रीमान्" का शाब्दिक अर्थ होता है शोभा से युक्त या गौरव वाला तथा पति के लिये प्रयुक्त होता है किन्तु आजकल पुरूषों के नाम के पूर्व जोड़ा जाने वाला आदरसूचक शब्द रह गया है, जैसे—श्रीमान् रामलाल जी। यदि "सुश्री" शब्द की व्याख्या की जाये तो उसका शाब्दिक अर्थ होता है बहुत सुंदर किन्तु आजकल अविवाहित स्त्रियों के नाम के पहले लगने वाला आदरसूचक और शिष्टतापूर्ण संबोधन सुश्री है, जैसे—सुश्री रेखा शर्मा। "जी" नाम तथा पदवी के आगे लगने वाला आदरसूचक शब्द है, जो अव्यय की तरह प्रयुक्त होता है, जैसे—रामजी, प्रेमचन्द्र जी, अच्छा गुरूजी, आया पिताजी आदि। बड़ों के प्रति स्वीकृति-अस्वीकृति और संबोधन के लिए भी "जी" का प्रयोग होता है, जैसे—जी हां, हां जी, जी नहीं, नहीं जी। पति-पत्नी आपस में "जी सुनिये", "जी आया", "जी आई" कहते हुए सुने जाते हैं। कभी-कभी अजी, एजी आदि शब्दों का प्रयोग भी होता है। वैसे "जी" का प्रयोग जान, जीव तथा मन, चित्त व तबीयत के लिए भी होता है।

आज कई शब्द ऐसे प्रचलन में आ गये हैं जो पूर्व में सम्मानसूचक थे किन्तु आजकल उन शब्दों के अर्थ में परिवर्तन आ गया है। "बाबू" शब्द कार्यालयों में काम करने वाले व्यक्तियों के लिए सम्मानसूचक होता था। पहले अंग्रेजी पढ़े-लिखे फैशन परस्त व्यक्तियों को अंग्रेजों द्वारा दी गई पदवी को माना जाता था। किन्तु, अब साधारण सम्मानसूचक एवं हीनता की भावना पैदा करने वाला शब्द रह गया है। इसी प्रकार "बाबा" शब्द पितामह, दादा या वृद्ध पुरूषों के लिए आदरसूचक संबोधन है। साधु-महात्माओं के लिए भी यह शब्द प्रयुक्त होता था। आज भी "बाबा" शब्द बच्चों को डराने-धमकाने के काम में आ रहा है, जैसे—चुप हो जा नहीं तो बाबा आ जायेगा। किन्तु, आजकल छोटे बच्चों को भी स्नेहपूर्वक "बाबा" कहकर पुकारा जाने लगा है।

"मास्टर" शब्द सर्कसों में जानवरों को कंट्रोल करने के लिए रिंग मास्टर का प्रयोग किया जाता है। किसी उस्ताद या बच्चों को भी संबोधन करने के लिए "मास्टर" शब्द का प्रयोग किया जाता है किन्तु "मास्टर" शब्द आजकल बहुत ही हल्का-फुल्का हो गया है जो स्कूल के शिक्षक या अध्यापक के लिये प्रयुक्त होने लगा है। इसी प्रकार "मास्टरी" शब्द किसी कला या गुण आदि में निष्णांत होने के भाव को प्रकट करने के लिए प्रयुक्त किया जाता था किन्तु आजकल यदि आप किसी व्यक्ति से पूछें कि आप क्या कर रहे हैं ? यदि वह कहता है कि मास्टरी कर रहा हूं तो सामने वाला व्यक्ति हीन भावना महसूस करने लगता है।

इसी प्रकार "लाला" शब्द को ही लें। "लाला" आदरसूचक संबोधन है, जैसे—लाला लाजपत राय, लाला साहब आदि। इसी प्रकार कायस्त, स्त्री आदि जातियों का भी सम्मानसूचक शब्द है। कहीं-कहीं भाभी अपने देवरों को भी लाला कहकर संबोधित करती है। किन्तु, आजकल छोटे तथा प्रिय व्यक्तियों को भी "लाला" कहकर संबोधित किया जाने लगा है।

"दादा" शब्द बड़े भाई या बड़े-बूढ़ों के लिए आदरसूचक शब्द है किन्तु आजकल "दादा" शब्द गुण्डों के सरदार या गुण्डा गर्दी करने वाले लोगों के लिए प्रयुक्त होने लगा है। इसी प्रकार "उस्ताद" शब्द गुरू, शिक्षक या किसी कार्य में विज्ञ या प्रवीण व्यक्ति के लिए प्रयुक्त होता था किन्तु आजकल चालाक लोगों के लिए प्रयुक्त होने लगा है। यदि कोई व्यक्ति किसी से छल-कपट या चालाकी करता है तो कई व्यक्तियों को आपने यह कहते हुए सुना होगा कि हमसे ही उस्तादी कर रहे हो? "गुरू" शब्द पूज्य, शिक्षक, बुजुर्ग या किसी कला को सिखाने वाले उस्ताद के लिए प्रयुक्त होता है किन्तु आजकल होशियार या चालाक व धूर्त व्यक्तियों के लिए प्रयुक्त होने लगा है, जैसे—वह तो मेरा भी गुरू निकला।

पूर्व में समाज में कई नाम जैसे—पटेल, सेठ, ठाकुर, धाकड़ आदि चला करते थे जिनका सम्मानसूचक अर्थ होता था किन्तु आजकल इन शब्दों के अर्थ भी हल्के-फुल्के हो गये हैं, जैसे—"पटेल" शब्द गांव का चौधरी, मुखिया या गांव के नम्बरदार को कहते हैं किन्तु आजकल गांव के सीधे-सादे पगड़ीधारी व्यक्ति को भी "पटेल" कहकर संबोधित किया जाने लगा है। "सेठ" शब्द महाजन या धनी व्यक्तियों के लिए प्रयुक्त होता था किन्तु आजकल "सेठ" बहुत ही साधारण हो गया है। थोड़े से सम्पन्न व्यक्ति को भी "सेठ" कहकर संबोधित किया जाने लगा है। इसी प्रकार "ठाकुर" शब्द क्षत्रियों की उपाधि या नाइयों के लिए एक संबोधन है, जैसे—आओ भाई नाऊ ठाकुर। किसी भूखण्ड स्वामी या पूज्य व्यक्ति या स्वामी के लिए भी प्रयुक्त होता है किन्तु आजकल व्यंग्यात्मक रूप से प्रयुक्त हो रहा है—कहो ठाकुर क्या हालचाल है? या आओ ठाकुर।

"धाकड़" शब्द प्रसिद्ध या ख्याति प्राप्त करने वाले व्यक्ति या हृष्ट-पुष्ट तगड़े व्यक्ति के लिए ही प्रयुक्त होता था किन्तु आजकल जिसने रोब जमा रखा हो उसके लिए प्रयुक्त होने लगा है। इसी तरह चौधरी का तात्पर्य प्रधान, मुखिया या अगुआ है किन्तु आजकल जाटों, कुर्मियों के लिए ही प्रयुक्त हो रहा है। "गब्बर" शब्द अभिमानी, घमण्डी, हठी, अड़ियल या मालदार धनी व्यक्ति के लिए प्रयुक्त होता है किन्तु आजकल "गब्बर" बच्चों को डराने के काम में आ रहा है, जैसे—चुप हो जा नहीं तो गब्बर आ जायेगा।

नेता और सरदार शब्दों का अर्थ अब भी नेता और सरदार ही है किन्तु इनके अर्थों में जो गिरावट आई है वह स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है। नेता शब्द के अर्थ में गांधी, जवाहर लाल नेहरू और नेताजी के समय की गरिमा या उत्कृष्टता अब नहीं है। इसी प्रकार सरदार भगतसिंह और सरदार पटेल के समय सरदार शब्द के अर्थ में जो ऊंचाई थी वह अब उसमें कहां है? यही स्थिति हिन्दी में ब्रह्मचारी, बहिनजी, महंत, पूज्य, मंदिर, मठ, मठाधीश, भक्ति, प्रेम, कविता, कवि-सम्मेलन, विद्यार्थी, सभा, जुलूस आदि शब्दों की भी हुई है।

आज कई शब्द ऐसे प्रचलन में आ गये हैं जिनकी उत्पत्ति किसी दूसरे शब्द से हुई है, जैसे—रुपया शब्द रूपा से बना है। रूपा का अर्थ होता है चांदी। पुराने जमाने में दिल्ली के बादशाह शेरशाह सूरी ने चांदी के सिक्के चलाये थे। चांदी के सिक्कों को ही रुपया कहा जाता था किन्तु आजकल कागज या धातु के बने सिक्के भी रुपया कहलाते हैं। इसी प्रकार बीड़ी (जो सिगरेट के समान होती है) बीड़ा से बनी है। पुराने जमाने में पान में कुछ रखकर उसे घड़ी कर बांधने के काम को बीड़ा बांधना कहते थे। उसी प्रकार बीड़ी को भी गोल कर बांधा जाने लगा, इसलिए इसे बीड़ी कहा जाने लगा।

इसी प्रकार गिलास जो कांच का होता है अंग्रेजी के ग्लास (GLASS) से बना है जिससे पानी पिया जाता है। किन्तु, आजकल गिलास किसी भी धातु से बना हो जैसे—चांदी, ताम्बा, स्टील आदि "गिलास" ही कहलाता है। अब आप "बोतल" शब्द को ही लें। यह शब्द अंग्रेजी के बोतल (BOTTLE) से बना है। "बोतल" का शाब्दिक अर्थ कांच की बनी लम्बी गर्दन वाली शीशी। बोतल भले ही किसी दवा की हो या तेल की किन्तु बोतल का अर्थ आजकल दारू या शराब की बोतल से ही लगाया जाने लगा है।

अंग्रेजी के "टैंक" शब्द का अर्थ होता है तालाब, हौज या एक तरह का बड़ा युद्धयान जिस पर तोपें लगी होती हैं। इसी टैंक शब्द से ही हिन्दी में टंकी बना है जिसका अर्थ भी कुंड, हौज आदि होता है। इसी प्रकार तिल्ली से निकलनेवाला स्निग्ध पदार्थ ही "तेल" कहलाता है। किन्तु, आजकल कोई सा भी तेल हो, चाहे वह सरसों का हो या नारियल का, सभी के रस को "तेल" ही कहा जाने लगा है। पत्तल शब्द पत्तों से बना है। पत्तल थाली के स्थान पर उपयोग में लाने के लिए पलाश के पत्तों से बनाया गया है। पत्तल से बना एक प्रसिद्ध मुहावरा है जिस पत्तल में खाना उसी में छेद करना अर्थात् उपकार करने वाले का अहित करना।

इसी प्रकार "द्वारा" शब्द "द्वार" से बना है। "द्वार" किसी मकान में बाहर से अंदर जाने का रास्ता होता है अर्थात् "द्वार" में होकर भीतर जाते हैं। द्वारा का अर्थ होता है माध्यम से। इसी प्रकार "बंक" का अर्थ होता है तिरछा, टेड़ा, दुर्गम या विकट तथा वीर, पराक्रम को भी बंक कहा जाता था। किन्तु, आजकल बंक, बैंक को भी कहा जाता है। बैंक शब्द बंक से ही बना है। मच्छर शब्द मच्छड़ से बना है। पहले मच्छर कंजूस को कहा जाता था किन्तु अब मच्छर उड़ने वाले तथा खून चूसने वाले प्रसिद्ध कीड़े को कहा जाता है।

आज कई ऐसे शब्द प्रचलन में आ गये हैं जो अपने मूल अर्थ को छोड़कर नये अर्थ देने लगे हैं, जैसे—अंग्रेजी के "ड्रिंक" शब्द का अर्थ होता है "पीना" चाहे वह पानी पीना हो या कोई पेय पदार्थ किन्तु आजकल "ड्रिंक" का अर्थ शराब या दारू पीने से ही लगाया जाता है। अब आप "पीकर" शब्द को ही लें। यदि कोई व्यक्ति अपनी प्यास बुझाने के लिए पानी या थम्स-अप ही पीकर क्यों न आया हो? यदि कहीं पार्टी में किसी व्यक्ति ने यह कह दिया कि यह व्यक्ति "पीकर" आया है। अर्थात् निश्चित रूप से यह मान लिया जायेगा कि वह दारू या शराब ही पीकर आया होगा।

माँ का अर्थ होता है अम्मा, माता या जननी। किन्तु, आजकल किसी भी अजनबी वृद्धा को माँजी कहकर बुलाया जाने लगा है। इसी प्रकार टाँका का अर्थ है हौज या कुंडाल किन्तु आजकल सिलाई करके जोड़ने की प्रक्रिया भी टाँका कहलाती है। व्यापारियों द्वारा सामान कम तौल कर भी टाँका मारा जाने लगा है। "टाबर" का अर्थ होता है छोटा जलाशय या झील

किन्तु आजकल बाल-बच्चे व संतान के लिए "टाबर" शब्द का प्रयोग हो रहा है। इसी प्रकार टॉप का मतलब होता है खुर का निचला हिस्सा या घोड़े की बजने वाली टॉप कहलाती है। किन्तु, किसी सुंदर चीज को देखकर लोग कह उठते हैं एकदम टॉप है। "डामर" का अर्थ धूमधाम, ठाट-बाट या अद्‌भुत दृश्य या चमत्कार है किन्तु आजकल गाढ़े तारकोल को भी डामर कहते हैं जो सड़क बनाने के काम में आता है।

"आमद" शब्द आगमन, अवाई या आने के लिए प्रयुक्त होता है किन्तु आजकल आमदनी के लिए प्रयुक्त हो रहा है। इसी प्रकार "आम" एक प्रसिद्ध फल है जिसके लिए प्रसिद्ध कहावत है आम के आम गुठली के दाम अर्थात् दोहरा लाभ। किन्तु, "आम" आजकल जन-साधारण तथा सामान्य व्यक्ति के लिए प्रयुक्त हो रहा है। "दर्रा" का अर्थ होता है मोटा पीसा हुआ चूर्ण (जैसे—दाल का दर्रा) किन्तु आजकल घाटी, संकरे एवं दुर्गम रास्ते को भी दर्रा कहते हैं। इसी प्रकार फेल का अर्थ जूठा भोजन, जूठन तथा बुरे कर्म के लिए प्रयुक्त होता था किन्तु आजकल परीक्षा में अनुत्तीर्ण या विफल रहे विद्यार्थियों के लिए प्रयुक्त हो रहा है।

"शक" शब्द प्राचीनकाल में शाकद्वीप में रहने वाली एक समृद्ध जाति या तातर देश के निवासी "शक" कहलाते हैं किन्तु आजकल इसका अर्थ संदेह, शंका (जैसे—पुलिस को इस बदमाश पर पुनः शक हो गया है) तथा भ्रम (जैसे—शक दूर कर देना) रह गया है। "पापा" का शाब्दिक अर्थ होता है जो, बाजरे आदि में लगने वाला एक तरह का बरसाती कीड़ा किन्तु आजकल बच्चे अपने बाप या पिता को "पापा" कहकर प्यार से संबोधित कर रहे हैं।

"मकर" का अर्थ होता है छल कपट या मगर नामक जलजन्तु किन्तु आजकल मकर शब्द रेखा या मकर राशि के लिए ही प्रसिद्ध है। इसी प्रकार "मगर" घड़ियाल के लिए प्रयुक्त होता है किन्तु आजकल "लेकिन", "परन्तु" का भी अर्थ देता है। इसी प्रकार "मद" शब्द पहले खाता, नशा, अहंकार, गर्व, पागलपन तथा मस्ती के लिए प्रयुक्त होता था किन्तु अब मद "मद्य" या "शराब" के लिए प्रयुक्त हो रहा है।

आज कई शब्द ऐसे प्रचलन में आ गये हैं जिनका मौलिक अर्थ तो होता ही है किन्तु वे समय परिवर्तन के कारण दूसरा अर्थ भी देने लगे हैं। उदाहरण के लिए "चंदा" का वास्तविक अर्थ होता है—चांद। किरण भारती के अनुसार "भूख में कोई क्या बतलाये कैसा लगता है," सूखी रोटी का टुकड़ा भी चंदा लगता है। किन्तु आजकल कोई भी कटौरा लेकर सामने खड़े हो जाये तो वह भी चंदा लगता है। इसी प्रकार "फंदा"—छल, प्रपंच, धोखा तथा फांसी लगाने के फंदे को ही जानते हैं। किन्तु, सर्दी के दिनों में महिलाएं आपस में बैठकर गपशप लगाये और स्वेटर बुने तो उसे भी फंदा कहते हैं।

"पम्प" शब्द अंग्रेजी के (PUMP) से बना है। "पम्प" पानी को ऊपर खींचने का काम करता है या साइकिल आदि के ट्यूब में हवा भरने के काम आता है। किन्तु, आजकल कार्यालयों में अधिकारियों के तथा घर में पतियों के कान भरने के काम आ रहा है। इसी प्रकार "जम्प" का अर्थ होता है ऊपर से कूदना। किन्तु, आजकल कार्यालयों में पदोन्नतियों को भी जम्प कहने लगे हैं।

चैन तो सोने, चांदी या किसी भी धातु की हो सकती है किन्तु आजकल पत्नियां प्रयोग करने लगी हैं—तुम्हारे बगैर चैन नहीं। या दिन भर परेशान होकर कहती हैं—पल भर की चैन नहीं। इसी प्रकार टिक-टिक घड़ी के चलते समय उसमें से निकलने वाली आवाज—टिक-टिक कहलाती है तो घोड़े को भी टिक-टिक करके ही हांकते हैं।

"गुजर" का वास्तविक अर्थ है—रास्ता। किन्तु, यदि आप कहें कि राजू के पिता गुजर गये हैं तो इसका तात्पर्य निधन से हुआ। इसी प्रकार गुजरा का सामान्य अर्थ है चले जाना, जैसे—वह आदमी अभी-अभी यहां से गुजरा। किन्तु, गुजर का अर्थ गुजारा भी होता है, जैसे—इतने कम रुपयों में गुजर होना मुश्किल है।

घड़ा शब्द मिट्टी का बना गोलाकार पात्र होता है जिसमें पानी भरा जाता है किन्तु आजकल नये-नये शब्दों का निर्माण भी घड़ा कहलाने लगा है, जैसे—आजकल नये-नये शब्द घड़े जा रहे हैं। इसी प्रकार "चमचा" का अर्थ चम्मच या चिमटा होता है किन्तु किसी की जी-हुजूरी करने वाला नजदीकी व्यक्ति को भी चमचा कहकर पुकारा जाने लगा है। "मर्म" का अर्थ होता है भेद या रहस्य (जैसे—हृदय का मर्म), स्वरूप (जीवन का मर्म निराला है), शरीर का अत्यन्त नाजुक स्थान (जैसे—मर्म पर आघात करना) किन्तु, आजकल दुख के लिए मर्म का अर्थ प्रयुक्त होने लगा है, जैसे—आपका मर्म मैं ही समझता हूं।

जब किसी शब्द के अर्थ के प्रयोग का क्षेत्र बढ़ जाता है, तब उसे अर्थ विस्तार कहते हैं। उदाहरण के लिए "स्याही" शब्द का शाब्दिक अर्थ होता है—रोशनाई, कालिमा, दाग, कलंक, दोष, ऐब, काजल, अंधेरा तथा कालिख आजकल "स्याही" शब्द का प्रयोग काली, हरी, नीली, लाल आदि सभी रंगों की स्याहियों के लिए भी होता है। इसी प्रकार सब्जी का तात्पर्य साग-पात या हरी तरकारी से है किन्तु आजकल लाल, हरी, सूखी सभी प्रकार की सब्जियां ही कहलाती हैं।

"शोध" का शाब्दिक अर्थ होता है शुद्ध करना लेकिन किसी प्रकार की खोज "शोध" कहलाने लगा है। इसी प्रकार "गवेषणा" का वास्तविक अर्थ होता है गाय को ढूंढना किन्तु आजकल किसी भी प्रकार की खोज या अनुसंधान गवेषणा कहलाने लगा है। "बंसी" का अर्थ होता है मछली फंसाने का कांटा किन्तु आजकल बांसुरी यां बंसी के लिए भी प्रयुक्त हो रहा है।

स्वामी शब्द मालिक या घर के प्रधान व्यक्ति या गृह स्वामी के लिए प्रयुक्त होता है। पत्नियां अपने पति या शोहर को तथा भक्त लोग ईश्वर या प्रभु को स्वामी मानते हैं। किन्तु, आजकल साधु या संयासियों को भी स्वामी कहकर संबोधित किया जाने लगा है। इसी प्रकार "समाचार" शब्द पुराने जमाने में हाल-चाल या कुशलक्षेम पूछने के लिए प्रयुक्त किया जाता था

किन्तु आजकल हाल की घटनाओं तथा दुर्घटनाओं आदि के बारे में भी जानने के लिए अखबार/न्यूज पेपरों में समाचार देखे जाने लगे हैं।

जब किसी शब्द का अर्थ पहले की तुलना में सीमित होने लगता है, तब उसे अर्थ संकोच कहते हैं। उदाहरण के लिए "मृग" शब्द का प्रयोग पहले पशु या जंगली जानवरों के लिए ही प्रयुक्त होता था किन्तु आजकल मृग का अर्थ हिरण से ही लिया जाने लगा है। इसी प्रकार "बलात्कार" का अर्थ होता है जोर-जबरदस्ती करना या बल प्रयोग करना किन्तु आजकल स्त्री की इच्छा के विरुद्ध बलपूर्वक किया गया कुकृत्य ही बलात्कार कहलाता है।

"कृष्ण" का अर्थ होता है काला या श्याम किन्तु आजकल वसुदेव के पुत्र के लिए ही कृष्ण का उपयोग किया जाने लगा है। इसी प्रकार "गोस्वामी" शब्द का अर्थ होता है गायों का स्वामी अर्थात् गायों की रक्षा करने वाला किन्तु आजकल गोस्वामी जाति के लिए ही प्रयुक्त होने लगा है। बंदी का अर्थ बांधना या भाट, चारण होता है किन्तु आजकल बंदी का मतलब कैद से रह गया है।

"श्राद्ध" का शाब्दिक अर्थ है— श्रद्धा से युक्त किन्तु आजकल पितरों की प्रसन्नता हेतु श्रद्धा से किया जाने वाला कार्य ही श्राद्ध कहलाने लगा है। इसी प्रकार "भार्या" शब्द का अर्थ होता है भरण-पोषण के योग्य किन्तु आजकल भार्या का अर्थ पत्नी या जोरू के लिए प्रयुक्त होने लगा है। "गौ" का अर्थ गुप्तचर, जासूस या भेदिया तथा गमन करने वाला होता है किन्तु आजकल गाय के लिए ही इसका प्रयोग किया जाने लगा है।

"चेतक" का शाब्दिक अर्थ होता है सचेत रहने वाला या चेतन। किन्तु, आजकल महाराणा प्रताप का प्रसिद्ध एवं प्रिय घोड़ा ही "चेतक" नाम से जाना जाता है। आकाशवाणी का अर्थ होता है आसमान से आने वाली आवाज या देववाणी किन्तु आजकल आकाशवाणी का अर्थ रेडियो स्टेशन से ही लिया जाने लगा है। इसी प्रकार दूरदर्शन का अर्थ होता है दूर की चीज देखना या दूर की बात सोचना किन्तु आजकल टेलीविजन का अर्थ ही दूरदर्शन लिया जाने लगा है। इसी तरह बक का तात्पर्य बगुला से है किन्तु बक-बकना या बकवाद करने वाले के लिए ही रह गया है।

कभी-कभी किसी शब्द का प्रयोग अच्छे अर्थ में होता है किन्तु बाद में वह शब्द बुरे अर्थ में प्रयोग में आने लगता है, उसे अर्थापकर्ष कहते हैं। उदाहरण के लिए आप महाराज शब्द को ही लें जिसका अर्थ होता है राजा या पुराने जमाने में गुरू धर्माचार्यों आदि के लिए प्रयुक्त होने वाला सम्बोधन है किन्तु आजकल खाना बनाने वाले रसोइए को भी "महाराज" कहकर संबोधित किया जाने लगा है। इसी प्रकार अभियुक्त का अर्थ होता है "लगा हुआ" या "संलग्न" किन्तु अब इसका प्रयोग एक ऐसे व्यक्ति के लिए होता है जो किसी प्रकार का अपराधी, दोषी या मुल्जिम हो।

अब आप "गंवार" शब्द को ही लें। "गंवार" का अर्थ होता है गाँव का रहने वाला या देहाती किन्तु आजकल मूर्ख या अनाड़ी व्यक्ति के "गंवार" शब्द का प्रयोग किया जाने लगा है। इसी प्रकार "नालायक" का अर्थ होता है अयोग्य या जो योग्य न हो किन्तु मूर्खतापूर्ण व्यवहार या आचरण करने वाले को भी "नालायक" शब्द से संबोधित किया जाने लगा है।

कभी-कभी कोई शब्द पहले बुरे अर्थ में व्यक्त हो रहा हो और बाद में अच्छा अर्थ देने लगे तो उसे अर्थोत्कर्ष कहते हैं। उदाहरण के लिए "मुग्ध" का अर्थ है—मूर्ख, नासमझ, भोला या सरल किन्तु आजकल किसी चीज को मोहित या आकृष्ट करने के लिए ही "मुग्ध" शब्द का प्रयोग किया जाने लगा है, जैसे—नारी सौन्दर्य को देखते ही वह मुग्ध हो गया।

कभी-कभी शब्द के मौलिक अर्थ के साथ दूसरा अर्थ भी चलने लगता है, इसे अर्थ परिवर्तन कहते हैं, जैसे—"वर" का अर्थ होता है उत्तम, श्रेष्ठ (प्रियवर, मान्यवर), पसंद करने योग्य या वरदान किन्तु आजकल दूल्हे के लिए भी "वर" का प्रयोग होता है। इसी प्रकार "वाटिका" शब्द बाड़ी या बगीचे के लिए प्रयुक्त होता है किन्तु आजकल घर के लिए या घर के बगीचे के लिए भी "वाटिका" का प्रयोग किया जाने लगा है। "कुटिया" का अर्थ होता है साधुओं की झोंपड़ी किन्तु आजकल विशाल भवनों के लिए भी "कुटिया" शब्द प्रयुक्त होने लगा है।

यदि आप "आह" से "ओह" तक सफर करते हैं तो देखेंगे दुख, पीड़ा तथा शोक प्रकट करने के लिए "आह", हर्ष, खुशी व उल्लास के समय को "आहा" तथा पश्चाताप व आश्चर्य के समय को प्रकट करने के लिए "ओह" से प्रकट किया जाता है, (जैसे—ओह! इतना भयंकर दृश्य)। इसी प्रकार "ओहो" से भी हर्ष तथा आश्चर्य प्रकट किया जाता है।

इसी प्रकार "हाय" शब्द का वास्तविक अर्थ होता है व्यथा, कष्ट या कष्ट की आवाज लेकिन आजकल दो मित्र मिलते हैं, मिलने के इस संबोधन को "हाय" कहने लगे हैं। "हाय-हाय" शब्द भी कष्ट, पीड़ा, शोक का सूचक है किन्तु आजकल लोग अपनी मांग मनवाने के लिए हाय-हाय के नारे लगाने लगे हैं। इसी प्रकार "बाय" का अर्थ होता है "चुका हुआ" या "बायाँ" किन्तु आजकल दो मित्र जुदा होते हैं तो "बाय-बाय" कहने लगे हैं।

हें-हें शब्द धीरे-धीरे हंसने की ध्वनि को गिड़गिड़ाने से निकले शब्द को कहते हैं किन्तु आजकल जोर-जोर से हंसने की क्रिया हें-हें में परिवर्तित हो गई है। इसी प्रकार "ऐ" ध्वनि एक प्रकार का संबोधन है जो अच्छे तथा बुरे रूप में प्रयोग में आ रहा है जैसे—ऐ दोस्त या ऐ इधर आ। "अबे" शब्द तिरस्कार सूचक संबोधन है। अपमानजनक ढंग से किसी से बात करने पर "अबे" शब्द का प्रयोग किया जाता है, जैसे—अबे इधर आ।

2319 HA/98—3B

आजकल कई ऐसे शब्द भी प्रचलन में आ रहे हैं जिनका वास्तविक अर्थ तो कुछ और ही है किन्तु लोग उन शब्दों के आवश्यकतानुसार नये-नये अर्थ घड़ने लगे हैं, जैसे—ट्रेन का अर्थ होता है रेलगाड़ी किन्तु आजकल लोग इसे लोहे की पटरी पर चलने के कारण "लोह पथ गामिनी" भी कहने लगे हैं। कई बार आपने रेलवे स्टेशन पर खड़े हुए लोगों के मुंह से यह कहते हुए सुना होगा—रेल आ गई, रेल आ गई। जबकि रेल का वास्तविक अर्थ होता है जमीन पर बिछी लोहे की पटरी। रेल (पटरी) तो अपनी जगह स्थिर रहती है। आती है तो रेलगाड़ी या ट्रेन।

कई बार लोग अपने दैनिक जीवन में कई प्रकार की उक्तियों का प्रयोग करते हुए देखे जाते हैं जिनका वास्तविक अर्थ से कोई लेना-देना नहीं है। कई लोग बात-बात में यह कहते हुए सुने जाते हैं कि "मजबूरी का नाम है महात्मा गांधी"। हो सकता है कि राष्ट्र विभाजन के समय महात्मा गांधी की कोई मजबूरी रही हो। किन्तु, आजकल कई व्यक्ति अपनी मजबूरी को महात्मा गांधी की मजबूरी से जोड़ते हुए देखे गये हैं। कई व्यक्तियों को आपने यह भी कहते हुए सुना होगा कि "बाल सफेद यूं ही थोड़े किये हैं।" भले ही बाल स्वाभाविक रूप से ही न जाने कब सफेद हो गये हों। किन्तु, बाल सफेद से तात्पर्य यही लिया जाता है कि इनको अपने कार्य विशेष का गहन अनुभव है। अब आप "गोबर गणेश" शब्द को ही लें जिसका शाब्दिक अर्थ होता है अत्यधिक भद्दा किन्तु आजकल बिल्कुल भोंदू या मूर्ख व्यक्ति को ही "गोबर गणेश" कहकर संबोधित किया जाने लगा है।

—8बी/4, जिंक पार्क, उदयपुर-313001(राज.)

हिन्दी ... माता का दूध

एक बार श्री काका साहब कालेलकर ने गांधीजी से कहा कि अपने जमाने में मराठी की उत्तम सेवा करने वाले महाराष्ट्रीय देशभक्त श्री विष्णु शास्त्री चिपलूणकर अंग्रेजी के बड़े भक्त थे. वे कहते थे - अंग्रेजी तो शेरनी का दूध है

गांधीजी ने तुरन्त कहा, "दुरुस्त है, शेरनी के बच्चे को ही शेरनी का दूध हजम होगा और लाभ करेगा. आदमी के लिए अपनी माता का दूध ही अच्छा है, हम अपने को शेर नहीं बनाना चाहते । हमारी संस्कृति की जो विरासत है वह हमें संस्कृत, हिन्दी, गुजराती, इत्यादि देशी भाषाओं के द्वारा ही मिल सकती है"।

गांधीजी ने फिर कहा, "हमारे साहित्य में अगर कोई कमी है तो उसे दूर करने में ही हमारा पुरुषार्थ है । अंग्रेजों ने पुरुषार्थ के साथ अपना साहित्य बढ़ाया इसलिए अगर हम अंग्रेजी को ही अपनी मातृभाषा बनायेंगे तो वह आत्मनाश ही होगा, सांस्कृतिक आत्महत्या होगी "

भाषा

मन के विचार और भाव, शब्दों में प्रकट करने की साधना शिक्षा का एक प्रधान अंग है। स्वस्थ प्राण या मन का लक्षण ही है - भीतर और बाहर की देने-लेने की प्रक्रिया का सामंजस्य साधन। विदेशी भाषा ही अगर प्रकाश-चर्चा (भाव प्रकट करने की चर्चा) का प्रधान अवलम्ब हो, तो वह एक तरह से नकली चेहरे के भीतर से भाव प्रकाश का अभ्यास ही साबित होता है । नकली चेहरा लगाकर किया गया अभिनय मैंने देखा है । उसमें सांचे में ढले भाव को एक बंधी हुई सीमा के भीतर अविचल करके दिखाया जाता है, उसके बाहर जाने की स्वाधीनता उसमें नहीं दी जाती, विदेशी भाषा के आवरण की ओट में भाव प्रकट करने की चर्चा जाति की है।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

हिंदी दिवस

—प्रो० किशोरी लाल शर्मा

हर वर्ष चौदह सितम्बर के इर्द-गिर्द 'हिंदी दिवस' मनाने की अनवरत घोषणाएँ समाचारपत्रों में आसानी से देखी जा सकती हैं। ऐसा लगने लगता है जैसे कि हिंदी के प्रति लोगों का असीम प्रेम उमड़ पड़ा हो। परंपरा ही कुछ ऐसी पड़ गई है कि यथार्थता के बजाय हम प्रदर्शन-संस्कृति पर ही अधिक विश्वास करने लगे हैं। उसी को चरम लक्ष्य मानकर परम संतोष का अनुभव भी कर लेते हैं। यदि किसी आयोजन में कुछ शब्द कहने का अवसर उपलब्ध हो जाए, तब तो कहना ही क्या। हम कृतकृत्य हो जाते हैं और अपनी भूरि-भूरि झूठी प्रशंसा में खो जाते हैं। यह है आज के समाज पर हावी होती कृत्रिम मानसिकता। टकराहट की इस अनचाही स्थिति पर विचार मंथन के लिए मुझे अनायास ही अपने कुछ उद्‌गार व्यक्त करने के लिए विवश होना पड़ रहा है।

हम हिंदी दिवस मनाते हैं। स्वतंत्रता के बाद पिछले पाँच दशकों से हम यह परंपरागत लीक पीटते-चले आ रहे हैं—कुछ दिखावे के लिए और कुछ विवशता के कारण। संभवत: इसलिए कि चौदह सितंबर, सन् उन्नीस सौ पचास को स्वतंत्र भारत के संविधान की धारा 343(क) पारित हुई थी, जिसके अनुसार भारत राष्ट्र की राजभाषा हिंदी और लिपि, देवनागरी स्वीकृत की गई थी। 48 वर्षों के इस लंबे अंतराल के बाद भी यदि हम अपने अन्त:स्थल की गहराइयों से विचार करें, तो हमें ज्ञात हो जाएगा कि 'हिंदी दिवस' के आयोजन एक छलावा मात्र हैं और विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र की राजभाषा और राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रति यह कटु-क्रूर उपहास है।

जिस भाषा द्‌वारा राष्ट्रीय या अन्तर-प्रादेशिक स्तर पर सरकारी कामकाज का संचालन होता है, उसे राजभाषा कहते हैं और संपूर्ण राष्ट्र में किसी न किसी रूप में बोली तथा समझी जाने वाली संपर्क भाषा को राष्ट्रभाषा के नाम से अभिहित किया जाता है। राजभाषा और राष्ट्रभाषा की संकल्पनाएँ अलग-अलग हैं। जैसे मुग़लकाल में भारत की राजभाषा तो अरबी थी परंतु राष्ट्रभाषा अरबी नहीं थी ; बल्कि हिन्दुस्तानी थी। इसी प्रकार अंग्रेजी काल में भी भारत की राजभाषा तो अंग्रेजी थी ; परंतु राष्ट्रभाषा या जनसंपर्क की भाषा हिंदी या हिंदुस्तानी थी। यह बात अलग है कि कभी-कभी राजभाषा और राष्ट्रभाषा दोनों का गौरव एक ही भाषा को प्राप्त हो जाता है जैसा कि आज़ भारत में हिंदी को प्राप्त है। आज के संदर्भ में हिंदी की भूमिका को व्यावहारिक दृष्टिकोण से और भी अधिक स्पष्ट करने की आवश्यकता है।

यदि कोई परिष्कृत मानक भाषा अपने विकास-क्रम में, अपने सीमित क्षेत्र का अतिक्रमण करके अन्य प्रदेशों के अन्य भाषा-भाषियों को भी प्रभावित करती है और अन्य भाषा-भाषी समुदायों के साथ भी सार्वजनिक रूप से व्यवहृत होने लगती है, तो वह अनायास ही राष्ट्रभाषा के पद पर सुशोभित हो जाती है। आज हिंदी की स्थिति पर विचार करने से पता चलेगा कि वह उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान, मध्यप्रदेश, हरियाणा, पंजाब और हिमाचल प्रदेश आदि प्रदेशों के अतिरिक्त समस्त भारत में किसी न किसी रूप में बोली या समझी जाती है। अंत: वह यथार्थत: समूचे भारत-राष्ट्र की राष्ट्रभाषा है और राजभाषा और राष्ट्रभाषा दोनों का गौरव प्राप्त करने में सक्षम है।

प्रत्येक प्रभुता सम्पन्न राष्ट्र की एक राष्ट्रभाषा होती है जिसके माध्यम से राष्ट्र के समस्त प्रदेशों में संपर्क स्थापित होता है। उसमें समूचे राष्ट्र की प्रतिष्ठा और अस्मिता की भावना निहित रहती है तथा वह राष्ट्र की संस्कृति एवं सभ्यता के साथ विकसित होती है। राष्ट्र के जनमानस, रुढ़ियों, परम्पराओं, रीतिरिवाजों, विश्वासों, मानवमूल्यों और कलाओं से उसका अटूट संबंध होता है। उसी के माध्यम से राष्ट्रीय उद्‌देश्यों की पूर्ति भी होती है। वह राष्ट्र की मेरुदंड और प्राणधारा होती है—उसके बिना राष्ट्र गूँगा, पंगु, निष्प्राण, स्पंदनहीन और मृतकवत् होता है।

राजभाषा घोषित होने के अर्धशतक बाद भी हिन्दी का राष्ट्रीय या अन्तरप्रादेशिक स्तर पर सरकारी कामकाज या पत्र-व्यवहार की भाषा के रूप में अपेक्षित उपयोग नहीं हो पा रहा है। सरकारी आदेश भी भारतीय लोगों की परंपरागत नौकरशाही मानसिकता को नहीं बदल सके हैं। सरकारी आदेश बरसाती मेंढकों की तरह केवल क्षणिक उपहास बन कर ही रह जाते हैं। भारतीयों की हीन मानसिकता, निष्ठाहीनता और नौकरशाही-प्रवृत्ति के कारण, हर प्रकार से सक्षम होते हुए भी हिन्दी राजभाषा के रूप में यथार्थत: प्रतिष्ठित नहीं हो पा रही है। जनता के प्रतिनिधि, प्रशासक तथा अन्य सभी वर्गों के शिक्षित, अर्धशिक्षित व्यक्ति अपनी सर्वगुण सम्पन्न भाषा का प्रयोग करने से कतराते हैं और टूटी-फूटी अंग्रेजी भाषा का प्रयोग करने में गौरव का अनुभव करते हैं। इतना ही नहीं हिन्दी को रिक्शेवालों और मजदूरों की भाषा कहकर अपनी घोर अज्ञानता तथा हीन ग्रंथियों को उजागर करने में भी उन्हें लज्जा या अपमान का अनुभव नहीं होता। घरेलू पत्र-व्यवहार में भी वे अंग्रेजी का व्यवहार करने में भी अपनी शान समझते हैं। आत्मसम्मान, नैतिकता, मानवमूल्यों और राष्ट्रीय-संस्कृति के ह्रास का ज्वलंत उदाहरण इससे अधिक और क्या हो सकता है ?

इसकी पुष्टि में मैं एक दो उदाहरण प्रस्तुत करना चाहूंगा। बात उस समय की है, जब मैं एम.ए. द्वितीय वर्ष का छात्र था। मेरे एक शिक्षक ने मुझे एक पुस्तक के प्रूफ पढ़ने के लिए दिए,-यह एक शोध-प्रबंध था—"राम कथा उत्पत्ति और विकास" उसके लेखक थे फादर कामिल बुल्के

जो आगे चलकर सैंट जेवियर्स कॉलेज, रांची (बिहार) में हिन्दी के विभागाध्यक्ष बने। उन्होंने एक भाषण में हिन्दी की दुर्दशा का यथातथ्य चित्रण करते हुए कहा है कि भारतीय लोग अपनी सती-साध्वी तपस्विनी माता (हिन्दी) का घोर तिरस्कार करके कृत्रिम प्रसाधनों की तड़क-भड़क और चमकीले चटकीले परिधानों से सुसज्जित दासी (अंग्रेजी) को अपनी आराध्य देवी समझ बैठे हैं। विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र की राष्ट्रभाषा की यह कैसी विडम्बना है! उसकी यह कैसी क्रूर नियति है!

एक अन्य दृष्टांत भी इससे कम मार्मिक नहीं है। परिभाषा अनुवाद पर शब्दावली आयोग, दिल्ली की कार्यगोष्ठी चल रही थी। वनस्पति-विज्ञान के एक वरिष्ठ प्राध्यापक ने अंग्रेजी परिभाषाओं के हिन्दी अनुवाद पर टिप्पणी करते हुए कहा कि "हमारे कॉलेज के छात्र तो अपनी सरल क्षेत्रीय भाषा समझते हैं, हम उसी भाषा में उन्हें समझाते भी हैं। इन परिभाषाओं का हिन्दी अनुवाद तो पुस्तकीय है। इसे बोलचाल की स्थानीय भाषा में होना चाहिए था। इसी कठिनाई के कारण विश्वविद्यालयों में हिन्दी का प्रचार नहीं हो पा रहा है।"

सम्माननीय सदस्य की इस टिप्पणी पर मुझसे चुप नहीं रहा गया। मुझे विनम्रतापूर्वक कहना पड़ा कि "यह परिभाषा अनुवाद एक क्षेत्र विशेष के लिए नहीं किया जा रहा, बल्कि यह राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर प्रयोग में आने वाला सार्वभौम एवं सार्वलौकिक अनुवाद है। अनुवाद पुस्तकीय तो होता ही है; इससे भी कहीं अधिक वह नपे-तुले शब्दों में संतुलित वाक्य गठन में ही सर्वमान्य होता है। अत: इस कसौटी के अनुरूप परिभाषा अनुवाद ही आयोग और उससे जुड़े विद्वानों द्वारा स्वीकृत किया जाता है।"

मेरा कथन भले ही उस विद्वान के गले न उतरा हो; परन्तु इससे हमारी संकीर्ण मानसिकता तो उजागर हो ही जाती है।

आखिर इस अभिशाप का मूल कारण क्या है? क्या वस्तुत: हिन्दी में इतनी क्षमता नहीं है कि वह राष्ट्र के कार्यकलापों का सफलता पूर्वक संचालन कर सके या "जगत्गुरू" कहलाने वाले भारतीय विद्वान, प्रशासक और जनप्रतिनिधि इतने अध:पतित हो चुके हैं कि वे अपने राष्ट्र और राष्ट्रभाषा के गौरव को भूलकर भौतिकवाद की विदेशी चकाचौंध के समक्ष नतमस्तक हो पूर्णत: आत्मसमर्पण कर चुके हैं।

चुनौती भरे और आत्मसम्मान को ठेस पहुँचाने वाले ज्वलंत प्रश्न बार-बार मेरे मस्तिष्क को कुरेदते रहे हैं। साहस बटोरकर आज इस कटु सत्य का उद्घाटन करने में मुझे भले ही खेद और कष्ट का अनुभव हो रहा हो; परंतु संकोच का नहीं।

अपने ही घर में हिंदी की दुर्दशा का कारण हिंदी स्वयं नहीं; अपितु हम स्वयं हैं जो केवल अस्तित्व हीन ही नहीं; बल्कि दूसरों की वैसाखी पर ही पूर्णत: निर्भर होकर जीवित रहने के लिए ऑक्सीजन ग्रहण कर रहे हैं। आत्मसम्मान तथा निष्ठा के अभाव में मिथ्या अहंमन्यता के आवरण से आवृत हैं और फिर भी सीना तान कर सच्चे भारतीय होने का ढोंग रचते हैं।

राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में जब हम हिंदी भाषा और लिपि का अन्य अन्तरराष्ट्रीय भाषाओं तथा उनकी लिपियों के साथ तुलनात्मक एवं व्यतिरेकी अध्ययन करते हैं, तो हमारे अन्तरचक्षुओं का उन्मीलन होता है। हम पूर्ण विश्वास और सुखद आश्चर्य से अभिभूत होकर इस निष्कर्ष पर

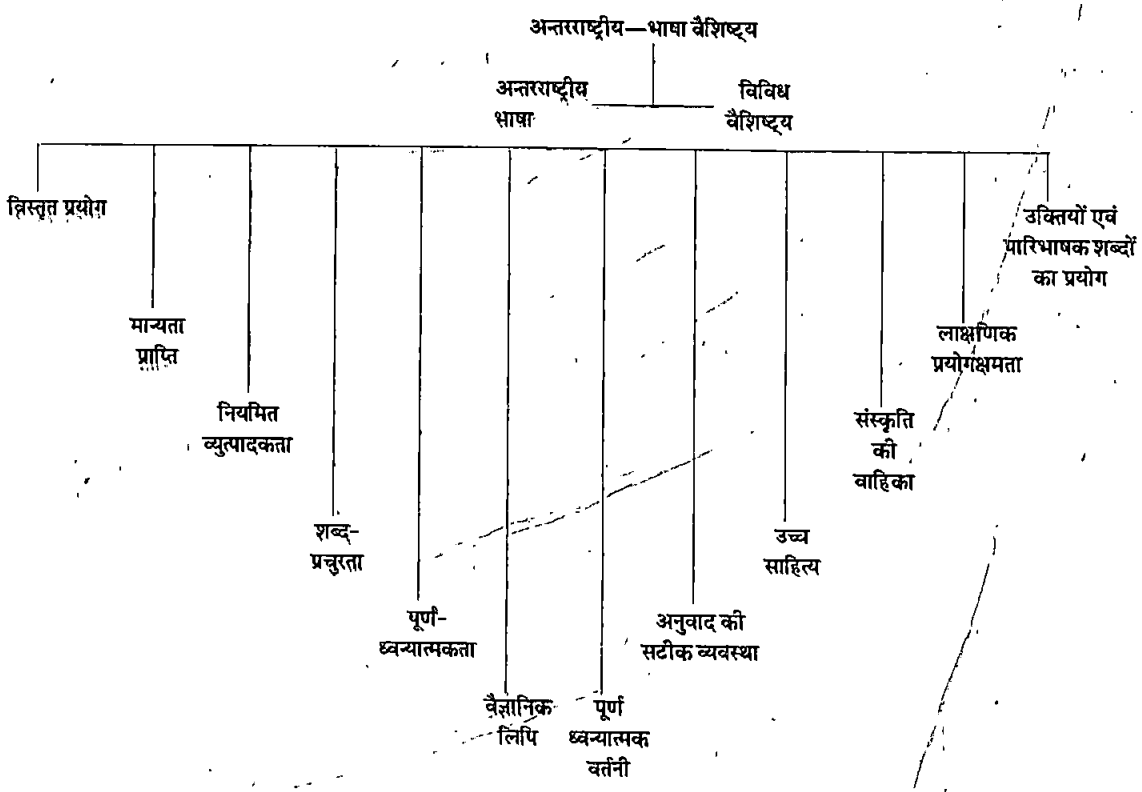

पहुँचते हैं कि अन्तरराष्ट्रीय मानदंडों की कसौटी के अनुसार हिंदी भाषा और लिपि से कम मानक नहीं मानी जा सकती।

हिंदी के सर्वमान्य वैशिष्ट्य का आकलन करने की दृष्टि से हमें आधुनिकीकृत अन्तरराष्ट्रीय भाषाओं के कुछ प्रमुख विश्वजनीन लक्षणों पर प्रकाश डालना उचित होगा :—

गहनता से विचार करने पर हम हिंदी भाषा और लिपि में उक्त विशेषताओं में से अधिकांश को सहज रूप में विद्यमान पाते हैं। इसीलिए महात्मा गांधी ने हर्षातिरेक से परम संतुष्टि का अनुभव कर डंके की चोट पर 1937 के हरिजन में घोषणा की थी कि अब समय आ गया है; जबकि खड़ी बोली हिंदी समस्त एशिया खंड की संपर्क भाषा बन सकती है और लेखन प्रणाली की दृष्टि से देवनागरी लिपि विश्व की सर्वाधिक वैज्ञानिक लिपि होने के नाते अत्यन्त उपयुक्त एवं सफल सिद्ध होगी।

राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र का विकास कदापि संभव नहीं। वह राष्ट्र को एकता के सूत्र में पिरोने वाली और उसमें अस्मिता बोध जगाने वाली संजीवनी है। हिंदी एक ऐसी भाषा है जो भारत जैसे विशाल राष्ट्र के अधिक से अधिक श्रोताओं की बोधगम्य है और इसलिए राष्ट्रभाषा की जगह केवल हिंदी ही ले सकती है; कोई दूसरी भाषा नहीं। अतः राष्ट्रीय व्यवहार में हिंदी को लाना देश की एकता और उन्नति के लिए नितांत आवश्यक है। कोई भी देश सच्चे अर्थ में तब तक स्वतंत्र नहीं है; जब तक कि वह अपनी भाषा में नहीं बोलता। वस्तुतः राष्ट्रभाषा वही हो सकती है, जिसमें राष्ट्र की आत्मा बोलती हो, "जो राष्ट्रीयता की प्रतीक हो और जिसके एक-एक शब्द में भारत माँ के प्रति अटूट श्रद्धा हो। ऐसी राष्ट्रभाषा के बिना स्वतन्त्रता अधूरी है।

हिंदी में वे सभी गुण विद्यमान हैं जो सर्वगुण संपन्न राष्ट्रभाषा में होने चाहिएं। भारतीय जनता के बीच सार्वजनिक कार्य-व्यवहार के लिए हिंदी ही एकमात्र सक्षम साधन है और वही देश प्रेम की सच्ची प्रतीक भी है।

महात्मा गांधी के इन विचारों में दृढ़ आस्था रखते हुए 'आइन्स्टाइन' ने बड़े ही मार्मिक शब्दों में अपने उद्‌गार इस प्रकार व्यक्त किए हैं कि आने वाली पीढ़ियाँ कठिनता से विश्वास करेंगी कि हाड़ मांस का बना ऐसा व्यक्ति भी कभी इस भूतल पर आया था।

हिंदी का अन्य भारतीय भाषाओं से कोई विरोध नहीं है। संविधान के अनुच्छेद 351 में भारतीय भाषाओं की स्थिति सुनिश्चित की गई है। इस समय संविधान के अनुसार भारत की 18 भाषाएँ मान्यता प्राप्त हैं—पहले 15 थीं—कन्नड़, तमिल, तेलुगु, मलयालम, ओड़िया, असमीया, बंगला, पंजाबी, कश्मीरी, गुजराती, मराठी, हिंदी, उर्दू, संस्कृत और सिंधी। अब तीन अन्य भाषाओं को मान्यता प्राप्त हुई है—मणिपुरी, कोंकणी और नेपाली। इनमें परस्पर विरोध होने का प्रश्न ही नहीं उठता; क्योंकि इन सबको एक ही वट वृक्ष संस्कृत की छाया और संरक्षण प्राप्त है। हिन्दी इनकी सबसे बड़ी और मोटी शाखा या बड़ी बहिन है, जो अपनी छोटी बहिनों को समान स्नेह देती है और उनसे आदर पाती है। संस्कृत शब्दावली से इन सभी को न्यूनाधिक अपेक्षित पुष्टि प्राप्त होती है। संस्कृत शब्दावली प्रायः सभी भाषाओं में प्रचुरता से उपलब्ध भी होती है, जिसका आदान-प्रदान सभी भाषाओं को बल प्रदान करता है।

हिन्दी भाषी प्रदेश अनेक हैं—उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश, हरियाणा, पंजाब और हिमाचल प्रदेश में तो हिंदी मातृभाषा के रूप में व्यवहृत होती ही है; दिल्ली तथा भारत के अन्य प्रदेशों में भी हिंदी बोली और समझी जाती है। इसके अतिरिक्त आधा दर्जन से अधिक विश्व के राष्ट्रों की मातृभाषा भी हिंदी है। इनमें सूरीनाम, मॉरिशस, गुयाना, नेपाल, ट्रिनिडाड और फिजी आदि प्रमुख हैं। इतना ही नहीं विश्व के लगभग एक सौ से अधिक विश्वविद्यालयों में हिंदी के विभाग हैं, जहाँ हिंदी में उपाधियाँ प्रदान की जाती हैं। यह है हिंदी का विस्तृत क्षेत्र जो अनायास ही अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर अनौपचारिक रूप से अपनी धाक जमाए हुए है। आज हिंदी अंतरराष्ट्रीय भाषाओं में—बोलने और समझने वालों की दृष्टि से दूसरे नम्बर पर है—चीनी भाषा को छोड़कर अन्य अन्तरराष्ट्रीय भाषाओं—अंग्रेजी, रूसी, फ्रेंच, स्पेनिश और अरबी से वह कहीं आगे है।

हिंदी की इन कार्यसाधक विशेषताओं से प्रभावित होकर रूस, अमरीका, कनाडा, ब्रिटेन और जर्मन आदि उन्नत राष्ट्र उसे विदेशी भाषा के रूप में सीखने की दृष्टि से मान्यता प्रदान कर रहे हैं ; जबकि भारतीय विशेषतः हिंदी भाषी लोग उसे हीन और अछूत समझकर उसका व्यवहार करने से डरते हैं, कि कहीं लोग उन्हें बिना पढ़ा-लिखा न समझ बैठें : क्योंकि वे हिंदी पढ़े-लिखे को पढ़ा-लिखा विद्वान नहीं मानते।

मैं अनेकशः धन्यवाद देना चाहूँगा हिंदी के सबल पक्षधर हिंदीतर भाषा भाषियों को जिनकी निष्ठा के फलस्वरूप हिंदी को निरंतर बल मिलता रहा है और अब भी मिल रहा है। कुछ मुट्ठी भर निहित स्वार्थी राजनीतिज्ञों को छोड़कर वे इस दिशा में हिंदी भाषियों से कहीं अधिक सक्रिय रहे हैं, तथा अब भी हैं। वस्तुतः राष्ट्र भाषा या संपर्क भाषा हिंदी उन्हीं की अधिक है जो हिंदी के प्रति प्रेम-निष्ठा रखते हुए उसे सही रूप में सप्रयास सीखते-सिखातें हैं और उसमें प्रशंसनीय मौलिक रचनाएँ करते हैं। मैं साधुवाद देता हूँ अपने उन कर्त्तव्य निष्ठ राष्ट्रभाषा सेवी शिष्यों को जो देश विदेश के कोने-कोने में अनेक कठिनाइयों को सहन करते हुए भी शिक्षण- प्रशिक्षण, प्रचार-प्रसार और अनुसंधान से राष्ट्रभाषा हिंदी की ज्ञान रश्मियों को विकीर्ण करने में प्रयासरत हैं। वे न केवल राष्ट्र भाषा के प्रति समर्पित हैं; अपितु सच्चे अर्थ में राष्ट्रवादी भी हैं। हमें उनसे सीख लेकर उसे अपने जीवन में अपनाने की यथाशक्ति चेष्टा करनी चाहिए; तभी हम हिंदी के प्रति अपने कर्त्तव्य का निर्वाह करने में सक्षम हो सकते हैं और हिंदी के प्रयोग के प्रति उदासीनता के परिवाद को झुठला सकते हैं।

—डी. 220 कमला नगर, आगरा - 282004

✡ ✡ ✡

स्वतंत्रता की स्वर्ण जयंती एवं हिंदी

—निशिकांत महाजन

भारत को अंग्रेजी शासन से स्वतंत्र हुए पचास वर्ष बीत गए हैं। यह सभी भारतवासियों के लिये गौरव का विषय है। अत: स्वाभाविक है कि अगस्त 1997 से स्वतन्त्रता की स्वर्ण जयन्ती हर्ष और उल्लास से मनाई जा रही है। इस उपलक्ष में सरकार तथा विभिन्न संगठनों द्वारा देश तथा विदेश में विविध कार्यक्रम आयोजित किए जा रहे हैं। समारोह हो रहे हैं, नई योजनाएं आरम्भ की गई हैं। कृतज्ञ राष्ट्र द्वारा स्वतन्त्रता सेनानियों के त्याग व बलिदान को याद किया जा रहा है, उन्हें सम्मानित किया जा रहा है, उनके लिए विभिन्न सुविधायें उपलब्ध कराई जा रही हैं। स्वतन्त्रता आन्दोलन की मुख्य घटनाओं को पुन: स्मरण करने के साथ-साथ पिछली अर्द्ध शताब्दी में विभिन्न क्षेत्रों में हुई प्रगति तथा विकास कार्य की समीक्षा की जा रही है तथा भविष्य के लिये विशेषकर पिछड़े वर्गों के कल्याण तथा विकास हेतु नई परियोजनाओं को अंतिम रूप दिया जा रहा है। बालिकाओं के विकास तथा महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए विशेष अधिनियम बनाए जा रहे हैं।

आइए जन आयोज़नों के साथ-साथ हम देश की राष्ट्रभाषा हिन्दी की स्थिति का भी आकलन करें और देखें कि ब्रिटिश साम्राज्य से स्वतन्त्रता प्राप्त करने के पचास साल बाद भी भारत का प्रबुद्ध तथा शिक्षित समाज अंग्रेजी भाषा के मोह तथा इसकी दासता से अपने को कितना मुक्त कर पाया है। भारतीय भाषाओं को अपना उचित स्थान किस सीमा तक मिल पाया है। यह लेखा-जोखा करना होगा कि अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं को शिक्षा पद्धति, साहित्यिक क्षेत्र, संचार माध्यमों तथा निजी एवं व्यापारिक क्षेत्रों में क्या स्थान मिल पाया है तथा इस दिशा में और क्या उपाय करने अपेक्षित हैं।

हिन्दी की स्थिति का आकलन करने के लिए उचित होगा कि इसके विभिन्न स्वरूपों को पहचान कर स्थिति की समीक्षा की जाए। हिन्दी भाषा के कुछेक स्वरूप हैं :—(क) राष्ट्रभाषा तथा संपर्क भाषा, (ख) केन्द्र सरकार की राजभाषा, (ग) राज्य सरकारों की राजभाषा, (घ)अन्तरराष्ट्रीय भाषा। इसके अतिरिक्त यह भी समीचीन होगा कि विभिन्न क्षेत्रों में हिन्दी के प्रयोग के बारे में भी चिन्तन किया जाए जैसे (क) शिक्षा का क्षेत्र (ख) साहित्यिक क्षेत्र (ग) संचार माध्यमों का क्षेत्र (घ) निजी तथा व्यापारिक क्षेत्र।

राष्ट्रभाषा तथा सम्पर्क भाषा हिन्दी

हिन्दी भाषा का विकास पिछले लगभग सात-आठ सौ वर्षों में हुआ तथा हिन्दी सदियों से भारत वर्ष की राष्ट्र भाषा, सम्पर्क भाषा तथा कई भागों में राजभाषा रही है। पिछले डेढ़ सौ वर्षों से, विशेषकर रेल तथा अन्य यातायात के साधनों का विकास होने से लोगों का एक स्थान से दूसरे स्थान को आवागमन काफी बढ़ा है। साथ ही मुद्रण प्रणाली में भी विकास हुआ। इस सब से देश की सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग और बढ़ा। इसी अवधि में अनेक समाज सुधारकों ने अपना संदेश जन-जन तक पहुंचाने के लिए हिन्दी भाषा का प्रयोग किया। उदाहरण के तौर पर स्वामी दयानन्द ने गुजराती भाषी होने पर भी सत्यार्थ प्रकाश की रचना हिन्दी में ही की। वैसे भी देखा गया है कि देश के बड़े-बड़े नगरों, रेलवे स्टेशनों, बाजारों, तीर्थ स्थलों पर यदि किसी एक भाषा से काम चलाया जा सकता है वह हिन्दी ही है। यही नहीं असमिया, बंगला, उड़िया, पंजाबी, कश्मीरी, सिन्धी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं को बोलने वालों के लिए हिन्दी का समझना तथा बोलना काफी सरल है। अत: यह स्वाभाविक था कि इस शताब्दी के शुरू में महात्मा गांधी तथा स्वतन्त्रता आन्दोलन के अन्य नेताओं ने हिन्दी भाषा को अपना संदेश आम जनता तक पहुंचाने का माध्यम बनाया तथा इसे राष्ट्रभाषा एवं सम्पर्क भाषा के रूप में अपनाया।

इस विषय पर विचार करने का एक अन्य पहलू यह भी है कि हिंदी राष्ट्रभाषा तथा सम्पर्क भाषा हो सकती थी। देश की लगभग 40 प्रतिशत जनसंख्या की यह मातृभाषा है तथा लगभग 80 प्रतिशत जनता इसे समझ तथा बोल सकती है एवं इसे सीखने में उन्हें सुविधा है। अत: इस विषय पर और अधिक चिन्तन न कर यह कहना उचित होगा कि हिंदी सदियों से भारत की राष्ट्रभाषा एवं सम्पर्क भाषा रही है, अब भी है तथा भविष्य में भी रहेगी।

बीसवीं शताब्दी में हिंदी को सम्पर्क भाषा के रूप में पनपने तथा विकसित होने में प्रेस, फिल्मों, रेडियो तथा टेलीविजन का विशेष योगदान रहा है। स्वतन्त्रता से पूर्व हिंदी भाषा का प्रयोग मुख्यत: बोलचाल में, धार्मिक कार्यों में तथा साहित्यिक क्षेत्र तक सीमित था। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् इसके प्रयोग क्षेत्र में विस्तार हुआ है तथा अब इसका प्रयोग देश के विभिन्न भागों में प्रशासन, विधि, न्याय, शिक्षा तथा विज्ञान के क्षेत्रों में भी होता है।

केन्द्र सरकार की राजभाषा

राष्ट्रभाषा तथा सम्पर्क भाषा होते हुए यह स्वाभाविक था कि हिंदी ही केन्द्र सरकार की राजभाषा बने। स्वतन्त्रता सेनानियों की आकांक्षा तथा परिकल्पना भी यही थी कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् सरकारी काम अंग्रेजी के स्थान पर भारतीय भाषाओं में हो एवं केन्द्र में यह स्थान हिंदी

भाषा को प्राप्त हो। इसका कुछ पूर्वाभास इस बात से भी हो गया था कि नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने आजाद हिंद फौज की स्थापना करते हुए अपने भाषणों, संदेशों तथा आदेशों में हिंदी भाषा को अपनाया था। संविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार हिंदी को संघ की राजभाषा का दर्जा दिया गया। संघ की राजभाषा बनने से राष्ट्रभाषा हिंदी में एक अतिरिक्त आयाम जुड़ा है, उसका दर्जा बढ़ा है कम नहीं हुआ। सरकार द्वारा लाखों अहिंदी भाषी कर्मचारियों को हिंदी के कार्यसाधक ज्ञान का प्रशिक्षण दिया गया। हजारों टाइपिस्टों एवं आशुलिपिकों को भी हिंदी में टाइपिंग तथा आशुलिपि के काम करने के योग्य बनाया गया ताकि केन्द्र सरकार का काम अधिकाधिक हिंदी भाषा में सम्पन्न हो। प्रशासनिक कार्यों में, न्यायालयों में तथा विधि के क्षेत्र में कार्य हिंदी में सुचारू रूप से हो सके, इन विषयों तथा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विषयों के लिए शब्दावलियां तथा कोश बनाए गए। संविधान के प्रावधानों के अनुरूप राष्ट्रपति द्वारा कतिपय महत्वपूर्ण कार्यों के लिए 1965 से पहले भी हिंदी भाषा का प्रयोग प्राधिकृत किया गया। 1965 से तो हिंदी ही संघ की राजभाषा बनी, हालांकि राजभाषा अधिनियम, 1963 के अनुसार अंग्रेजी के प्रयोग को जारी रखा जा सकने का प्रावधान किया गया। कुछेक दस्तावेजों को छोड़कर जिनके लिए हिंदी तथा अंग्रेजी दोनों का प्रयोग अनिवार्य है, अंग्रेजी का प्रयोग ऐच्छिक है, अनिवार्य नहीं। उधर राजभाषा नियमों तथा सरकार के आदेशों के अनुसार अधिकांश कार्यों के लिए हिंदी भाषा का प्रयोग अनिवार्य है। नतीजा यह है कि केन्द्र सरकार के काम में हिंदी का प्रयोग शनैः शनैः बढ़ा है और बढ़ेगा ही। इस विषय में नियम स्पष्ट है। सरकार की नीति तथा संकल्प भी है कि हिंदी का प्रयोग बढ़े और लगभग सारा सरकारी काम हिंदी भाषा में हो। आदेशों की भी कमी नहीं है। देखा जाए तो सरकारी कार्यालयों में हिन्दी भाषा का प्रयोग हो भी रहा है। अधिकांश सरकारी अधिकारी व कर्मचारी हिंदी का प्रयोग करते हैं। जहां ऐसा नहीं हो रहा, स्वयं सेवी संस्थाओं को आगे आना चाहिए, संबंधित अधिकारियों/कर्मचारियों से संपर्क स्थापित कर उन्हें हिंदी में काम करने के लिए प्रेरित करना चाहिए। तथा जहां आवश्यकता हो उनकी इस बारे में सहायता करनी चाहिए।

राज्य सरकारों की राजभाषा

स्वतंत्रता सेनानियों की भावनाओं का आदर करते हुए संविधान के अनुच्छेद 345 में प्रत्येक राज्य के विधान मण्डल को अधिकार दिया गया कि वह अपने राज्य की राजभाषा का निर्धारण करे। तदनुसार विभिन्न राज्यों द्वारा प्रदेश में बोली जाने वाली भाषा/भाषाओं को राज्य की राजभाषा घोषित किया गया जैसे असम में असमिया, पंजाब में पंजाबी, केरल में मलयालम, गुजरात में गुजराती तथा हिन्दी को राज्य की राजभाषा बनाया गया। इसी के अनुरूप बिहार, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान तथा मध्य प्रदेश राज्यों एवं दिल्ली तथा अण्डमान निकोबार द्वीप समूह में हिंदी को राज्य की राजभाषा बनाया गया। होना तो यह चाहिए था कि प्रत्येक राज्य का राजकाज प्रदेश की राजभाषा में संपन्न हो तथा राज्य एवं केन्द्र सरकार के बीच पत्राचार केन्द्र की राजभाषा में हो। परन्तु अंग्रेजी के स्थान पर राज्य की राजभाषा के प्रयोग की गति अधिकांश राज्यों में काफी समय तक धीमी रही। गुजरात में काफी समय से अधिकांश काम गुजराती भाषा में हो रहा है। पिछले कुछ वर्षों से राज्यों की राजभाषा के प्रयोग में गति आई है तथा धीरे-धीरे राजकाज में उनका प्रयोग बढ़ता जा रहा है। फिर भी राज्यों की राजभाषाओं को राजकाज में अभी तक पूरी तरह वह स्थान नहीं मिला जिसकी वे अधिकारिणी हैं। आशा की जानी चाहिए कि इस ओर प्रगति की गति बढ़ेगी। हिंदी भाषी राज्यों में सरकारी काम में हिंदी के प्रयोग की स्थिति भी न्यूनाधिक वैसी ही है। पिछले कुछ वर्षों में प्रयोग की गति बढ़ी अवश्य है परन्तु अभी भी स्थिति संतोषजनक नहीं कही जा सकती। हिंदी सेवी संस्थाओं को चाहिए कि अपने प्रभाव का प्रयोग करें तथा राज्य सरकारों और उनके उच्च अधिकारियों को प्रेरित कर प्रयोग की गति तेज करवाने में अपना योगदान करें।

अन्तर्राष्ट्रीय भाषा

हिंदी का प्रचलन भारत में ही नहीं, अन्य देशों में भी है। विशेषकर ऐसे देशों में जहां भारतीय मूल के लोग काफी संख्या में बसे हैं जैसे मारीशस, सूरीनाम, फिजी, ट्रिनिडाड, ब्रिटेन आदि, घरों में, आम बोल-चाल में, त्यौहारों में, धार्मिक पर्वों पर, पढ़ाई में और कुछ स्थलों पर तो बाजारों में हिंदी भाषा का प्रयोग होता है। हिंदी बोलने वालों की संख्या कई यूरोपीय भाषाओं के बोलने वालों से कहीं अधिक है। हिंदी के महत्व को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर समझा गया है। अधिकांश देशों में प्रारंभिक स्तर से विश्वविद्यालय स्तर तक हिंदी पढ़ने की व्यवस्था लगभग 200 से अधिक संस्थानों में है। भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति को समझने का माध्यम मान कर, कई विदेशी विद्वान हिन्दी भाषा का अध्ययन करते हैं। यह उन्हीं के परिश्रम का फल है कि हिंदी के महत्व को पहचान कर राज्य में लाखों बच्चे स्वयं सेवी संस्थाओं की कक्षाओं में अथवा निजी स्तर पर हिंदी सीखते हैं।

उच्च शिक्षा के स्तर पर हिंदी तथा क्षेत्रीय भाषाओं के पठन-पाठन की व्यवस्था के दो पहलू हैं—पहला हिन्दी अथवा क्षेत्रीय भाषा को एक विषय के रूप में पढ़ाने की सुविधा तथा दूसरी अन्य विषयों को हिंदी या क्षेत्रीय भाषा के माध्यम से पढ़ाने की व्यवस्था। जहां तक हिंदी को एक विषय के रूप में पढ़ाने का संबंध है, तमिलनाडु सहित लगभग सभी राज्यों के अधिकांश विश्वविद्यालयों में स्नातक, स्नातकोत्तर तथा डॉक्ट्रेट के स्तर पर यह व्यवस्था उपलब्ध है। बल्कि इनमें से बहुत से विश्वविद्यालयों में अलग हिंदी विभाग स्थापित किए गए हैं। क्षेत्रीय भाषाओं की स्थिति भी लगभग ऐसी ही है।

अंग्रेजी शासन काल में तथा 1947 के कुछ वर्ष पश्चात् भी उच्च शिक्षा में एकमात्र माध्यम अंग्रेजी भाषा थी। तथापि, केन्द्र और राज्य सरकारों की लगातार कोशिशों के परिणामस्वरूप तथा जनता में राजनैतिक जागरूकता के फलस्वरूप पिछले चार दशकों में स्थिति में धीरे-धीरे परिवर्तन आया है। अब अंग्रेजी के स्थान पर अथवा अंग्रेजी के साथ-साथ हिंदी और क्षेत्रीय भाषाएं भी उच्च शिक्षा के माध्यम के रूप में अपनाई जा रही हैं।

मानविकी विषयों में स्नातक तथा स्नातकोत्तर स्तरों पर हिंदी भाषी राज्यों में, एकाध अपवाद को छोड़कर, विश्वविद्यालयों में केवल हिंदी माध्यम अथवा हिंदी और अंग्रेजी दोनों माध्यम उपलब्ध हैं तथा

काफी संख्या में छात्र हिन्दी माध्यम से पढ़ाई करते हैं। कुछ अहिंदी भाषी राज्यों, पंजाब, गुजरात, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश आदि में क्षेत्रीय भाषा के साथ-साथ हिंदी माध्यम का विकल्प भी उपलब्ध है। लगभग ऐसी ही स्थिति अहिंदी भाषी राज्यों में राज्य की क्षेत्रीय भाषा के माध्यम के रूप में अपनाये जाने की है। हालांकि अधिकांश विश्वविद्यालयों में क्षेत्रीय भाषा और अंग्रेजी भाषा दोनों माध्यम उपलब्ध हैं न कि केवल क्षेत्रीय भाषा।

वैज्ञानिक विषयों के लिए भी बी.एस.सी. स्तर तक स्थिति आम तौर पर उपर्युक्त जैसी ही है। तथापि स्नातकोत्तर स्तर पर अधिकांश स्थानों पर केवल अंग्रेजी और कहीं-कहीं अंग्रेजी-हिंदी माध्यम अथवा अंग्रेजी—क्षेत्रीय भाषा माध्यम उपलब्ध है। यही नहीं अब तो मानविकी तथा विज्ञान के विभिन्न विषयों की स्तरीय पाठ्य पुस्तकें हिंदी भाषा में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं।

दूसरी ओर इंजीनियरिंग तथा आयुर्वेद की शिक्षा के क्षेत्र में कुल मिलाकर स्थिति यह है कि स्नातक तथा स्नातकोत्तर स्तर पर प्रौद्योगिकी, इंजीनियरी तथा आयुर्विज्ञान (मेडिकल) के लिए स्वतंत्रता प्राप्ति के पचास वर्ष पश्चात् भी शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी ही है। इसका एक दुष्परिणाम यह भी है कि इन क्षेत्रों में प्रतिभाओं का देश से पलायन हो रहा है। आई.आई.टी., आई.आई.एम. तथा प्रमुख आयुर्विज्ञान संस्थानों के प्रतिभावान मेधावी चोटी के अनेक छात्र जिन की शिक्षा पर देश के इतने संसाधन व्यय किए जाते हैं, अमरीका तथा यूरोपीय देशों को जा रहे हैं। इस बारे में उन पर प्रतिबंध नहीं लगाया जा सकता है और न ही यह वांछनीय ही है, परन्तु इस पलायन का काफी हद तक रोका जा सकता है। इसके लिए हमें चाहिए कि इन तकनीकी विषयों की शिक्षा हिंदी तथा भारतीय भाषाओं के माध्यम से अविलम्ब शुरू की जाए। इससे विदेशों की ओर पलायन तो कम होगा ही साथ ही पिछड़े वर्गों के अधिक छात्र तकनीकी तथा मेडिकल विषयों की शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे। विदेशी राजनयिक हिंदी के अच्छे विद्वान तथा रचनाकार हैं, जैसे चैक राजदूत डॉ. स्मैकल हिंदी में कविता लिखते हैं। पोलैण्ड के राजदूत डॉ. ब्रिस्की एक अन्य नाम है। विदेशों के साथ सभी संधियां तथा करार, भारतीय राजनयिकों आदि के परिचय पत्र हिन्दी में भी होते हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ के कुछ अधिवेशनों में हिंदी में भाषण दिए गए हैं। विदेशों में स्थित भारतीय दूतावासों को सरकार की ओर से आदेश हैं कि वे कम से कम 25 प्रतिशत कार्य हिंदी में करें। दूतावासों में हिंदी के प्रयोग में प्रगति हुई है, परन्तु उतनी नहीं जितनी वांछित है। आशा की जा सकती है कि निकट भविष्य में इस दिशा में प्रगति की गति बढ़ेगी। आवश्यकता इस बात की है कि जब भी अवसर मिले, उन्हें हिंदी के प्रयोग के लिए प्रेरित किया जाए। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी का प्रयोग बढ़े, इसे संयुक्त राष्ट्र संघ में मान्यता प्राप्त हो, इस सब के लिए अनिवार्य है कि पहले राष्ट्रीय स्तर पर इसका प्रयोग तीव्र गति से बढ़ाया जाए।

अब देखते हैं कि प्रयोग के विभिन्न क्षेत्रों में हिंदी की क्या स्थिति है।

शिक्षा का क्षेत्र

प्राथमिक शिक्षा तथा माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के स्तर पर देश के अधिकांश विद्यालयों में हिंदी तथा क्षेत्रीय भाषाएं न केवल एक विषय के रूप में पढ़ाई जाती हैं, बल्कि शिक्षा का माध्यम भी है। यह अलग बात है कि पिछले कुछ दशकों से अंग्रेजी माध्यम के तथाकथित पब्लिक स्कूलों की संख्या बढ़ती जा रही है जिससे बच्चों पर अनावश्यक बोझ पड़ता है। परन्तु संतोष की बात है कि यह बीमारी अभी तक बड़े-बड़े नगरों तथा मध्यम नगरों तक सीमित है और गांवों तथा छोटे शहरों में स्कूल स्तर पर शिक्षा का माध्यम हिंदी अथवा क्षेत्रीय भाषा ही है। अंग्रेजी स्कूलों की भरमार के बारे में शिक्षाविदों तथा प्रबुद्ध जनों द्वारा आत्मनिरीक्षण की आवश्कता है। शायद माध्यमिक स्तर पर भाषा शिक्षण तथा त्रिभाषा सूत्र के कार्यान्वयन के विषय में विवेचन करने पर कुछेक निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं। त्रिभाषा सूत्र बनाते समय परिकल्पना यह की गयी थी कि संविधान में प्रस्वावित 14 वर्ष की आयु तक अनिवार्य शिक्षा समाप्त करने पर प्रत्येक छात्र को क्षेत्रीय भाषा और राष्ट्र भाषा हिन्दी का अच्छा ज्ञान हो जाएगा तथा हाई/हायर सैकेंड्री पास विद्यार्थी को साथ में अंग्रेजी का भी ज्ञान हो जाएगा। परन्तु उपर्युक्त परिकल्पना पूर्णत: साकार नहीं हुई। एक ओर तो तमिलनाडु ने त्रिभाषा सूत्र को स्वीकार न करके राष्ट्रभाषा हिंदी को राज्य के सरकारी स्कूलों में पढ़ाने की व्यवस्था नहीं की, वहीं दूसरी ओर अधिकांश राज्यों ने त्रिभाषा सूत्र को नीति के स्तर पर स्वीकारते हुए इसे निष्ठापूर्वक लागू नहीं किया। हिंदी भाषी राज्यों में दक्षिण की आधुनिक भाषाओं को सुचारू रूप से पढ़ाने के ठोस तथा सही प्रयास नहीं किए गए। फिर भी, शिक्षा के क्षेत्र में समय-समय पर किए गए सुधारों के परिणामस्वरूप अब स्थिति यह है कि विभिन्न राज्यों में अधिकांश मिडिल, हाई तथा हायर सैकेंड्री स्कूलों में सभी विषय हिन्दी या क्षेत्रीय भाषा के माध्यम से पढ़ाने की सुचारू व्यवस्था उपलब्ध है। मानविकी तथा वैज्ञानिक विषयों पर पाठ्य पुस्तकें उपलब्ध हैं। कुल मिलाकर उपर्युक्त स्थिति संतोषजनक तथा आशाप्रद प्रतीत होती है। स्वयंसेवी संस्थाओं की इस क्षेत्र में विशेष भूमिका है। वे आगे आएं तथा राज्य सरकारों पर दबाव डालें कि त्रिभाषा सूत्र का पूरी तरह अनुपालन हो। इस विषय में तमिलनाडु में स्वयंसेवी संस्थाओं का कार्य सराहनीय है। इन क्षेत्रों के प्राध्यापक तथा संस्थान इस प्रस्ताव के विरुद्ध कई तर्क प्रस्तुत करेंगे और अंग्रेजी माध्यम को जारी रखने पर जोर देंगे। परन्तु स्वतंत्रता की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर यदि हम इस कुचक्र को तोड़ सकें तो यह एक ठोस उपलब्धि होगी। आखिर अंग्रेजी तर भाषी अन्य उन्नत देश जापान, फ्रांस, जर्मनी आदि भी तकनीकी विषयों की शिक्षा अपनी भाषा के माध्यम से ही देते हैं।

इस विषय में एक और पहलू ध्यान देने योग्य है। शायद कुछ नवयुवक उच्च शिक्षा में इसलिए अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा ग्रहण करते हैं कि नौकरियों के लिए यह माध्यम आवश्यक है। परन्तु स्थिति इससे भिन्न है। हमें इस तथ्य का बड़े पैमाने पर प्रचार करना चाहिए कि आई.ए.एस. जैसी उच्च परीक्षाओं में हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं का माध्यम कई वर्षों से उपलब्ध है। साक्षात्कारों के लिए तथा अन्य भर्ती परीक्षाओं में भी हिंदी माध्यम का विकल्प उपलब्ध है। यह भी प्रचार करना चाहिए कि इन परीक्षाओं में हिन्दी माध्यम वालों का पास प्रतिशत अंग्रेजी माध्यम वालों से

2319 HA/98—4A

कम नहीं है और अब हजारों नवयुवक हिंदी तथा भारतीय भाषाओं के माध्यम से भर्ती परीक्षाएं देते हैं और उनमें से कई योग्यता क्रम सूची (मैरिट लिस्ट) में उच्च स्थान प्राप्त करते हैं।

साहित्य का क्षेत्र

जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है, स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व हिंदी बोल-चाल, धार्मिक कार्यों के अतिरिक्त मुख्यत: साहित्य की भाषा थी। उन्नीसवीं तथा बीसवीं शताब्दी के पहले पचास वर्षों में हिंदी भाषा में मौलिक तथा अनूदित उत्कृष्ट साहित्य की रचना हुई। साहित्य की प्रत्येक विद्या में उच्च कोटि की रचनाएं जन साधारण को पढ़ने को मिलीं। स्वतंत्रता के उपरान्त भी हिंदी में मौलिक तथा अनूदित दोनों प्रकार का साहित्य प्रचुर मात्रा में प्रकाशित हो रहा है। अन्तर यह है कि स्वतंत्रता से पूर्व हिंदी लगभग ललित साहित्य तक सीमित थी। अब विज्ञान, तकनीकी, विधि, न्याय, प्रशासन तथा प्रबन्ध के क्षेत्र में भी प्रचुर मात्रा में साहित्य रचना हो रही है। यहां भी अनुवाद ही नहीं, उच्च कोटि की मौलिक रचनाएं भी हो रही हैं। कुल मिलाकर स्थिति संतोषजनक प्रतीत होती है।

संचार माध्यमों का क्षेत्र

हिन्दी के प्रचार प्रसार में संचार माध्यमों जैसे प्रैस, रेडियो, फिल्मों तथा टेलीविजन का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इनके माध्यम से हिंदी जन-जन के होंठों तक पहुंची है, चाहे वे हिंदी भाषी हों अथवा अहिन्दी भाषी। इसी प्रकार संचार माध्यमों के विकास में भी हिंदी भाषा की विशेष भूमिका रही है। भारत की सम्पर्क भाषा होने के नाते इसने संचार माध्यमों के प्रसार में काफी बड़ा योगदान दिया है। हिन्दी भाषा में प्रकाशित समाचार पत्रों, तथा अन्य पत्र-पत्रिकाओं की संख्या पिछले पचास वर्षों में गई गुना बढ़ी है तथा बढ़ती जा रही है। फिल्मों, रेडियो तथा टेलीविजन के कार्यक्रमों को भी अपनी लोकप्रियता तथा प्रसार बढ़ाने में हिन्दी का सहारा लेना पड़ता है। इन माध्यमों पर कार्यक्रम न केवल भारत में बल्कि विदेशों में भी लोकप्रिय हैं। इन सब में हिंदी भाषा ने विशेष भूमिका निभाई है। देखा जाए तो दोनों एक दूसरे पर आधारित हैं। हिन्दी भाषा का महत्व विदेशी भी अच्छी प्रकार पहचानते हैं। अत: इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के अधिकांश विज्ञापन हिंदी तथा भारतीय भाषाओं में प्रसारित होते हैं।

निजी तथा व्यापारिक क्षेत्र

निजी तथा व्यापारिक क्षेत्र में स्वतंत्रता से पहले काफी मात्रा में काम हिंदी तथा क्षेत्रीय भाषाओं में होता था। बाजारों में, बोल-चाल में, हिसाब-किताब में तथा काफी हद तक पत्राचार में भारतीय भाषाएं ही प्रयोग में लाई जाती थीं। स्वतंत्रता के पश्चात् भी बोल-चाल में, बाजारों में हिंदी तथा भारतीय भाषाओं का ही प्रचलन है। उत्तर भारत के महानगरों को छोड़कर, अधिकांश बाजारों में दुकानों/प्रतिष्ठानों के बाहर नामपट्ट आदि हिंदी/क्षेत्रीय भाषाओं में हैं। अधिकांश उत्पादों पर भी उनके नाम, प्रयोग विधि आदि हिंदी तथा भारतीय भाषाओं में छपे रहते हैं। परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर व्यापार के प्रसार के फलस्वरूप कई बड़ी कम्पनियां अपने कार्य का काफी भाग अब अंग्रेजी में करने लगी हैं, क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की भाषा लगभग अंग्रेजी है और भारत में अंग्रेजी पढ़े लोगों की उपलब्धता में कमी नहीं आई है। साथ ही एक तकनीकी अविष्कार अर्थात् कम्प्यूटर ने हिंदी के प्रयोग को व्यापरिक (तथा काफी हद तक सरकारी) क्षेत्र में उन्नति की बजाए अवनति की ओर धकेला है। बड़ी-बड़ी फर्में अब लगभग अपना सारा कार्य कम्प्यूटर द्वारा करती हैं और वह अधिकांश अंग्रेजी में होता है। वास्तव में दोष कम्प्यूटर का नहीं है। अधिकांश लोग यही समझते हैं कि कम्प्यूटर पर काम अंग्रेजी में हो सकता है। वे इस तथ्य से परिचित नहीं हैं कि जिस्ट तकनीक तथा उपलब्ध साफ्टवेयर के माध्यम से कम्प्यूटर पर लगभग हर प्रकार का काम आसानी से हिंदी में किया जा सकता है। इन बड़ी-बड़ी फर्मों का माल तो बिकता ही है । अत: आवश्यकता इस बात की है कि उनसे सम्पर्क स्थापित कर उन्हें बताया जाए कि कम्प्यूटर पर हिंदी तथा भारतीय भाषाओं में काम करने की सुविधाएं उपलब्ध हैं और उन्हें ऐसे कम्प्यूटर तथा साफ्टवेयर के प्रयोग की ओर आकर्षित तथा प्रेरित किया जाए। इस महत्वपूर्ण कार्य में स्वयं सेवी संस्थाएं यदि जुट कर अपनी भूमिका निभाएं तो निकट भविष्य में स्थिति में काफी सुधार आने की संभावना है।

—48-सी, एम. आई. जी. फलैट, राजौरी गार्डन, नई दिल्ली - 110027

2319 HA/98—4B

सरल हिन्दी के अर्थ

—जगन्नाथ

यह एक फैशन सा हो गया है कि जब भी हिन्दी के प्रयोग संबंधी कोई समारोह होता है तो उसमें भाषण देने वाले अनेक महानुभाव और राज्य-अधिकारी हिंदी को सरल बनाने का उपदेश भी दे डालते हैं। वे इस बात के सभी पक्षों पर विचार नहीं करते और इस प्रकार अनजाने में हिंदी के प्रयोग को निरुत्साहित करते हैं। मजे की बात यह है कि अंग्रेजी को सरल बनाने की बात कोई नहीं करता। कई व्यक्ति, जो हिंदी के प्रति दुर्भावना रखते हैं, जान-बूझकर हिंदी के दुरुह अथवा कठिन होने की बात दोहराते रहते हैं और अनेक हिंदी-प्रेमी भी उनके इस कुप्रचार से प्रभावित होकर उसी प्रकार सोचने लगते हैं। जब उनसे पूछा जाता है कि "सरल हिंदी" के अर्थ क्या हैं ? उसकी परिभाषा क्या है ? तो वे प्राय: उत्तर देते हैं कि दिल्ली के चान्दनी चौक बाजार में बोले जाने वाली भाषा सरल भाषा कही जा सकती है क्योंकि उसको सभी समझ सकते हैं। विचार करने की बात यह है कि बाजार में बोले जाने वाली भाषा में बहुत ही सीमित शब्दों का प्रयोग होता है और चान्दनी चौक में ही स्थित कुछ वकीलों, चार्टर्ड एकाउन्टेंटों के कार्यालयों में बोले जाने वाली भाषा बाजारू भाषा से एकदम भिन्न हैं। इस प्रकार जब भाषा का प्रयोग विस्तृत और तकनीकी क्षेत्र में किया जाता है तब उसमें शब्दावली भी पर्याप्त अधिक होती है और प्रत्येक शब्द का एक सुनिश्चित अर्थ भी होता है। कई व्यक्ति हिंदी में अंग्रेजी अथवा उर्दू, फारसी के शब्दों के अनावश्यक मिश्रण को ही सरल हिंदी कहते हैं। पिछले 200 वर्षों के निरन्तर प्रयास के बावजूद सरकारें दो प्रतिशत से अधिक व्यक्तियों को समझने लायक भी अंग्रेजी नहीं सिखा सकी हैं। तब 98 प्रतिशत को अंग्रेजी-मिश्रित शब्दों की भाषा कैसे सरल लगेगी यह विचारणीय प्रश्न है। अंग्रेजी का पक्ष लेने वालों की दृष्टि में केवल वे दो प्रतिशत व्यक्ति ही "सभी व्यक्ति" बन जाते हैं।

हम यह नहीं कहते कि हिंदी में जो विदेशी शब्द प्रचलन में आ गए है उनका बहिष्कार किया जाए। बटन, कोट, चाकू, छुरी, कैंची, आदि घरों में प्रयोग किए जाने वाले शब्द अन्य भाषाओं से आए हैं किन्तु ये शब्द हिंदी के ही हो गए हैं। इसी प्रकार, बस, टिकिट, स्टेशन, प्लेट-फार्म आदि भी हिंदी के ही शब्द बन गए हैं। किन्तु जान-बूझकर हिंदी में अंग्रेजी अथवा फारसी के शब्दों की सरलता के नाम पर घुस-पैठ अवांछनीय है। दिल्ली से प्रकाशित सबसे बड़ी संख्या वाले हिन्दी के पत्र दैनिक ने अपने नाम के साथ "टाइम्स" जोड़ रखा है। उसी के सान्ध्य संस्करण में भी "टाइम्स" जोड़ दिया गया है। दूरदर्शन और सिनेमा विशेष रूप से इस दोष के दोषी हैं। निश्चित-कालीन के स्थान पर बेमियादी, विश्वास को यकीन, खेद को अफसोस, प्रसन्नता को खुशी, घृणा को नफरत, सहन को बर्दाश्त, स्वीकार को कबूल, वेशभूषा को पोषाक, आशा को उम्मीद, प्रबंध को इन्तजाम, आदि कहना सर्वथा त्याज्य है और हमें इस प्रवृत्ति से बचना चाहिए। प्रचलित सरल हिंदी शब्दों के स्थान पर अन्य भाषाओं के शब्दों के प्रयोग से यह मिथ्या धारणा बनती है कि हिंदी में शब्दों की कमी है। रिश्तेदारी के हिंदी शब्दों के स्थान पर अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग तो और भी अधिक अवांछनीय है, क्योंकि अंग्रेजी शब्दों से रिश्ते की पूरी कल्पना भी नहीं हो पाती। ब्रदर-इन-ला के प्रयोग से यह स्पष्ट नहीं होता कि वह लाभ में रहने वाला, कुछ खोने वाला अथवा बराबर का रिश्तेदार है जबकि हिंदी में, बहनोई, साला और सादू कल्पनाएं स्पष्ट हैं। अंकल शब्द से मामा, चाचा, ताऊ, फूफा, मौसा आदि शब्दों के अर्थ की सही कल्पना नहीं होती। इसी प्रकार ऑन्टी शब्द से मामी, चाची, ताई, मौसी, आदि शब्दों के अर्थ स्पष्ट नहीं होते। हमारे एक साथी डॉ० नारायण दत्त पालीवाल ने जिन्होंने हिंदी की अथक सेवा की है, अपने एक लेख "प्रशासनिक क्षेत्र में हिंदी माध्यम" में यहा तक लिख डाला है, कि :—

> "मेरी राय तो यह है कि मम्मी, डैडी, पापा आदि शब्दों को अब आत्मसात् कर लेना चाहिए। हम इनको हिंदी में भी अपना लें। इससे मानसिकता भी बदल जाएगी क्योंकि इससे अहित हो रहा है अपने सांस्कृतिक मूल्यों को, अपनी भाषा की पहचान को भूल रहे हैं। हमारा शब्द-कोश भी बढ़ जाएगा और प्रचलित शब्द सरल भी होगें। जन्मदिन में हम लोग केक तो काटते ही हैं, किसी बच्चे से पूछिए वह कभी नहीं कहेगा कि मेरा जन्म दिन है आज। वह यह कहेगा कि मेरा "हैप्पी बर्थ डे" है। हम भी "हैप्पी बर्थ डे टू यू" कहकर ही संतोष करते हैं। हम जो माता-पिता हैं, जो बड़े हैं जब हम ऐसा वातावरण अपने परिवार में नहीं पैदा कर सकते हैं जहां हिंदी चले, तो हम सरकारी दफ्तरों से यह आशा क्यों करते हैं ?"

पालीवाल जी का आदर करते हुए भी, खेद है कि उनसे सहमत नहीं हो पा रहे हैं। एक सुसंस्कृत, सुश्रुत, सुभाषित, सक्षम और सर्वांग-सुन्दर वैज्ञानिक भाषा में अत्यंत अवैज्ञानिक, अर्थहीन और असंस्कृत शब्दों की अनावश्यक भरमार करके हम उसका कोई सुधार विकास या संस्कार नहीं कर रहे होंगे, वरन् उसे प्रदूषित ही कर देंगे। यह भाषायी और सांस्कृतिक

प्रदूषण प्राकृतिक प्रदूषण से भी अधिक भयंकर है और हमें पूरी शक्ति से घरों में हो रहे इस सांस्कृतिक हमले से अपने आपको बचाना है।

हिंदी का अब सभी विधाओं में विकास हो रहा है और उसमें नए-नए शब्दों की आवश्यकता पड़ती है। उन नए शब्दों को लेकर कुछ व्यक्ति हिन्दी के कठिन होने की बात करते हैं। पर बात ऐसी नहीं है। शब्द जब प्रचलन में आ जाते हैं और कुछ समय के बाद जाने पहचाने हो जाते हैं तब वे सरल लगने लगते हैं। युद्ध के दौरान अंग्रेजी के शब्द कोटा, परमिट, राशन, ब्लैक-आउट, आदि हिन्दी में रच-पच गए तो हिन्दी के नए शब्द भी कुछ काल के बाद सरल लगने लगेंगे।

वास्तव में भाषा का मुख्य तात्पर्य यह है कि जो भी हम लिख रहे हैं अथवा बोल रहे हैं वह दूसरों की समझ में आ जाए। अत: लिखते अथवा बोलते समय हमें दूसरों की सुविधा का भी ध्यान रखना है। हमें यह भी देखना है कि दूसरे व्यक्ति सीमित क्षेत्रों के अथवा सीमित संख्या में हैं, या बड़े क्षेत्र के और बहुत बड़ी संख्या में। जो वहां प्रस्तुत किया जा रहा है वह किस अभिप्राय से है। यदि इस कसौटी पर चलें तो दूरदर्शन अथवा किसी पुस्तक में व किसी परिपत्र में जो बात कही जाने वाली है वह सारे देश के लिए हो तो संस्कृत निष्ठ हिंदी अधिकतम लोगों की समझ में आ जाने से सरल कहलाएगी। क्योंकि भारत के दक्षिण और पूर्व की भाषाओं में संस्कृत शब्दों का बाहुल्य है। किन्तु यदि कोई बात हमें उत्तर भारत के अथवा पंजाब के व्यक्तियों को कहनी है और उनमें भी शहरों के व्यक्तियों को विशेषत: कहनी है तो कुछ फारसी मिश्रित भाषा का प्रयोग भी किया जा सकता है। लेखक को एक केन्द्रीय मंत्री प्रो. शेर सिंह के साथ चुनाव के अवसर पर सारे भारत का भ्रमण करना पड़ा । तो उनके भाषणों में संस्कृत निष्ठ हिंदी भाषा अथवा उर्दू मिश्रित भाषा का प्रयोग इस कसौटी पर होता था और सभी जगह जनता उन्हें समझ लेती थी। उन्होंने कहीं भी निर्वाचन के लिए अंग्रेजी में भाषण नहीं दिया, क्योंकि उसे समझने वाले मात्र दो प्रतिशत ही मुश्किल से हैं।

निश्चित क्षेत्र की निश्चित शब्दावली :

प्रत्येक विषय की अपनी-अपनी शब्दावली होती है। कानून की तकनीकी शब्दावली होती है। कानून की तकनीकी शब्दावली को डॉक्टर व इंजीनियर नहीं समझ सकते । एम.बी.बी.एस. की अंग्रेजी पुस्तकों को अंग्रेजी में एम.ए. पास व्यक्ति भी नहीं समझ सकता। तकनीकी शब्दावली यत्नपूर्वक सीखनी पड़ती है। यही बात हिंदी में भी लागू होती है। इसे सीखने के लिए कोई और सरल मार्ग नहीं है। शब्दावली भी प्रयत्नपूर्वक सीखनी होगी। इस क्षेत्र में चांदनी चौक की भाषा काम नहीं देगी। इस संदर्भ में एक बात बिना विचारे सहज ही यह कह दी जाती है कि अंग्रेजी तकनीकी शब्दावली का प्रयोग हिंदी में भी कर लिया जाए। किन्तु इसकी भी एक सीमा है। एक जवान बिना बच्चों वाली विधवा से तो विवाह करने के लिए शायद सहमत हो जाए। किन्तु यदि उससे कहा जाए कि बच्चों वाली विधवा से विवाह कर ले तो वह राजी नहीं होगा। कानून अथवा लॉ शब्द को प्राय सभी समझ लेते हैं किन्तु इनसे बनने वाले और बहुत से शब्द हैं जो हिंदी की प्रकृति के अनुकूल नहीं हो सकते। इसलिए कानून या लॉ के बजाय विधि शब्द का प्रयोग करना पड़ता है, क्योंकि उससे अन्य अनेक रूप भी हिंदी व्याकरण के अनुसार बनाए जा सकते हैं, उदाहरण के लिए विधान, विधायक, विधेयक, विधेय, विधि-विधान, विधि-सम्मत आदि। यदि हम एक शब्द लॉ अथवा कानून लें तो उसके परिवार के अन्य बहुत से अंग्रेजी या फारसी के शब्द भी लेने पड़ेंगे जो वांछनीय नहीं हैं।

शब्दावली निर्माण

भारत सरकार का तथा देश के सभी भाषाओं के विद्वानों का यह सर्व-सम्मत मत भी है कि सभी भारतीय भाषाओं को आपस में निकट लाने के लिए उनमें सामान्य (साझली) तकनीकी शब्दावली का प्रयोग किया जाए। इस निमित्त भारत सरकार के तकनीकी शब्दावली आयोग में सभी भारतीय भाषाओं में ऐसे विद्वान सदस्य हैं जिन्हें अपनी भाषा के अतिरिक्त अंग्रेजी भाषा और अन्य कुछ भारतीय भाषाओं का भी ज्ञान है। आपस में काफी विचार करने के बाद वे ऐसे तकनीकी शब्दों का चयन करते हैं जो भारत की अधिकतम भाषाओं में हैं। भले ही वे शब्द हिंदी में न हों। इस प्रकार अन्य भाषाओं के तकनीकी शब्द जब हिंदी में प्रयोग किए जाते हैं तो हिंदी वालों को भी वे शब्द कठिन लगने लगते हैं। किन्तु सभी भाषाओं को साथ लेकर चलने की दृष्टि से हिंदी वालों को वे कुछ शब्द सीखने ही पड़ेंगे। इसके लिए तकनीकी शब्दावली आयोग को अथवा केन्द्रीय हिंदी निदेशालय को दोष देने की बजाय दोष देने वालों को कुछ परिश्रम करके इन शब्दों को सीखना चाहिए।

हिन्दी क्यों कठिन बन जाती है

यदि भाषा अनूदित होगी तो नैसैर्गिक भाषा की अपेक्षा कठिन होगी। हिंदी से यदि अंग्रेजी में अनुवाद किया जाए तो वह मूल अंग्रेज़ी की अपेक्षा कठिन लगने लगेगा। अंग्रेज़ी भाषा से हिंदी भाषा में अनुवाद होने से भी हिंदी भाषा कठिन लगने लगती है। किन्तु यदि अनुवाद में कुछ मौलिक नियमों का ध्यान रखा जाए तो अनूदित भाषा भी पर्याप्त सरल हो सकती है। अनुवादकों को उस विषय का ज्ञान होना चाहिए जिसका वे अनुवाद कर रहे हैं। भारत सरकार के हिन्दी निदेशालय में हिंदी पाठ्य पुस्तकों का निर्माण करने वाली समिति में उस विषय के प्राध्यापक, प्रोफेसर अथवा विशेषज्ञ के साथ-साथ हिंदी का एक अच्छा अनुवादक रखा जाता है जो विशेषज्ञ से प्रत्येक शब्द या भाव को पूरी तरह समझ कर उसका अनुवाद कर सके। कई बार विशेषज्ञ ही मिली जुली भाषा में हिंदी में अनुवाद करता है और फिर हिंदी अनुवादक व्याकरण और वर्तनी आदि की दृष्टि से उसमें सुधार कर देता है। इस प्रकार अब प्राय: सभी विषयों की लाखों की संख्या में तकनीकी शब्दावली और विश्वविद्यालय स्तर की पाठ्य पुस्तकों का निर्माण हो चुका है।

कई मंत्रालयों में संसद अधिवेशन के समय अंग्रेजी से अनुवाद का कार्य शीघ्रता से और अत्यन्त सीमित समय में करना पड़ता है जिससे कि

समय पर संसद में द्विभाषी रूप में कागज प्रस्तुत किए जा सकें। ऐसी स्थिति में अनुवाद का स्तर घटिया अथवा कठिन होना स्वाभाविक है। यदि मूल रूप से ही संसद में प्रस्तुत किए जाने वाले कागज हिंदी में तैयार किए जाएं और हिंदी अधिकारी से उनकी वैटिंग करा ली जाए तो उत्तम हो। यही बात सरकारी कोडों, प्रक्रिया संहिताओं आदि के अनुवाद पर लागू होती है। सरकार की ओर से हिंदी में एम.ए. और अंग्रेजी में निपुण अनुवादकों को इतना वेतन भी नहीं दिया जाता जितना सचिवालय के केवल स्नातकोतर सहायकों को दिया जाता है। फिर अच्छे अनुवादक की आशा करना कहां तक उचित है, इसका पाठक स्वयं अनुमान लगा सकते हैं। अच्छा अनुवाद कैसे बने जिससे भाषा सरल और स्वाभाविक लगने लगे, यह स्वयं एक स्वतंत्र लेख का विषय है।

सरकारी आन्तरिक कामकाज की भाषा

सरकारी कार्यालयों में हिंदी में काम आरम्भ करने वाले अधिकारी और कर्मचारी यथा-आवश्यकता अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग कर सकते हैं। उन्हें शब्दों के लिए अटकना नहीं चाहिए और यदि वे आरम्भ में ही शुद्ध हिन्दी लिखने की सोचेंगे अथवा अंग्रेजी शब्दों के हिन्दी पर्याय ढूंढ़ेंगे तो जोश में एक दो बार तो वह ऐसा कर जायेंगे किन्तु बाद में धैर्य खो बैठेंगे। सरकारी आदेश भी है कि यथा-आवश्यकता टिप्पणी लिखने में मिली-जुली भाषा का प्रयोग किया जा सकता है। धीरे-धीरे उन्हें हिंदी के शब्द स्वयं सूझते जायेंगे। टिप्पणी लिखने वालों को अपने विषय का पूरा ज्ञान होता है। इसलिए वे अपने भावों को हिंदी में भी भली-भांति व्यक्त कर पायेंगे। अनावश्यक अनुवाद से बचा जाना चाहिए। किन्तु इसके अर्थ यह नहीं है कि वे कार्यशालाओं में जाकर कभी हिंदी का अभ्यास करें ही नहीं। इस संदर्भ में महात्मा गांधी की निम्न उक्ति उद्धृत करना आवश्यक प्रतीत होता है जिससे कहने का आशय पूरी तरह स्पष्ट हो जाए :

> "यदि हिंदी बोलने में भूलें हों, तो भी उनकी कतई चिन्ता नहीं करनी चाहिए। भूलें करते-करते भूलों को सुधारने का अभ्यास हो जाएगा, पर भूलों की चिन्ता न करने की सलाह आलसी लोगों के लिए नहीं, वरन् मुझ जैसे भाषा सीखने के इच्छुक अव्यवसायी सेवकों के लिए है।"

हिंदी के सरलीकरण के संदर्भ में दो विद्वानों के निम्नलिखित उद्धरणों को भी ध्यान में रखना उपयोगी होगा :—

> "आजकल सरल हिंदी के संबंध में काफी चर्चा हो रही है और इस संबंध में जन साधारण में और शिक्षित समाज में भी काफी मतभेद हैं। उत्तर में जिस भाषा को सरल या आसान समझा जाता है, वह दक्षिण के पढ़े-लिखे आदमी के लिए दुर्बोध बन जाती है। संस्कृत निष्ठ भाषा समझने में किसी को सुविधा होती है तो किसी को उर्दू की रोजमर्रे की ताजगी में अधिक आनन्द आता है। प्रत्येक व्यक्ति का अपना पर्यावरण होता है। भाषा भी पर्यावरण का एक अंग है। अपनी मातृभाषा के जिस पर्यावरण में एक व्यक्ति चलता है, उसी को लेकर वह दूसरी भाषा के क्षेत्र में भी प्रवेश करता है।" —डॉ. पांडुरंग राव

> "संस्कृतनिष्ठ हिंदी कठिन है, यह मत है उर्दूदां लोगों का। हिंदी-उर्दू के व्याकरण में कोई अंतर नहीं, अत: इस वर्ग का असंतोष व्याकरण को लेकर नहीं, शब्द भंडार को लेकर है। इसके लिए देश, जनता, प्रजातंत्र जैसे शब्द कठिन हैं, मुल्क, अवाम, जम्हूरियत सरल हैं।
>
> हिन्दी को कठिन कहने वाला दूसरा वर्ग अंग्रेजीदां लोगों का है। इन्होंने अंग्रेजी पढ़ी ही इसलिए कि वह शासन की भाषा रही। ये दफ्तर की भाषा की बनी बनाई लीक पर चलने के आदी हो गए हैं। हिंदी शब्दों के प्रयोग में जो थोड़ा-बहुत प्रयास अपेक्षित है, वह उन्हें कष्टकर प्रतीत होता है। इनके लिए देश/मुल्क, जनता/अवाम, प्रजातंत्र/जम्हूरियत सभी कठिन हैं, कन्ट्री, पब्लिक, डिमोक्रेसी ही आसान है, इसलिए उनका आग्रह है कि अंग्रेजी के शब्द यथावत् हिंदी में अपना लिए जाएं। इस प्रकार कठिनाई एक नहीं, जो अरबी-फारसी के शब्दों को सरल मानते हैं, उन्हें अंग्रेजी शब्दों से संतोष नहीं होगा और जो अंग्रेजी शब्दों के अभ्यासी हैं, उनकी कठिनाई अरबी-फारसी शब्दों से दूर नहीं होगी।
>
> इस तथ्य की उपेक्षा नहीं की जा सकती कि भारत की सभी भाषाएं संस्कृतनिष्ठ हैं। इसलिए राजभाषा हिंदी की संस्कृत निष्ठा उसकी अखिल भारतीय बोधगम्यता का अनिवार्य पक्ष है।"
>
> —आचार्य देवेन्द्र नाथ शर्मा

उपर्युक्त डॉ. राव और आचार्य शर्मा के उद्धरणों के संदर्भ में हमें प्रसिद्ध सांसद श्री हनुमन्तैया की वह बात याद आती है जो उन्होंने संसद में पं. जवाहर लाल नेहरू को सम्बोधित करते हुए कही थी कि हमें आपकी हिंदी बहुत कम समझ में आती है किन्तु श्री प्रकाशवीर की संस्कृत निष्ठ हिंदी पूरी तरह समझ में आती है। भारत के संविधान में भी हिंदी के लिए आवश्यकता पड़ने पर मुख्यत: संस्कृत में और गौणत: अन्य भाषाओं से शब्द लेने की व्यवस्था है।

विश्वास है कि विषय से संबंधित सभी पहलुओं पर प्रकाश डालने वाले उपर्युक्त विवेचन से हिंदी का मार्ग प्रशस्त होगा।

—ए-26, रोहित कुंज, डा० रानी बाग, दिल्ली-110034

भारत रत्न कलाम साहब

—राजेन्द्र प्रसाद

कलाम साहब को इस देश की जनता ने मिसाइलमैन के नाम से मशहूर कर दिया है। उन्होंने आधुनिक प्रक्षेपास्त्रों को देश में बनाने की जरूरत को महसूस करते हुए रक्षा अनुसंधान विकास संगठन की अनेक प्रयोगशालाओं और उनमें कार्यरत वैज्ञानिकों और तकनीकी कर्मचारियों को एक अनूठे प्रोग्राम के जरिए इस तरह जोड़ दिया कि एक साथ पांच अलग-अलग किस्म के अत्याधुनिक प्रक्षेपास्त्रों का विकास एक साथ शुरू हो गया। इन प्रक्षेपास्त्रों में इस्तेमाल में आने वाली कई प्रकार की टैक्नोलौजी का विकास देश की अनेक प्रयोगशालाओं, औद्योगिक संगठनों तथा विश्वविद्यालयों में होने लगा है। एक अभूतपूर्व उत्साह और प्रेरणा के साथ हजारों लोग अपने-अपने कार्यस्थलों में कलाम साहब के नेतृत्व में नए अनुसंधान में लग गए और आधुनिक से आधुनिकतम टैक्नोलौजी के विकास में सफलता प्राप्त की है। हैदराबाद की रक्षा प्रयोगशाला में कलाम साहब खुद निदेशक रहे हैं। वहां इन टैक्नोलौजियों को अलग-अलग प्रक्षेपास्त्रों के डिजाइन में इस्तेमाल किया है और उनके अनेक सफल परीक्षणों के बाद पृथ्वी जैसे प्रक्षेपास्त्र तैनाती के लिए तैयार हैं; तथा अग्नि जैसा प्रक्षेपास्त्र बनने में अब देरी नहीं हैं। इस सफलता से प्रोत्साहित होकर रक्षा वैज्ञानिक अगली सदी के प्रक्षेपास्त्रों के डिजाइन तैयार करने में जुटे हुए हैं।

प्रोजेक्ट मैनेजमेंट कलाम साहब की बहुमुखी प्रतिभा का एक मुख्य अंग है। किसी भी अत्याधुनिक प्रक्षेपास्त्र प्रणाली के विकास में कलाम साहब एक ऐसे प्रबंधन की व्यवस्था करते हैं जिसके अन्तर्गत सीमित समय और संसाधनों का सही प्रयोग करके इन परियोजनाओं में जुड़े हुए लोगों में एक अभूतपूर्व तालमेल पैदा होता है तथा किसी भी कठिन तकनीकी तथा प्रबंधकीय समस्या को हल करने में इस तरह मार्गदर्शन करते हैं कि वह समस्या नहीं लगती। सारी दुनिया इनको मिसाइलमैन के नाम से जानती है। बहुत सारी रक्षा प्रणालियों और प्रौद्योगिकी के सफल विकास में कलाम साहब के नेतृत्व की एक अहम भूमिका रही है और इससे देश आत्मनिर्भरता के रास्ते में बहुत आगे पहुंच गया है। कलाम साहब की जिज्ञासा प्रबल, प्रखर और गम्भीर होते हुए एक अनंत प्यास की तरह है।

आजादी से पहले वैभवशाली होते हुए भी भारत में औद्योगिक विकास न के बराबर था। वह ऐसा समय था जब सारे देशवासियों का लक्ष्य राजनैतिक स्वतंत्रता प्राप्त करना था। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी ने आम जनता में अंतर्निहित आत्मसम्मान की ताकत को एक मजबूत हथियार बना कर उसी के सहारे ब्रिटिश सांम्राज्य जैसे ताकतवर विदेशी शासक को भारत से उखाड़ फैंका था। पराधीनता की जंजीर को तोड़ कर देश स्वाभिमान के साथ प्रगति के रास्ते में आगे बढ़ा और इन 50 सालों में एक समृद्ध औद्योगिक राष्ट्र बन कर आगे आया है। भाभा और साराबाई जैसे वैज्ञानिक नेतृत्व से देश में विकसित होते हुए आधुनिक प्रौद्योगिकी को परिपक्वता की सीमा में ले जाने के लिए कलाम साहब ने एक नया सपना देखा। गांधी जी की तरह आम भारतीय औद्योगिक कामगार में नवीनतम टैक्नोलौजी में समावेश करने की ताकत को कलाम साहब ने पहचाना। स्वाधीनता की इस 50वीं वर्षगांठ पर एम टी सी आर जैसी अनेक विदेशी अड़चनों को पार करते हुए देश को इन्होंने टैक्नोलौजी के क्षेत्र में आजादी दिलाई है। अब देश में विकसित हो रहे हर किस्म के तकनीकी प्रयासों के साथ कलाम साहब जुड़े हुए हैं और एक सफल, समृद्ध और सक्षम टैक्नोलौजी पालिसी को विकसित किया है इसके सहारे भारत आज एक प्रभावशाली राष्ट्र की भूमिका अदा कर पाया है और अन्तर्राष्ट्रीय मैदान में एक आक्रामक खिलाड़ी की तरह उतरा है।

कलाम साहब कभी न खत्म होने वाले प्रयासों के स्रोत हैं अब वे इस महत्वपूर्ण मोड़ पर देश को विकासशील राष्ट्र से एक समृद्ध आत्मनिर्भर विकसित राष्ट्र बनाने के प्रयास में जुटे हुए हैं। औद्योगिक विकास के साथ देश को आर्थिक स्वतंत्रता दिलाना उनका लक्ष्य है। सरकार की उदारीकरण नीति और बहुराष्ट्रीय उद्योगों के आगमन से आर्थिक क्षेत्र में जो उथल-पुथल पैदा हुई है उससे भारतीय उद्योगपति एक नई दिशा की तलाश में हैं। कलाम साहब इस दिशा निर्देशन में एक महत्वपूर्ण योगदान कर रहे हैं।

ऐसे महानुभाव व्यक्तित्व से मुलाकात किसी के लिए एक अविस्मरणीय अनुभव होता है। इनसे मिलना एक सुखद यादगार बन जाता है, क्योंकि उनके व्यक्तित्व में नम्रता, सरलता और अपनापन कूट-कूट कर भरा हुआ है। उनका व्यक्तित्व प्रभावशाली तो है ही लेकिन इतनी सारी उपलब्धियों के होते हुए भी वे आम आदमी की तरह ऐसे सहजभाव से मिलते हैं कि विश्वास ही नहीं होता कि ये वही मशहूर शक्तिशाली मिसाइलमैन हैं। रक्षा प्रणालियों में लगे आधुनिक टैक्नोलौजी को इन्होंने आम आदमी के दुख दर्द दूर करने में इस्तेमाल करने के लिए एक बायोमेडिकल सोसाइटी का गठन किया है। डाक्टरों के सहयोग से रक्षा वैज्ञानिकों ने कार्बन-कार्बन कम्पोजिट और लेजर जैसे आधुनिक तकनीकी का उपयोग करके आम लोगों को रोगनिदान, पुनर्वास तथा चिकित्सा सहायता प्रदान की है। पर्यावरण और पशु-पक्षियों के प्राकृतिक आवास के संरक्षण में उनकी गहरी रुचि है। अपनी अन्त:करण की आवाज को सुनकर उसे समझ कर एक सच्चा इंसान बनने के लिए वे सदा प्रयासरत रहते हैं। जीवन उनके लिए एक खोज है अपनी आन्तरिक भावनाओं को कविता में व्यक्त करने की उन्होंने कोशिश भी की है। संगीत से भी वे दूर नहीं है। वे योगाभ्यास से अपना शारीरिक और मानसिक संतुलन कायम रखते हैं। उनके साथी हैरान रह जाते हैं कि कलाम साहब में इतनी शक्ति कहां से आती है। कई तो सोचते है कि वे उनकी अविवाहित जीवन की देन है। कलाम साहब कभी-कभी सच को जाहिर कर देते हैं। अपने सहयोगियों की बैठक में नये साल (1998) में अपने विचारों को व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा, 'कोई वरिष्ठ वैज्ञानिक जब यह सोचने लगता है कि किसी टैक्नोलौजी का विकास असंभव है तो उसे बदल दो और उसके स्थान पर एक युवा वैज्ञानिक को वो जिम्मेदारी सौंप दो।' कलाम साहब किसी भी चीज को असंभव नहीं समझते। यही हार न मानने वाली सोच और सतत प्रयास उन्हें कार्यरत रखता है। यही आत्मिक शक्ति उनके व्यक्तित्व में प्रकट हो गयी है और इसी ने कलाम साहब को एक आम इंसान से भारत रत्न बना दिया है।

तकनीकी अधिकारी ए, राजभाषा निदेशालय, वेस्ट ब्लाक 8, विंग-5, आर के पुरम, दिल्ली-66

लेखक बनाम अनुवादक : ग्युंटर ग्रास की जर्मन रचना ''त्सुंगे त्साइगन'' के हिंदी अनुवाद का विश्लेषण

—ए. एल. मेहता

सामान्यत: माना जाता है कि साहित्यिक रचनाओं के अनुवाद की क्षमता लेखकों/कवियों में ही होती है और वही मूल रचना की बारीकियों को समझने और लक्ष्य भाषा में किये गये अनुवाद के साथ न्याय कर पाते हैं। यदि सही दिशा में अर्थात् मातृभाषा में अनुवाद की बात की जाती है तो काफी हद तक इस मत को सही माना जायेगा, क्योंकि इस तथ्य को विश्व में समय की कसौटी पर परखा भी जा चुका है। चूंकि यह अपेक्षा की जाती है कि लेखक को अपनी मातृभाषा पर, जिसमें वह मूल साहित्य-सृजन करता है, पूर्ण अधिकार होगा, अत: यह अपेक्षा रखना भी गलत नहीं होगा कि स्रोत भाषा की रचना से एक पठनीय रचना का सृजन होगा। ''अनुवाद की कुंजी अंतत: समस्याओं का समाधान करने और अपनी मातृभाषा में लिखने में है'', यह पीटर न्यूमार्क का कथन है; और अपनी मातृभाषा में किसी कवि अथवा लेखक से बेहतर और कौन लिख सकता है, बशर्ते कि उसका स्रोत भाषा और संस्कृति पर भी उतना ही अधिकार हो, जितना उसे अपनी मातृभाषा पर है, वरना लक्ष्य भाषा में किये गये अनुवाद में खामियां रह जायेंगी, विशेषकर उस स्थिति में जब मूल और लक्ष्य भाषाएं समनुरूप न हों।

इस निबंध में हम एक यूरोपीय और एक भारतीय भाषा पर चर्चा करने वाले हैं, जो समनुरूप नहीं हैं। काफी लंबे अर्से से गैर-अंग्रेजी यूरोपीय साहित्य भारतीय पाठकों को अंग्रेजी की छलनी से छन कर मिलता रहा है। यद्यपि अन्य अनुवादों से हुए अनुवादों में अंतर्भूत त्रुटियां होंगी ही, तथापि भारतीय पाठकों तक गैर-अंग्रेजी साहित्य पहुंचाने का यही एक साधन था। कई बार तो अनुवादक इस तथ्य को स्वीकार कर लेते थे कि फलां अनुवाद किसी अंग्रेजी अनुवाद का अनुवाद है, परन्तु कई बार वे सत्य पर पर्दा डालने का प्रयास भी करते थे। यहां पर कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं, जो मुख्यत: जर्मन-हिन्दी साहित्यिक अनुवादों के क्षेत्र से हैं। 1939 में गेटे के ''फाउस्ट'' का अनुवाद प्रकाशित हुआ था, जिसके अनुवादक थे भोलानाथ शर्मा। उन्होंने यह स्वीकार करने में तनिक भी झिझक नहीं दिखाई कि उनके जर्मन भाषा के ज्ञान को किसी भी कसौटी पर सम्पूर्ण नहीं माना जा सकता। इस भारी कमी के बावजूद विदेशी साहित्य के अनुवाद के क्षेत्र में उनका पदार्पण एक स्वागत-योग्य कदम था, क्योंकि उस जमाने में जर्मन का ज्ञान रखने वाले हिन्दी-भाषियों की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। तत्पश्चात् बीसियों ऐसे अनुवादकों ने विदेशी भाषा साहित्य का हिन्दी में अनुवाद किया है और कर रहे हैं; उनमें से कइयों ने मूल रचना के शीर्षक का कहीं उल्लेख नहीं किया और कइयों ने मूल रचना के अंग्रेजी अनुवाद से अनुवाद करने के तथ्य को स्वीकारा है।

सत्तर और अस्सी के दशक में कुछ सुप्रतिष्ठित हिन्दी साहित्यकारों ने इस तरह के अनुवादों का उत्तरदायित्व उठाने की परम्परा आरंभ की, अनुवाद की भूमिका आदि में सूक्ष्म संकेतों के माध्यम से पाठक को यह एहसास दिया जाता था कि अनुवाद सीधे मूल भाषा से किया गया है। वास्तव में इस कार्यकलाप की नींव साठ के दशक में ही रख दी गई थी, जब धर्मवीर भारती द्वारा ''संकलित एवम् अनूदित'' एक बहुभाषी कविता-संग्रह ''देशान्तर'' भारतीय ज्ञानपीठ, काशी ने प्रकाशित किया था। अपनी भूमिका में उन्होंने लिखा था कि कविता स्वयं में एक सृजनात्मक प्रवृत्ति को प्रेरणा देती है और अनुवाद उस प्रेरणा की पराकाष्ठा है, परन्तु वहां एक समस्या का सामना करना पड़ता है, मूल रचना तथा अनुवाद के बीच की दीवारें बहुत ऊंची होती हैं और ऐसी स्थिति में सफल अनुवाद शब्दानुवाद नहीं हो सकता तथा शब्दानुवाद सफल अनुवाद नहीं हो सकता। भारती जी ने स्पष्ट शब्दों में नहीं लिखा कि उन्होंने अनुवाद मूल भाषा से किया है, परन्तु इस संदर्भ में उन्होंने संदेह की गुंजाइश नहीं रखी। इस संग्रह में उन्होंने 21 देशों की 161 कविताओं का अनुवाद किया था, इन देशों की भाषाएं थीं अंग्रेजी, स्पेनी, इतालवी, ग्रीक, तुर्की, जर्मन, नीग्रो (!), फ्रेंच, पुर्तगाली, रूसी तथा डच। ये अनुवाद मूल भाषाओं से किये गये थे या नहीं, यह बताना यहां अब आवश्यक नहीं रहता। बाद में ऐसे हिन्दी लेखकों की संख्या बढ़ती गई, जिन्होंने विदेशी भाषा साहित्य का हिन्दी में अनुवाद करने की ''परम्परा'' को आगे बढ़ाने का बोझ अपने कन्धों पर डाल लिया। अन्य भारतीय भाषाओं में भी लेखक इस जिम्मेदारी से चूके नहीं, यहां तक कि अमृता प्रीतम जैसी सम्मानित लेखिका ने भी ''छलनी भाषा'' का उल्लेख किये बिना पंजाबी में एक विदेशी भाषा का कविता-संग्रह प्रकाशित कर दिया। सूक्ष्म संकेत देने की बजाय लेखकों का रवैया अब निर्भीक होता जा रहा था। अब उन्होंने डंके की चोट पर लिखना शुरू कर दिया कि अनुवाद मूल भाषा से ही हुआ है। स्पष्टीकरण कुछ इस प्रकार थे : अनुवादक की विदेश-यात्राएं, मूल रचनाकार के साथ विचार-विमर्श, भारत स्थित विदेशी सांस्कृतिक केन्द्रों की जानी-मानी हस्तियों से उस के व्यक्तिगत संबंध इत्यादि।

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या वे लोग अपनी मातृभाषा में साहित्य के मूल भाषा से सीधे अनुवाद हेतु उपयुक्त हैं, जिन्हें मूल भाषा, साहित्य एवम् संस्कृति का ज्ञान है, परन्तु वे अपनी मातृभाषा में अनिवार्यत: साहित्य-सृजन नहीं कर रहे। इसका उत्तर एक प्रतिष्ठित हिन्दी लेखक, कवि तथा समालोचक ने अक्तूबर, 1996 में जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में हुई

एक गोष्ठी में दिया था। उनके अनुसार, यह अत्यंत दुर्भाग्य का विषय है कि दशकों से इस देश में विदेशी भाषाओं का शिक्षण तो जड़ें पकड़ चुका है, परन्तु इस प्रणाली ने अभी तक एक भी ऐसे अनुवादक को जन्म नहीं दिया, जो विदेशी भाषा साहित्य का सीधे मूल भाषा से किसी भी भारतीय भाषा में अनुवाद कर सके; अत: साहित्यकारों द्वारा विदेशी भाषा साहित्य के भारतीय भाषाओं में अनुवाद के शुभकर्म को जारी रखने का कोई विकल्प नहीं था। उन्होंने स्पष्ट नहीं किया कि वह "सीधे अनुवाद" या "छने अनुवाद" की बात कर रहे थे। इस निबन्ध का लक्ष्य विदेशी भाषा के विद्वानों द्वारा किये गये अनुवादों का विश्लेषण करना नहीं है, अत: हम उक्त लेखक के कथन के दूसरे भाग पर अपना ध्यान केन्द्रित करेंगे, जिसमें उन्होंने साहित्यकारों की अनुवाद-क्षमता का उल्लेख किया है, उनके विदेशी भाषाओं के ज्ञान अथवा अज्ञान के बारे में कुछ कहे बिना।

बहुत कम ऐसे हिंदी लेखक हैं, जो किसी मूल विदेशी भाषा से सीधे हिंदी में अनुवाद करने का दावा करते हैं (विदेशी भाषाओं में हम अंग्रेजी को नहीं गिन रहे)। सुप्रसिद्ध हिंदी कवि, समालोचक तथा पत्रकार विष्णु खरे विदेशी भाषा साहित्य को हिंदी में प्रस्तुत करने वाले ऐसे ही एक बहुसर्जक अनुवादक हैं। 1960 तक उन्होंने अंग्रेजी साहित्य का हिन्दी में अनुवाद किया था। तत्पश्चात् उनका विदेशी भाषा साहित्य के अनुवाद के क्षेत्र में पदार्पण हुआ और उन्होंने हंगरी, जर्मन, फिन्नी, फ्रांसीसी, इतालवी तथा रेटो-रोमांश भाषाओं से "अनुवाद" किये। 1984 में उन्होंने "इस शताब्दी की पश्चिम जर्मन कविता" का संकलन तथा अनुवाद किया था, जिसका शीर्षक था, "हम चीखते क्यों नहीं"। उन्होंने स्पष्ट तो नहीं किया कि अनुवाद किस भाषा से किया गया था, परन्तु उन्होंने यह एहसास देने की कोशिश की है कि पूरी अनुवाद प्रक्रिया में कहीं न कहीं मूलभाषा का समावेश अवश्य है। उनके अनुसार इस संग्रह के अधिकांश अनुवाद द्विभाषीय स्रोतों से किये गये हैं, उनका अपना जर्मन का ज्ञान अल्प है, अत: द्विभाषी अनुवादों की अनुपस्थिति में अनुवाद विश्वसनीय न बन पाते। यह लिखने के बाद उन्होंने अनेक अनुवादों के प्रति आभार प्रकट किया है। 1991 में उनका "बीसवीं शताब्दी की स्विस कविता" का एक संग्रह प्रकाशित हुआ था, जिसका शीर्षक था, "हम इस धरती के नमक हैं"। जर्मन, फ्रेंच, इतालवी तथा रेटो-रोमांश भाषाओं की कविता के संकलन तथा अनुवाद पर नाम विष्णु खरे का है, परन्तु उन्होंने चार जर्मन-भाषी सम्पादकों, एक फ्रेंच-भाषी प्रकाशक, दो फ्रेंच-भाषी कवियों, दो कवियों सहित चार इतालवी भाषा-भाषियों, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय की दो "प्रतिभाशाली" भूतपूर्व छात्राओं, दो जर्मन कविता-संग्रहों तथा चार अंग्रेजी पुस्तकों के प्रति आभार प्रकट किया है। किसी रेटो-रोमांश भाषा-भाषी का कहीं उल्लेख नहीं है; इस संग्रह में इस भाषा की कविताओं का अनुवाद भी है और यह भाषा विश्व में केवल स्विटजरलैंड की एक प्रतिशत जनसंख्या द्वारा बोली जाती है। यदि विष्णु खरे इस भाषा की कविता का अनुवाद बिना किसी की सहायता के सीधे रेटो-रोमाश से करने में सफल हुए हैं तो यह भारत के लिए एक महान उपलब्धि होगी।

1994 में ग्युंटर ग्रास की प्रसिद्ध रचना "त्सुंगे त्साइगन" का विष्णु खरे द्वारा अनूदित संस्करण "जीभ दिखाना" हिंदी में प्रकाशित हुआ था, जिस पर स्पष्ट शब्दों में अंकित है, "मूल जर्मन से विष्णु खरे द्वारा अनूदित"। चूंकि अनुवादक ने यहां बिना किसी लाग-लपेट के दावा किया है कि रचना का मूल जर्मन से अनुवाद किया गया है तो उनके जर्मन भाषा के ज्ञान पर एक दृष्टिपात करना आवश्यक हो जाता है। प्राप्त जानकारी के अनुसार इसी बीच उन्होंने गेटे संस्थान से जर्मन भाषा का एक प्राथमिक पाठ्यक्रम किया था, अर्थात् उन्हें इस संदर्भ में साक्षर माना जा सकता है। पुस्तक के अन्त में "अनुवाद के बारे में" शीर्षक के अन्तर्गत उन्होंने जो लिखा है, उससे इस तथ्य की पुष्टि होती है। उन्होंने लिखा है कि उन्हें जर्मन अधिक नहीं आती तथा उन्होंने मूल रचना के अंग्रेजी और बंगला अनुवादों से काफी कुछ सीखा है। उनकी स्वीकृति कि हिंदी साहित्य के वे प्रेमी जिन्हें जर्मन आती है इसमें कई त्रुटियां पायेंगे, उनके जर्मन के अल्प-ज्ञान की पुष्टि करती है। भारत में विदेशी सांस्कृतिक दूतों के साथ उनके "बहुआयामीय तथा द्विसांस्कृतिक संवाद" से उनके मूलभाषा के अल्प-ज्ञान संबंधी तथ्य पर पर्दा नहीं पड़ता, परन्तु उनका दावा है कि इसी मूल भाषा से उन्होंने हिंदी में अनुवाद किया है।

प्रथमत:, मूल भाषा के न जानने से मूल रचना को समझना संभव नहीं होता, जिससे अर्थगत त्रुटियां होती हैं। यदि मूल रचना "त्सुंगे त्साइगन" और हिंदी अनुवाद "जीभ दिखाना" पर सरसरी तौर पर दृष्टि डाली जाये तो इस तरह की अनेक त्रुटियां मिलेंगी। अनूदित रचना में पाई गई कुछ त्रुटियों का यहां विश्लेषण किया गया है :

जर्मन : Indien, jenes Land also, in dessen Elend so viel Geheimnis hineingeredet wird, das als unergründlich, undeutbar gilt...

हिन्दी अनुवाद : भारत : जिसकी दुर्दशा में इतने रहस्यों की बकवासबाज़ी की जाती है, जो हर अगम्य को अज्ञेय मानती है,...

इस निबन्ध में लक्ष्य भाषा का परिवीक्षण बाद में किया जायेगा। यह भाषा अनुवादक की मातृभाषा है, उसके मूल सृजन की भाषा है, परन्तु इन हिन्दी उदाहरणों को उद्धृत करते हुए भाषा हर स्थान पर खटकती है। सकल रचना को पढ़ते हुए ऐसा लगता है कि अनुवादक रचना को पाठकों के लिए अपठनीय बनाने की जी तोड़ कोशिश में लगा हुआ है। लारेंस वेनूती प्रतिरोधक (resistive) अनुवाद का सुझाव देते हैं, जिसमें लक्ष्य भाषा में शैलीगत तथा अन्य असंगतियों के माध्यम से मूल रचना के "विदेशीपन" को उभारा जा सके। प्रारंभिक दृष्टि में यूं प्रतीत होता है कि एक अनोखी हिन्दी के प्रयोग के माध्यम से विष्णु खरे वेनूती के परामर्श पर चल रहे हैं, उनकी हिंदी विदेशी अधिक लगती है। परन्तु यदि उसकी तुलना मूल रचना से की जाये तो रहस्य प्रकट हो जाता है, और वह है अनुवादक द्वारा मूल रचना को अबोधगम्य पाना। उपरोक्त वाक्य में जो "अगम्य और अस्पष्ट" है, अनुवादक के लिए वह "हर अगम्य को अज्ञेय" मानना है। एक और स्थान पर Boses Bekenntnise (confessions) zur Diktatur ("बोस द्वारा तानाशाही के प्रति स्वीकारोक्ति") का "बोस की तानाशाहों से दोस्ती" के रूप में अनुवाद किया गया है। "noch immer" अर्थात्

"still" का अनुवाद है "हमेशा" "nichts" (nothing) "नहीं" बन जाता है। एक वाक्य Der Brahmane bringt Unmengen Reis und Dal, Dal und Reis in sich hinein का अनुवाद है "ब्राह्मण बड़ी मात्रा में दाल और भात, भात और दाल एकत्रित कर पाता है", जबकि इसका सही अनुवाद होगा, "ब्राह्मण बड़ी मात्रा में दाल और भात, भात और दाल पेट में ठूंसता जाता है।" in sich hinein वाले भाग को पूर्णरूपेण नजरअन्दाज कर दिया गया है और पूरा वाक्य स्वयं में निरर्थक होने का आभास देता है; पूरी रचना इस निरर्थकता के सूत्र में पिरोई लगती है। Bei Topfern, जो स्थैतिक है, और जिसका अनुवाद "कुम्हारों के पास" होना चाहिए था, उसका अनुवाद किया गया है "कुम्हारों की ओर" यदि अनुवाद को मूल रचना से तुलना किये बिना पढ़ा जाये तो लगता है कि खरे भाषा पर नये-नये प्रयोग कर रहे हैं, उदाहरणत: "काम करने की तंग इजाजत" जैसे मुहावरे को ले लें; यहां वह beschrankte Arbeitsgenehmigung ("Work-permit for a limited period") का अर्थ निकालने की कोशिश कर रहे हैं। उनका मूल संस्कृति के विद्वानों से कथित "बहुआयामीय एवम् द्विसंस्कृतीय" आदान-प्रदान यहां नाकारा हो गया जान पड़ता है, क्योंकि नाइडा की परिभाषा में, अनुवादक मूल संस्कृति के क्षेत्र की "भौतिक संस्कृति" से अनभिज्ञ है। Sorglos उनके लिए "बेफिक्र" नहीं हैं, बल्कि "बेखबर" हैं, Unbedingt "हर हालत में" की बजाय "बेहिचक" है। seit ("since") "से" नहीं, बल्कि "upto" ("तक") है, während "for"— ("के लिए") बन जाता है, "during" ("के दौरान") नहीं, जिस कारण "अपने इस्तीफे के लिए हट्टे-कट्टे,... जैसे अनर्गल वाक्यों का निर्माण होता है। Parade abnehmen का समानान्तर "परेड का निरीक्षण करना" या "सलामी लेना" नहीं, बल्कि "फौजियों का मुकाबला करना" दिया गया है, जो कि मूल रचना में दिये गये वर्णन का एकदम विपरीतार्थक है। यदि अनुवाद की तुलना मूल से न भी की जाये, तो भी एहसास होता है कि अनुवादक को अनुवाद में संसक्ति तथा सांतत्य की परवाह नहीं है, वर्ना ग़लत अनुवाद करते हुए वह अपने वर्णन में इस तरह की निरर्थकताओं को नजरअन्दाज नहीं करते। उदाहरणतया इस वाक्य Daud..., der... übers Jahresende aufs Land will (दाऊद, जो वर्ष के अन्त में देश जाने की योजना बना रहा है") का अनुवाद है, "दाऊद... पिछले देश जाने की योजना बना रहा है"। अब यह पाठक की कल्पनाशक्ति पर छोड़ दिया गया है कि वह बूझे कि "पिछला देश" कौन सा है और क्या है। अर्थगत त्रुटियों के नये-नये आयाम पेश किये गये हैं।

जर्मन : Auf halber Strecke abermals Pässe...,

हिन्दी अनुवाद : आधा रास्ता लेकिन और घाटियां

अनुवादक ने aber और mals को दो इकाइयों के रूप में लिया है, अत: "लेकिन और", चाहे जर्मन शब्दकोश में "mals" जैसे किसी शब्द का अस्तित्व ही नहीं है। यदि अनुवादक अपनी त्रुटि को इस तर्क का जामा पहनाना चाहे कि उसने तो केवल भावानुवाद किया है और "और घाटियों" तथा "पुन: घाटियों" में कोई वास्तविक अन्तर नहीं है, तो भी "लेकिन" लगाने का कोई औचित्य नहीं है, और फिर auf halber Strecke का अर्थ भी तो "आधे रास्ते पर" है, "आधा रास्ता" नहीं। पाठक के लिए एक संकटपूर्ण स्थिति उत्पन्न हो जाती है, जब वह "हम हवा के लिए लड़ते हैं" जैसे वाक्यों का अर्थ निकालने की कोशिश करता है। यह Wir ringen nach Luft का हिंदी अनुवाद है, जिसका सीधा-साधा अर्थ है "हम हांफ रहे थे"। एक और वाक्य का अवलोकन कीजिये, "एक छोटे कस्बे की केन्द्रीय गन्दी बस्ती के ऊपर एक बड़ा बोर्ड रोटरी क्लब बेचता है"। मूल रचना में यह इस तरह है, ...über den zentralen Slum einer Kleinstadt (kurz vor Poona) wirbt auf großer Fläche der Rotary Club यदि अनुवादक का मूल भाषा पर अधिकार होता तो इसे प्रतिरोधक अनुवाद समझ लिया जाता। जबकि "रोटरी क्लब का विज्ञापन" जैसे सरल मुहावरे से काम चल सकता था, अनुवादक ने "werben" का एकमात्र अर्थ "बेचना" लगाया है। "केन्द्रीय गन्दी बस्ती" अपने आप में बेमेल है। क्योंकि भारत में सरकारी या आधिकारिक तौर पर घोषित या प्रमाणित कोई केन्द्रीय गंदी बस्तियां मौजूद नहीं हैं, वास्तव में इसे "कस्बे के केन्द्र में स्थित गंदी बस्ती" होना चाहिए था। अनुवादक के जर्मन भाषा के "अल्पज्ञान" के कारण उन्होंने भाषा के वाक्य-विन्यास को भी समझने में भारी भूलें की हैं, जिसके परिणामस्वरूप अर्थगत त्रुटियां आई हैं :

जर्मन : Krähen : wie sie die Köpfe allwissend schräg halten.

हिंदी अनुवाद : कैसे वे सर्वदर्शी कोण में अपने सिर रखते हैं। इस वाक्य में न तो "schräg" संज्ञा है, न ही "allwissend" विशेषण हैं, वास्तव में "schräg" का अर्थ कोण तो है ही नहीं, बल्कि एक खास कोण है, तिरछा। इस वाक्य का सही अनुवाद होता, "कैसे वे सिर को तिरछा रखते हैं, जैसे सर्वज्ञ हों", अथवा "... सब जानते हों"। अनुवाद में जगह-जगह बेढंगी भाषा का प्रयोग किया गया है, जैसे "मैत्रीपूर्ण बलप्रयोग", जिसे पढ़ कर पाठक मूल लेखक का इरादा जानने के लिए माथा पीटते रहेंगे। Mit freundlichem Nachdruck werden wir in Hütten gebeten का हिन्दी समानान्तर है "मैत्रीपूर्ण बलप्रयोग के साथ हमें झुग्गियों में झांकने के लिए आमंत्रित किया जाता है।" लक्ष्य क्षेत्र की संस्कृति का जहां तक प्रश्न है, अनुवादक से, जो स्वयं एक जाने-माने साहित्यकार भी हैं, इस तरह की त्रुटियों की कल्पना भी नहीं की जा सकती। यदि वह मूल का तत्व समझ पाते तो सहज "आग्रह" शब्द का प्रयोग कर सकते थे। परन्तु बात यहीं समाप्त नहीं होती। संपूर्ण वाक्य इस तरह से है, Ein Viertel aller Erwachsenen hat Arbeit gefunden : als Sweeper oder Rickshawpuller. Mit freundlichem Nachdruck werden wir in Hütten gebeten." जिसका अनुवाद इस तरह है, "एक चौथाई बालिगों को काम मिल गया है; सफाईवालों या रिक्शावालों के मैत्रीपूर्ण बल-प्रयोग के साथ हमें झुग्गियों में झांकने के लिए आमंत्रित किया जाता है।" इस वाक्य के पूरे ढांचे को समझने में भूल की गई है। दो वाक्यों का विलय करके एक वाक्य बना दिया गया है, जिस की वजह से " बालिगों को सफाईवालों तथा रिक्शावालों के रूप में रोजगार मिल जाने" की महत्वपूर्ण सूचना को लापता कर दिया गया है। मूल रचना की वाक्य-संरचना की उपेक्षा के कारण जो भावार्थ की त्रुटियां आई हैं, वे

अनूदित रचना में तकरीबन हर पृष्ठ पर मिलेंगी। इस प्रवृत्ति पर प्रकाश डालने वाला एक अंतिम उदाहरण है, "Sturzfluten Wörter, Theater." का अनुवाद "शब्दों और नाटक की बौछार।" "शब्दों की बौछार" तो एक आम मुहावरा है, परन्तु "शब्दों और नाटक की बौछार" ने हिंदी पाठक को अवश्य हतप्रभ किया होगा। यदि अनुवादक ने "Wörter" तथा "Theater" के मध्य अर्धविराम को नजर-अंदाज नहीं किया होता तो वह सही अनुवाद कर पाते, जो हैं "शब्दों की बौछार, नाटक।"

जर्मन भाषा के "अल्पज्ञान" के कारण मूल रचना अनुवादक के लिए अबोधगम्य होने के फलस्वरूप जो अर्थगत त्रुटियां अनुवाद में आई, ये उनमें से कुछ थीं, परन्तु लक्ष्य भाषा में गलत समानार्थक शब्दों इत्यादि के चयन के कारण भी अनुवाद में अनेकानेक अशुद्धियां पाई जायेंगी, जिन्होंने त्रुटिपूर्ण शैली को जन्म दिया है। अलेग्जांदर फ्रेज़र टाइटलर के शब्दों में कहा जा सकता है कि यहां "मूल रचना की परिष्कृत सहजता की तुलना में अनुवाद की भद्दी बदमिजाजी को प्रस्तुत किया गया है," क्योंकि टाइटलर के अनुसार "शब्दों के अर्थों में अत्यंत सूक्ष्म भेदों के अनेकानेक उदाहरण, जिन्हें किसी भाषा को गहराई से जानने पर ही सीखा जा सकता है, परन्तु जिन के ज्ञान के बिना मूल रचना की विशिष्टताओं तथा अपनी भाषा में अनुकूल शब्दों में विभेदीकरण की समान क्षमता नहीं आती, और जिसके बिना अनुवादक दावा नहीं कर सकता कि उसके पल्ले अपने काम को अंजाम देने के लिए न्यूनतम अपेक्षित गुण भी है।" यहां अनुवादक अपना काम अंजाम देने में शोचनीय ढंग से असफल रहा है। अनुवाद मूलत: निर्णय लेने का, और सही निर्णय लेने का कार्य है; निर्णय ऐसा हो कि मूल रचना का कोई भी सूक्ष्म अन्तर मूल भाषा में विलुप्त न हो जाये। इस कार्य में शत प्रतिशत सफलता प्राप्त करना यदि सम्भव न भी हो तो अनुवादक को मूल रचना के नजदीक कहीं न कहीं तो पहुंचना है। इस लक्ष्य तक पहुंचने के लिए, जैसा पीटर न्यूमार्क ने कहा है, अनुवादक को सही पर्याय का चयन करने से पहले अक्सर स्वयं से तर्क-वितर्क करना पड़ता है। पर्याय का चयन करते समय लक्ष्य यहीं होना चाहिए कि गलती न हो। ज्यॉफरी किंगस्कॉट के शब्दों में, "अनुवादकों को गलती करने की अनुमति नहीं होती, इसीलिए हमें विशिष्ट माना जाता है।" अनुपयुक्त पर्याय का चयन तो भूल है ही, परन्तु जो पर्याय मूल पाठ के मुख्यार्थ तथा लक्ष्य भाषा के सम्पृक्तार्थ से बहुत परे हो, उसका प्रयोग करने में सावधानी बरतनी चाहिए, क्योंकि इससे शैली विकृत होने का भय रहता है। "जीभ दिखाना" इस तरह की विसंगतियों से भरपूर है। उदाहरण :

जर्मन : ...eine nackte...Frau..., die ausser von uns—so sieht es aus—von niemandem wahrgenommen wird.

अंग्रेजी : ...a naked woman, whom—so it seems—none else takes notice of

हिन्दी अनुवाद : औरत, जिसे ऐसा लगता है कि हम लोगों के सिवा कोई नहीं देखता। "देखना" और "ध्यान देना" के अर्थ में भारी अंतर हो सकता है, और इस संदर्भ में अधिक सावधानी बरती जा सकती थी।

लक्ष्य भाषा में त्रुटिपूर्ण चयन के कुछ और उदाहरण :

जर्मन : Ich will von Fontane, der, wie verabredet, dabei ist, wissen...

हिन्दी अनुवाद : मैं फोन्टाने से, जैसा कि प्रबंध किया गया था, साथ है, पूछता हूँ ...,

जैसा कि प्रबंध किया गया था की बजाय जैसा कि तय किया गया था होना चाहिए था।

जर्मन : ...und heute spricht mich (...) ein junger Mann an, bescheiden, leise, aber bestimmt

यहां विशेषणों के समानार्थकों के रूप में "विनम्र, कोमल, किन्तु पक्का" शब्दों का इस्तेमाल किया गया है। "पक्का" के स्थान पर "दृढ़संकल्प" होना चाहिए था।

जर्मन : Durga mit ihrem Gefolge drei Tage lang aufwendig Gast.

हिन्दी अनुवाद : दुर्गा अपने पार्षदों के साथ तीन दिन के लिए महंगी अतिथि रही थी।

यहां "Gefolge" के लिए सही सम्पृक्तार्थ "अनुयायी" होगा, "पार्षद" नहीं।

जर्मन : Ich will die diffuse bengalische Sehnsucht nach einer Führergestalt erklärt bekommen...

हिन्दी अनुवाद : मैं चाहता हूँ कि वह बताये कि बंगाल में एक नेता व्यक्तित्व के लिए ऐसी फैली हुई अभिलाषा क्यों है।

"फैली हुई अभिलाषा" एक अकल्पनीय इस्तेमाल है, इसका भाषानुवाद कर के "बंगाल में सब ओर..." में रूपांतरित किया जा सकता था।

unglückliche Liebe : अभागा प्रेम

"निष्फल" अथवा "असफल प्रेम" या उर्दू का मुहावरा "नाकाम मोहब्बत" सही इस्तेमाल रहता।

frierende Gestalten : ठिठुरते आकार

यहां "आकृतियां" उचित पर्याय होता।

ये तथा इससे पहले दिये गये उदाहरण अनुवादक के मूल भाषा के दोषपूर्ण ज्ञान को विश्वसनीय रूप से सिद्ध करते हैं। यद्यपि साहित्यिक अनुवाद का कठिन उत्तरदायित्व अपने कंधों पर लेने वाले अनुवादक द्वारा अनुवादक के मूल भाषा पर अधिकार होने के स्वर्णिम सिद्धांत को पूरी तरह उठा कर ताक पर रख देने के औचित्य को किसी भी तरह सिद्ध नहीं किया जा सकता, तथापि अपनी मातृभाषा में अनुवाद करने वाले एक प्रतिष्ठित साहित्यकार से उत्तम लक्ष्य भाषा में लिखी गई रचना की अपेक्षा तो की ही

जा सकती है। यदि "त्सुंगे त्साइगन" में प्रयोग की गई भाषा-शैली का विश्लेषण किया जाये तो यह कथन कसौटी पर खरा नहीं उतरता कि सृजनात्मक लेखक साहित्य का बेहतर अनुवाद कर सकते हैं, या केवल वही इस काम को अंजाम दे सकते हैं।

इस निबंध का मूल उद्देश्य है इस कथन की तह तक पहुंचना कि क्या साहित्यकार साहित्यिक अनुवाद बेहतर कर सकते हैं। लगभग सभी अनुवाद-विज्ञानी एक मुद्दे पर एकमत हैं कि अनुवादक को मूल रचना के प्रति निष्ठावान रहने और लक्ष्य भाषा में पुन:भिव्यक्ति की उस भाषा में निहित संभावनाओं के मध्य एक संतुलन कायम करना होता है। इस अनुवाद के अनुवादक ने भी, बारबरा जॉन्सन के शब्दों में, "निष्ठावान द्विपत्नीक" की भूमिका निभाने का असफल प्रयास किया है। दिये गये उदाहरणों ने यह स्पष्ट किया है, तथा और भी कई उदाहरण इसे स्पष्ट करेंगे।

प्रतिरोधक अनुवाद की प्रक्रिया में निहित है लक्ष्य भाषा में वाक्य-संरचना ज्यों की त्यों रखना, ताकि शैली में "विदेशीपन" झलके, परन्तु पाठक को उसका अर्थ बदला हुआ न मिले। अगले उदाहरण में दिये जाने वाले वाक्य को पहले अन्य संदर्भ में उद्धृत किया जा चुका है : "...eine nackte...Frau... ! die ausser von und—so sieht es aus—von niemcandem wahrgenommen wird. इसके अनुवाद की शैली को अनुवादक ने विदेशीपुट देने का प्रयास किया है, परन्तु उसने वाक्य संरचना को इतने बेतुके ढंग से उलटा-पलटा है कि पढ़ने में अर्थ का अनर्थ हुआ प्रतीत होता है, "औरत... जिसे ऐसा लगता है कि हम लोगों के सिवा कोई नहीं देखता" जिस का अर्थ यह निकलता है कि औरत को ऐसा लगता है कि उस पर कोई ध्यान नहीं देता, जबकि वास्तव में वर्णनकर्ता इस संदर्भ में अपनी तथा अपने साथियों की बात कर रहा है। वास्तव में "ऐसा लगता है" से पहले तथा बाद में अर्ध-विराम होने चाहिये थे, जिन्हें लगाने की अनुवादक ने आवश्यकता नहीं समझी। कुछ और उदाहरण, बिना मूल पाठ के प्रस्तुत हैं, जहां मूल भाषा की वाक्य-संरचना ज्यों की त्यों रखी गई है, और लक्ष्य भाषा में ये वाक्य अनोखे लगते हैं। हांलांकि अनुवादक अंजाने में वेनूती के सिद्धांत पर चला है, परन्तु लगभग हर सिद्धांत के विपरीत भी एक सिद्धांत होता है। यदि किसी यूरोपीय भाषा से हिन्दी में अनुवाद करना हो तो माइकेल स्कॉट डोयल का यह सिद्धांत अधिक उपयुक्त प्रमाणित होगा कि "अनुवाद का अर्थ मूल रचना के जूते चाटना नहीं है, दूसरी ओर अनुवाद लक्ष्य भाषा में निहित समानार्थकता की अभिव्यक्ति की क्षमता के प्रति उपेक्षा भी सहन नहीं करता।" यहां कुछ ऐसे उदाहरण हैं, जिनमें यदि लक्ष्य भाषा में निहित समानार्थकता की अभिव्यक्ति के प्रति उपेक्षा न बरती गई होती तो अनुवाद की सेहत अच्छी रहती :

मैं फोन्ताने से, जो, जैसा कि प्रबंध किया गया था, साथ में है, पूछता हूं।

हम मंछुआरों को होशियारी से दोपहर को अपनी नावें किनारे पर लाते इस तरह देखते हैं :

वास्तव में "होशियारी से" का संबंध "अपनी नावें किनारे पर लाने" से है, न कि "हम" से।

कई बंगाली सहयात्री—ऐसा लगता है जैसे नापसंदगी में लेकिन दरअसल पसंदगी में सर हिलाते हैं।

फिर भी अफसोस है कि उसे उसकी जूट की मिल को, जो दीवाले के कगार पर खड़ी है, क्योंकि इसे ठीक से नहीं चलाया गया, जल्द ही खुद उसके इसरार पर खरीदना पड़ेगा।

ये वाक्य-संरचना से संबंधित त्रुटियां थीं, परन्तु अनुवाद में व्याकरण की त्रुटियां भी हैं, जिसकी अपेक्षा एक हिन्दी साहित्यकार से नहीं की जा सकती। "जूट मिल खरीदना पड़ी", "पैसे की नंगी लालच" में "मिल" तथा "लालच" के लिए गलत लिंग का इस्तेमाल किया गया है। "englishcer Friedho" को "अंग्रेज कब्रिस्तान" बताया गया है, जिसमें विशेषण का अन्तयाक्षर त्रुटिपूर्ण है; इसे "अंग्रेजी कब्रिस्तान" या "अंग्रेजों का कब्रिस्तान" ही कहा जा सकता है। मानक हिन्दी में लिंग तथा विशेषण-विभक्ति गलत ही माने जायेंगे। मूल लेखन में आवश्यकता पड़ने पर बोलियों से प्रचलित शब्दों को लिया जा सकता है, परन्तु बोलियों के व्याकरण के नियमों को अनुवादों में लागू नहीं किया जा सकता। "Von Hüttendächern lassen Slumkinder Drachen steigen" का अनुवाद "अपनी झोंपड़ियों की छतों से बस्तियों के बच्चे पतंग उड़ा रहे हों" के रूप में किया गया है। मूल जर्मन रचना में इस वाक्य में संभाव्य-क्रियार्थ का प्रयोग नहीं किया गया, जबकि हिन्दी वाक्य में इसे मनमाने ढंग से इस्तेमाल किया गया है। अगले वाक्य में अनुवाद में गलत काल का इस्तेमाल किया गया है : .....auf der Howrah Bridge hockten vor elf Jahren links und recht dicht bei dicht Händler. Die habens sie weggeräumt." हिन्दी में वाक्य का अन्तिम भाग इस प्रकार है : ".....उन्होंने अब उन्हें हटा दिया है।" फेरीवाले 11 साल पहले हावड़ा पुल पर बैठते थे, अभी की बात नहीं की जा रही, अत: यहां वर्तमान काल का प्रयोग अशुद्ध है। अब जो उदाहरण दिया जा रहा है, उसमें मूल को उद्धृत करने की आवश्यकता ही नहीं है, हिन्दी में ही अशुद्धि स्पष्ट हो जाती है, "....आत्मसम्मान नहीं था, मालिकों से मुकाबला करने का भी नहीं। .....पहले उसकी मौजूदगी में वे घूंघट निकालती थी, ..."। पहले वाक्य का बहुवचन कर्म दूसरे वाक्य में एकवचन हो गया है, "मालिकों से मुकाबला" → "उसकी मौजूदगी"।

पूरा अनुवाद वर्तनी विषयक त्रुटियों से युक्त है। चूंकि मुद्रण की गलतियां नगण्य हैं, इसलिये गलतियों का दोष मुद्रक पर मढ़ना अनुचित होगा। यह सर्वविदित है कि वर्तनी-विषयक त्रुटियां घोर अर्थगत भ्रांत व्याख्या को जन्म देती हैं, विशेषकर जब अर्धविरामों को नदारद कर दिया जाये या गलत स्थान पर लगा दिया जाये। अधिकांश सम्बन्धसूचक वाक्यों में अर्धविराम नहीं लगाये गये। उर्दू लफ्ज़ों का लिप्यंतरण आमतौर पर गलत है, इसे मुद्रक की भूल का नाम दिया जा सकता था, परन्तु यह भूल इतनी ज्यादा आम है कि इस पर इस तरह का पर्दा नहीं डाला जा सकता।

जैसा कि उल्लेख किया गया है, शैली सामान्यत: दयनीय अवस्था में है; जिस तरह की हिन्दी में यह अनुवाद किया गया है, उस तरह से वह साधारणत: लिखी नहीं जाती। "nicht ohne GenuB" का अनुवाद है

''बिना मज़े के नहीं'', ''कैसे वह बार-बार और बिना मजे के नहीं''— 'फ्रंकफुर्ट समीक्षकों' से पेश आता है nicht ohne GenuB का शाब्दिक अनुवाद करने की ज़रूरत नहीं थी, और ''मजे ले ले के'' का अभाव हिन्दी जैसा रहता । SchluBverkaufspreise का तर्जुमा है ''दुकान बढ़ाने के घटे दाम'', जिसमें अनुवादक ने मुहावरेदार भाषा तो सही इस्तेमाल की है, परन्तु एक अनावश्यक अतिरिक्त सूचना देते हुए उसने सूक्ति में निहित मुख्यार्थिक ''भौतिक'' तथा ''परिस्थितिक'' संस्कृति से संबद्ध सूचना को नदारद कर दिया है । auf nichts ist VerlaB का तर्जुमा इस तरह से है : ''कुछ पर भरोसा नहीं कर सकते'', जो हिन्दी में नहीं कहा जाता । लोगों तथा चीजों पर भरोसा न होने की निराशा को हिन्दी में कई रूपों में व्यक्त किया जा सकता है, जैसे ''किसी भी चीज पर....'' या ''किसी पर.....'' या ''दुनिया में किसी चीज पर.....'' अथवा ''किसी आदमी पर भरोसा नहीं कर सकते'' । Schopenhauer nach Lichtenberg zu lesen, erlaubt Vergleiche का ''लिख्टेनबेर्क के बाद शोपेनहाउअर पढ़ने से तुलनाओं को निमन्त्रण मिलता है'' में परिवर्तन किसी भी पाठक को तड़फड़ाहट में डाल देगा । ग्रास ने जगन्नाथ पुरी के मन्दिर के ऊपर लगे लिंगम को Penis का नाम दिया है, ''पेनिस'' का अनुवाद ''लिंग'' में करके अनुवादक ने लेखक की मूल भावना के साथ अन्याय किया है, उसे इस शब्द को धार्मिक गुणार्थ देने की बजाय किसी अश्लील शब्द का प्रयोग करना चाहिए था, क्योंकि मूल में लेखक का यही इरादा था। एक और स्थान पर Die Betten, oder besser : das Bett für alle वाक्य में ''Betten, oder besser'' का शब्दानुवाद ''बिस्तरे या बेहतर सबके लिए एक बिस्तर'' होने पर शैली में कृत्रिमता आ जाती है, जबकि ''बिस्तरे या यूं कहिए.....'' एक सहज शैली रहती। Freundlich sind sie, ... को सीधे ही ''वे दोस्ताना हैं'', में परिवर्तित कर दिया गया है, जबकि एक अतिरिक्त तत्व जोड़ के इसे ''उनका सलूक दोस्ताना है'' अथवा ''उनका व्यवहार मैत्रीपूर्ण है'' बनाया जा सकता था; जो हिन्दी में सहज शैली होती। कुछ अन्य ऐसे उदाहरण प्रस्तुत हैं, जिनमें मूल जर्मन वाक्य अथवा वाक्यांश उद्धृत नहीं किये गये, हिन्दी की शैली स्वयं में ही अटपटी है :

छुट्टी के बाद भी खाली कमरे दिनचर्या के अनुशासन को संप्रेषित करते हैं ।

प्रस्तावित सुधार : छुट्टी के बाद भी खाली कमरे रोजाना की सख़्ती का एहसास देते हैं ।

पियक्कड़ी आदतें

प्रस्तावित सुधार : शराब पीने के तौर तरीके

करघों की तरह पहचाने तक नहीं जा सकते हैं ।

प्र०सु० : करघे नहीं लगते।

मारवाड़ियों को नाइंसाफी से बदनाम किया गया है ।

प्र०सु० : मारवाड़ियों को बिला वजह बदनाम किया गया है ।

यहां "ungerechtfertigt" का शब्दानुवाद ''नाइंसाफी'' से किया गया है ।

मैदान वृक्ष

प्र०सु० : मैदान में लगे वृक्ष

मेरी पाइप के अलावा ऊंटे विशेष रूप से बच्चों को चकित करती है।

प्र०सु० : मेरी पाइप के अलावा बच्चे विशेष रूप से ऊंटे को देख कर हैरान होते हैं ।

हमारी यात्रा से लौटा ही हूं कि जैसा वचन दिया था, यहां हूं ।

प्र०सु० : यात्रा से लौटते ही अपने वचन के अनुसार मैं यहां हूं ।

अना नारिया श्टूटे के अनुसार ''अनुवाद द्वारा विदेशी शराब को कोका-कोला में बदलने की प्रवृत्ति का प्रतिरोध करना चाहिए'', अर्थात् अनुवादक को ''अर्थगत'' की बजाय ''अभिव्यक्तिशील'' पथ अपनाना चाहिए । इस अनुवाद से यह स्पष्ट है कि यह ''अभिव्यक्तिशील'' नहीं है। परन्तु साथ ही जहां अनुवादक लेखक की मंशा पाठक तक पहुंचाने में सफल नहीं हुआ और न ही उसने मूलपाठ के प्रति निष्ठा की शर्त को पूरा किया है, वहीं अफसोस इस बात का है कि वह पाठक को अपनी भाषा के ज़रिये छूने में असफल रहा है, जो लक्ष्य भाषा पर उसके अधिकार के कारण सुनिश्चित होना चाहिए था । कुछ स्थानों पर अनुवादक द्वारा विस्तारण (amplification) का प्रयोग भी अटपटा है, उदाहरणतय: Plastik-geschirr को ''प्लास्टिक के खाने के बर्तन'' कहना आवश्यक नही था । बर्तन तो खाने के लिए होते ही हैं । Politiker को ''राजनीतिक नेता'' और Kleinstadt को ''छोटा कस्बा'' कहना पाठक की सहजबुद्धि पर संदेह करने जैसा है, क्योंकि ''नेता'' तथा ''कस्बा'' शब्द स्वयं में पर्याप्त थे।

कई स्थानों पर सरल से शब्दों तथा वाक्यों का इस तरह से अनुवाद किया गया है कि मूल लेखक की मंशा को धता बता दी गई है । जब लेखक कहता है ''durchschnittlich gehören drei bis vier Kinder zu einer Santhalfamilie; bei den Hindubauern sind es oft fünf und mehr", "(On an average there are 3-4 children in a Santhal family; Hindu farmers often have 5 or more") तो अनुवादक कहता है ''प्रति संथाल परिवार तीन या चार बच्चे, पांच या इससे ज्यादा हिन्दू किसानों में'', जिसमें वह ''on an average'' तथा ''often'' जैसे महत्वपूर्ण तत्वों को गुल कर जाता है। Wasserpumpe bei den Kühen को वह ''गायों के पास हैंडपम्प'' में परिवर्तित करता है, जैसे गायें हैंडपम्प को इस्तेमाल कर रही हों। यदि यहां विस्तारण के माध्यम से भावानुवाद किया जाता तो ''गायों के तबेले में हैंडपम्प'' पढ़ कर पाठक के मन में दुविधा न रह जाती। शब्दों तथा वाक्यांशों का अत्यधिक शब्दानुवाद इस अनूदित रचना की एक अत्यंत चिंताजनक अक्षमता है। कुछ उदाहरण इस कथन की पुष्टि करेंगे : Seefrachtkiste (a box sent through sea-freight); समंदरी संदूक, A Zwei fliegen sich lesend davon (The two of them fly from there, reading) : दो खुद को पढ़ते हुए उड़ा

लेते हैं। beim Mittagsschlaf träume ich nördlich ("during the afternoon-sleep I dream of north") : मैं दोपहर की नींद में उत्तरी सपने देखता हूं। Müllkinder (garbage-children) कबाड़ बच्चे /ये कूड़े करकट पर/में जीने वाले बच्चे हैं। अनुवादक ने बच्चों को ही कबाड़ बता दिया है। gesammelte Erkenntnisse (gathered experiences) : इकट्ठी की गई सामग्री, holen (to get) : खींच ले चले आना, kühl klssizistisch ,(cool classic) : ठंडा शास्त्रीय (यह एक चर्च के बारे में कहा गया है।) ,trostlose Geschichte (desolate story) : बेसहारा कहानी ("हताश कथा" की बजाय), gewonnene Distanz (distance achieved): जीती हुई दूरी, Kinder im Müll bei Murmelspiel (garbage children playing marbles) : बच्चे कूड़े में गोली के खेल में, auf witzige ,Weise (in a humurous manner) : निजी चालाकी के आधार पर, in denen (in which) : जिनमें जहां ("जिनमें" की बजाय) संदर्भ तथा स्थान का अभाव अनुमति नहीं देता कि दुर्गम्य शब्दानुवाद की इस खत्म न होने वाली सूची को और लम्बा किया जाये।

हिन्दी साहित्य के लेखन के क्षेत्र में एक अत्यंत महत्वपूर्ण तथा विवादास्पद पहलू है हिन्दी में संस्कृत तथा उर्दू (अरबी फारसी) के शब्दों का समावेश। दो विचारधाराओं के शुद्धवादी पक्षधर इस विवाद को हवा देने वाले हैं; एक पक्ष संस्कृतयुक्त हिन्दी के प्रयोग पर बल देता है तो दूसरा उर्दूयुक्त हिन्दी के प्रयोग पर। दुर्भाग्यवश इस विवाद ने अनुवाद के क्षेत्र को भी नहीं बख्शा। आदर्श समाधान दोनों पक्षों के मतों का संश्लेषण होगा, जिसमें अनुवादक को हिन्दी पाठक को सर्वाधिक महत्वपूर्ण मान कर निर्णय लेना होगा। उस पर कलिष्ठ संस्कृत, अरबी तथा फारसी के शब्दों की बौछार नहीं करनी होगी, विशेषकर अरबी तथा फारसी की, क्योंकि इस तथ्य को नहीं भूलना होगा कि हिन्दी तथा उर्दू दो पृथक भाषाएं हैं, भारतीय संविधान के अन्तर्गत भी। मूल लेखन में संस्कृतयुक्त एवम् फारसीयुक्त हिन्दी को किसी सीमा तक स्वीकार किया जा सकता है, लेकिन किसी अनुवादक से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वह इस प्रकार की भाषा का इस्तेमाल करेगा, जहां भाषा कहीं तो शुद्ध संस्कृत हो और कहीं शुद्ध अरबी/फारसी, विशेषकर जबकि निर्बाध पठन के लिए अन्य शाब्दिक माध्यम मौजूद हों। "दुर्धर्ष प्रतिद्वंद्वी", "इन अन्तर्दृष्टियों से जो बहुत अधिक सामीप्य से पाई गई हैं", "आत्यंतिक (extreme के लिए), अक्लांत बतख" या "विपणन स्थितियां" ("better marketability" के लिए), "संशयवादी अंतर्दृष्टियां", "दिनचर्या के अनुशासन का संप्रेक्षण", "अकादमिक अरण्यक", "लज्जाहीन सोना ("to sleep unihibitedly") के लिए) तथा "गायों के विन्यास में निशशृंग धैर्य" कुछ ऐसे उदाहरण हैं, जिनमें शुद्ध संस्कृतयुक्त हिन्दी के माध्यम से अनावश्यक तौर पर न केवल दुरूह, बल्कि अबोधगम्य मुहावरों का इस्तेमाल किया गया है। दूसरी ओर खरे द्वारा इस्तेमाल किये गये गूढ़ उर्दू के लफ्ज भी पाठक को हतप्रभ कर देंगे। "खयाजा", "मीजान", "ता-जिन्दगी कैद", "संग-ए-कब्रों", "शबीहे", "अलस्सुबह", "हस्बमामूल" जैसे लफ्ज आम हिन्दी पाठक के लिए चीनी-जापानी से कम नहीं हैं। अनुवादक जबकि "खयाजा", "ता-जिन्दगी कैद" तथा "अलस्सुबह" के स्थान पर उर्दू के आसान शब्द, जैसे "हरजाना", "उम्रकैद" तथा "सुबह-सुबह" इस्तेमाल कर सकता था, वह शब्दाडंबर दिखाने के लोभ में फंस गया लगता है, हालांकि मूल पाठ में आम जर्मन लफ्ज ही इस्तेमाल किये गये लगते हैं।

संस्कृत तथा अरबी/फारसी के अलावा एक और भाषा, जिसके शब्दों को हिन्दी में प्रयुक्त किये जाने की सहज स्वीकृति मिल चुकी है, वह है अंग्रेजी। कई अंग्रेजी शब्द ऐसे हैं, जो हिन्दी में उनका समानार्थक मौजूद होने के बावजूद भी इस भाषा में प्रयुक्त होने में तरजीह पाते हैं, क्योंकि वे अधिक सहज होने का आभास देते हैं, कुछ ऐसे अन्य अंग्रेजी शब्द हैं, जो हिन्दी में एक अतिरिक्त सम्पृक्तार्थ प्रदान करने हेतु प्रयोग किये जाते हैं। कोई भी मूल रचनाकार अपनी रचना में प्रस्तुत किये जाने वाले माहौल को दृष्टिगत रखते हुए अंग्रेजी तथा अन्य किसी भी भाषा के अधिकाधिक शब्द इस्तेमाल कर सकता है। परन्तु अनुवाद करते हुए ऐसे अंग्रेजी शब्द प्रयुक्त करने का कोई औचित्य नहीं है, जिनके समानार्थक हिन्दी शब्द अधिक प्रचलित हों। अत: "Küche", 'Tisch" तथा "Kerosin" का हिन्दी समरूप "किचन", "टेबुल" तथा "केरोसिन" देना गलत होगा, जबकि "रसोई", "मेज" तथा "मिट्टी का तेल" अथवा "घासलेट" जैसे शब्द हिन्दीवालों द्वारा आम प्रयोग में लाये जाते हैं। पाठकों को मूढ़ मान कर अनुवादक द्वारा लक्ष्य पाठ में किसी भी शब्द या मुहावरे का अनमाना प्रयोग "त्सुंगे त्साइगन" के हिन्दी अनुवाद को एक तमाशा बना कर रख देता है। पाठक को इटली के शहर "मिलानो" का परिचय "माइलंट" के रूप में करवाया जाता है, जो मिलानो का जर्मन नाम है। यह बात समझ में न आने वाली है कि अनुवादक ने मूल जर्मन में परिवर्तित एक इतालवी शहर के नाम को हिन्दी पाठक को उसी रूप में ही क्यों परोस दिया, क्योंकि अनुवादक यह मान कर नहीं चल सकता कि उसकी पुस्तक को पढ़ने वाला हिन्दी पाठक जर्मन भी जानता होगा। एक और उदाहरण इस कथन को अधिक स्पष्ट करेगा। एक और स्थान पर "Fortschritt, nicht wahr?" का हिन्दी अनुवाद है : "प्रोगेस, निश्टवार ?", जो जर्मन तथा अंग्रेजी की खिचड़ी है। एक साधारण सा वाक्य, जिसे सरलतापूर्वक "तरक्की..." अथवा "उन्नति, नहीं क्या ?" में रूपांतरित किया जा सकता था, उसे अबोधगम्य कारणों की वजह से पाठक के लिए अबोधगम्य बना दिया गया है। या इसका यह कारण है कि अनुवादक पाठक को जताना चाहता है कि उसे जर्मन सचमुच आती है ? जर्मन मुहावरे "निश्टवार" का उच्चारण तथा लिप्यांतरण गलत माना जायेगा। "निश्ट" मानक जर्मन उच्चारण "निष्ट" का बावेरियाई रूप है, और "wahr" का उच्चारण "मंगलवार" या "बुधवार" के "वार" की तरह न करके "र" को मूक बना दिया जाता है।

इस निबन्ध में मुख्यत: "त्सुंगे त्साइगन" के हिन्दी अनुवाद "जीभ दिखाना" की भाषा संबंधी त्रुटियों का विश्लेषण किया गया है, वह भी लक्ष्य भाषा के क्षेत्र में। चूंकि ग्युंटर ग्रास के उपन्यास की पृष्ठभूमि भारत है और भारतीय अनुवादक को इसमें एक अन्य संस्कृति की व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं पड़ी, अत: संस्कृति से संबंधित अनुवाद की समस्याओं को हमने नहीं छुआ।

जहां तक किसी साहित्यकार द्वारा गैर-साहित्यकारों से बेहतर तथा अधिक अभिव्यक्तिशील लक्ष्य पाठ प्रस्तुत करने की क्षमता का प्रश्न है,

ग्युंटर ग्रास की ''त्सुंगे त्साइगन'' के हिन्दी अनुवाद का विश्लेषण करने के पश्चात् ये निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं :

1. अनुवाद के लिए मूल भाषा न जानने की क्षमता को साहित्यकार अपनी मातृभाषा में लिखने की दक्षता से पूरा नहीं कर सकता।

2. अपनी मातृभाषा में लिखे जाने वाले साहित्य में साहित्यकार जिस त्रुटिहीन भाषा का प्रयोग करता है, वह किसी विदेशी भाषा से किये गये अनुवाद में प्रतिबिम्बित नहीं होती। इसके निम्नलिखित कारण हो सकते हैं :

   2.1 अधिक संभावना है कि साहित्यकार अनुवादक मूल भाषा संस्कृति से भली भांति परिचित नहीं होगा, जिसके फलस्वरूप वह भाषा में निहित संस्कृति से संबंधित सूक्ष्म भेदों को अनुवाद में परावर्तित नहीं कर पायेगा।

   2.2 साहित्यकार अनुवादक के लक्ष्य भाषा में नये-नये प्रयोग करने के लोभ में पड़ जाने की अधिक संभावनाएं हैं, मानो वह किसी मूल रचना का सृजन कर रहा हो, जिसका परिणाम यह होगा कि वह पाठक को मूल पाठ तथा उसकी शैली से परे धकेल रहा होगा।

   2.3 स्वयं में अतिविश्वास के कारण साहित्यकार-अनुवादक अनुवाद में लापरवाही बरत सकता है और अधिक गलतियां कर सकता है।

   2.4 साहित्यकार अपनी लेखन क्षमता में पाठक के विश्वास का इस अपेक्षा के साथ दुरुपयोग कर सकता है कि कोई भी विलक्षण शब्द या मुहावरा, जो कि वास्तव में एक त्रुटिपूर्ण अनुवाद होगा, और शैलीगत तथा अन्य विसंगतियां पाठक द्वारा यह समझ कर स्वीकार कर ली जायेंगी कि यह तो मूल भाषा में निहित अभिव्यक्ति की कोई अनूठी शैली है।

   2.5 उसकी शैली में उसके मूल लेखन के सभी चिह्न होंगे, जिसके कारण विभिन्न लेखकों की मूल रचनाओं के सभी अनुवाद शैली में एक जैसा होने का आभास देंगे।

दूसरी ओर, यदि इस मत के अन्य पहलू का विश्लेषण किया जाये, जिसके अनुसार ऐसे गैर-साहित्यकार-अनुवादक, जिनका मूल भाषा अर्थात् इस संदर्भ में विदेशी भाषा पर अधिकार है, साहित्य का अनुवाद करने में सक्षम नहीं है (यहां भारतीय संदर्भ में बात की जा रही है, जहां साहित्य तथा अनुवाद की गोष्ठियों में इस विचारधारा को धीरे-धीरे समर्थन मिल रहा है) तो अनुभवजन्य तथ्य इस प्रकार हैं :

1. कोई भी अनुवाद करने से पहले किसी भी अनुवादक के लिए अत्यावश्यक है कि उसका मूल भाषा पर (हमारे संदर्भ में प्रथम मूल भाषा पर) अधिकार हो। भारत में, अनुवाद हेतु व्यावहारिक कारणों से यदि अंग्रेजी को विदेशी भाषा न मान कर चला जाये तो विदेशी भाषाओं के विद्वान ही, जिनका अपनी मातृभाषा पर भी पूर्ण अधिकार है और जो साहित्यिक भाषा में लिखने की क्षमता रखते हैं, साहित्यक अनुवाद करने के लिए पूर्णतय: उपयुक्त हैं। यह परिकल्पना निम्नलिखित तथ्यों पर आधारित है :

   1. विदेशी भाषाओं के विद्वानों का मूल भाषा पर अधिकार होता है।

   2. उनको मूल संस्कृति के बारे में जानकारी होती है, क्योंकि—

      (i) अकादमिक कारणों से वे मूल संस्कृति के क्षेत्र में कम या अधिक समय तक रहे होते हैं;

      (ii) मूल-संस्कृति-क्षेत्र के निवासियों से, जिनसे उनका परिचय शिक्षक, सहयोगी इत्यादि के रूप में होता है, उनका मेलजोल तथा विचारों का आदान-प्रदान होता रहता है; तथा

      (iii) विदेशी भाषाओं के शिक्षण में मूल भाषा बोलने वालों की संस्कृति इत्यादि आमतौर पर पाठ्यक्रम में शामिल होती है।

   3. वैज्ञानिक चितप्रवृति रखने तथा मूल भाषा की अच्छी समझ होने के कारण उनके द्वारा मूल पाठ की शैली से खिलवाड़ किये जाने की कम संभावना रहती है।

   4. पाठक एक आम अनुवादक के प्रति उतने उदार नहीं होंगे, जितने एक जाने-माने साहित्यकार के प्रति, अत: वे किसी विदेशी भाषा के विद्वान द्वारा किये गये अनुवाद की लक्ष्य भाषा को अधिक आलोचनात्मक दृष्टिकोण से परखेंगे। इस कारण उस पर एक लगभग त्रुटिहीन अनुवाद करने का अधिक दबाव रहेगा।

   5. उनके द्वारा पाठकों पर अपनी शैली थोपने का कोई खतरा नहीं है, क्योंकि साहित्यकारों की तरह उनकी अपनी कोई शैली विकसित हो नहीं हुई होगी।

अन्तत: यह कहना असंगत न होगा कि विदेशी भाषाओं के कई विद्वान विदेशी भाषाओं से भारतीय भाषाओं में अनुवाद करते रहे हैं और कर रहे हैं। उन अनुवादों तथा साहित्यकारों के अनुवादों के पढ़ने के बाद अनुभवजन्य निष्कर्ष यही निकलता है कि जहां विदेशी भाषाओं के विद्वान इस कार्य का गंभीरतापूर्वक निष्पादन कर रहे हैं, वहीं साहित्यकारों के बारे में यह नहीं कहा जा सकता। ''त्सुंगे त्साइगन'' के हिन्दी अनुवाद का विश्लेषण इस कथन की पुष्टि करने हेतु एक ज्वलंत उदाहरण है।

मुस्लिम कवियों की कृष्ण-कल्पना

—नोतन लाल

श्री कृष्ण प्रेम की मधुर रस धारा ने मुस्लिम कृष्ण भक्त सन्तों, सूफ़ियों और कवियों को भी कुछ कम आकर्षित नहीं किया। तत्कालीन हिन्दी काव्य की समृद्धि में उनका योगदान अप्रतिम है। भारत वर्ष में हिन्दू-मुस्लिम मिली-जुली संस्कृति सदैव ही साम्प्रदायिक सद्भावना, सहिष्णुता एवं राष्ट्रीय एकता का प्रतीक एवं दर्पण रही है। उर्दू काव्य में जहां इस्लाम पैगम्बरों, वलियों एवं बुजुर्गों की महानता एवं श्रेष्ठता के गीत गाए गये हैं, वहीं अन्य धर्मावलम्बियों के महानपुरूषों, अवतारों व संस्थापकों के प्रति भी श्रद्धा सुमन अर्पित किये गए हैं। श्री रामचन्द्र जी, श्री महावीर स्वामी, श्री गुरूनानक देव, महात्मा बुद्ध, छत्रपति शिवाजी एवं श्रीकृष्ण पर उर्दू में जो रचनाएं मिलती हैं, उन्हें पढ़कर श्रद्धा से सर नतमस्तक हो जाता है।

उर्दू साहित्य में मुस्लिम कवियों की कृष्ण कल्पना उनके प्रति श्रद्धा तथा सम्मान पर आधारित रही है। कुछ लोग तो उन्हें 24 कलापूर्ण भगवान की संज्ञा देते हैं तो कुछ उन्हें महापुरुष, श्रेष्ठ राजनीतिज्ञ तथा सम्पूर्ण मानवीय गुणों से मुक्त अपना आदर्श मानते हैं। उर्दू काव्य सागर में श्री कृष्ण के बारे में जो श्रद्धा सुमन अर्पित किये गए हैं, वे "कृष्ण भक्ति" "कृष्ण-प्रेम" तथा "कृष्ण-वन्दना" के अनूठे उदाहरण हैं, जिनमें कृष्ण जी के "लोकप्रिय व लुभावने व्यक्तित्व" को बड़े सुन्दर ढंग से दर्शाया गया है।

कृष्ण भक्त कवियों में रसखान का नाम जाज्वल्यमान ध्रुव-तारक सा अमर है। इनका पूरा नाम सैयद इब्राहिम पिहानी वाले थे। अकबर से किसी ने इनकी चुगली खायी, तो उन्होंने कहा—

"कहा करै रसखानि को, कोऊ चुगल लबार।
जो पे राखन हार है, माखन चाखनहारा"

इन पंक्तियों से स्पष्ट है कि रसखान को श्रीकृष्ण (माखन चाखनहार) में कितनी दृढ़-आस्था, विश्वास तथा प्रगाढ़-स्नेह था। ब्रजलाल की विविध लीला-प्रसंगों का उत्कृष्ट, सजीव एवं सलोना चित्रण जो रसखान के काव्य में मिलता है वह अन्यत्र कहीं नहीं दिखता। श्रीकृष्ण की जन्म भूमि और वहां के कण-कण पर तन-मन न्यौछावर करने का संकल्प "रसखान" की इस आराधना में स्पष्ट झलकता है—

"या लकुटि-अरू कामरिया पर
राज तिहूं पुर को तजि डारौ
आठ हूं सिद्धि नवौ निधि को सुख
नन्द की गाय चराई-बिसारों
रसखान कबौ इन आंखिन सौ
ब्रज के बन बाग तड़ाग निहारों
कोटिन हूं कल धोत के धाम
करील के कुंजन ऊपर बारौ"

कवि रसखान ने भगवान श्री कृष्ण का सान्निध्य प्राप्त करने की कामना करते हुए पूर्वजन्म की आकांक्षा भी बड़ी प्यारी की है—

"मानुस हो तो वही रसखान
बसो बृज गोकुल गांव के ग्वारन
जो पशु हों तो कहा वश मेरो
चरों नित नन्द की धेनु झंझारन
पाहन हो तो वही गिरि को जो
धरयो कर छत्र पुरन्तर धारन
जो खग हों तो बसेरो करौं मिली
कालिन्दी मूल कदम्ब के डारन"

अकबर के दरबारी कवि रहीम जिनका पूरा नाम अबदुर्रहीम खान खाना था उन्हें अरबी, फारसी, उर्दू, अवधी और ब्रज भाषा पर पूर्ण अधिकार था। उनके "नीति के दोहे" बहुत प्रसिद्ध हैं। वस्तुत: उनकी काव्य प्रतिभा का आधार "कृष्ण-भक्ति" ही थी। कृष्ण की सांवरी छवि पर उनका तन-मन न्यौछावर था। अपनी एक वरवै में वे कहते हैं—

"अति अद्भुत छवि सागर, मोहनगात।
देखते ही सखि बूड़त, दृग जलाजात"

कृष्ण भक्त रहीम परम दानवीर थे। वे अनुपम योद्धा थे, अकबर के महामंत्री और सेनानायक भी। दक्षिण के किसी हिन्दू-नरेश ने छल से जब उन्हें भोजन में विष देना चाहा था, तो "ब्रजलाल कृष्ण" ने इन्हें प्रत्यक्ष दर्शन देकर सचेत किया। इस तरह उनकी प्राण रक्षा हुई। श्रीकृष्ण भगवान की मनमोहिनी सूरत कवि रहीम के हृदय में कैसी बसी है उसका एक आकर्षण इन पंक्तियों में देखिए—

"ललित जलित माला का जवाहर खड़ा था
चपल चखन वाला चांदनी में खड़ा था
कटितर निच मेला पीत सेला नवेला
अलिबिन अलबेला श्याम मेरा अकेला"

नजीर अकबराबादी एक ऐसे जनप्रिय कवि हैं जिनकी रचनाओं में हिन्दू-धर्म के अवतारों, महान पुरुषों तथा दर्शन शास्त्र का वास्तविक रूप मिलता है। उन्होंने अपने प्रिय "कृष्ण कन्हैया" के सम्बन्ध में श्रद्धा, आदर व प्रेम के जो ज़ज्बात (भावनाएं) पेश किये हैं, उनसे उनकी कृष्ण भक्ति का अनुमान लगाया जा सकता है। सुप्रसिद्ध साहित्यकार प्रोफेसर गोपीचन्द नारंग का कथन है—"नजीर की नज्में (रचनाएं) कृष्ण कल्चर (संस्कृति) की अहमियत की नुमाइंदगी करने में कामयाब हैं। शुरू से आखिर तक उनमें लोक गीत का लुत्फ (मज़ा) मिलता है।"

नजीर की कविताओं में कृष्ण कन्हैया का जन्म, बांसुरी बजैया का बालपन, कन्हैया जी के खेलकूद, कन्हैया जी की शादी, कन्हैया जी का रास, श्री कृष्ण दस-रस महता की तारीफ आदि में कृष्ण जी के व्यक्तित्व को बड़ी सुन्दरता से दर्शाया गया है।

"कन्हैया जी का जन्म" में श्री कृष्ण जी के जन्म का वर्णन करते हुए नजीर कहते हैं-

है रीत जनम की यूं होती, जिस घर में बाला होता,
उस मंडल में हर मन भीतर, सुख चैन दुबाला होता
सब बात बिथा की भूल है, जब भोला भाला होता है
आनन्द मदीले बाजत हैं, नित भवन उजाला होता है,
यूं नेक निछतर लेते हैं, इस दुनिया में संसार जनम
पर उनके और ही लच्छन हैं, जब लेते हैं अवतार जनम।

जब संसार को उजाला देने वाला अवतार बालपन की उस सीमा तक पहुंचता है, जो शोखी, शरारत और नटखट की प्रतीक होती है तो नटखट "कन्हैया" किस प्रकार घर-घर जाकर ग्वालिनों का दूध दही चुराता है-

"थे घर गुवालिनों के लगे अधर में जा-ब-जा
जिस घर को खाली देखा, उसी घर में जा फिरा
कुछ खाया कुछ खराब किया, कुछ दिया, ऐसा था
बांसुरी के बजैया का बालपन
क्या-क्या कहूं मैं किशन कन्हैया का बालपन।"

कृष्ण की रंगारंग व अनूठी शख्सियत (व्यक्तित्व) की तरह उनकी बांसुरी भी अपना अनूठा स्थान रखती है। नजीर के शब्दों में उनकी "प्रेमभरी बांसुरी" सुनकर सारा संसार मुग्ध हो जाता है-

"जब मुरली धर ने मुरली को अपने अधर धरी
क्या क्या प्रेम भरी उसमें धुन भरी
लै उसमें राधे राधे के हरदम हरि हरि
लहराई जो धुन उसकी इधर और उधर दरी
सब सुनने वाले कह उठे जय जय हरि हरि
ऐसी बजाई किशन कन्हैया ने बांसुरी।"

सारांश यह है कि नज़ीर केवल कृष्ण जी में मतवाले ही नहीं उनकी रचनाओं में श्री कृष्ण की महानता व श्रद्धा का वास्तविक स्वरूप भी दृष्टिगोचर होता है:—

"मैं क्या क्या वरफी हूं यारो
उस श्याम बरन औतारी के,
सौ किशन, कन्हैया, मुरली धर
मनमोहन कुंज बिहारी के
गोपाल, मनोहर, सांवरिया
घनश्याम अटल बनवारी के
नन्दलाल दुलारे सुन्दर छब,
ब्रज चन्द मुकुट झलकारी के
नित हरि भज हरि भज रे बाबा,
जो हरि से ध्यान लगाते हैं
वो हरि की आसा करते हैं,
हरि उनकी सास पुजाते हैं।"

उर्दू साहित्य के दृढ़-स्तम्भ निहाल स्योहरवी ने कृष्ण की महानता को श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हुए लिखा है कि जब मानव समाज आदर्श जीवन की परिभाषा भूल चुका था तब श्रीकृष्ण उसकी याद ताज़ा करने और अंधकार के पर्दे को हटाने के लिए संसार में आए—

"कायताते जब्ब-ओ-कुल का राजदां पैदा हुआ
मुख्तसर यह है कि आक़ाए जहाँ पैदा हुआ
नूर से मामूर जुल्मतखान-ए-आदम हुआ
किस जम्मुल से तुलू-ए-आज़म हुआ
जिस क़दर पर्दे जहालता के थे सारे हट गए,
जुल्म ओ-इस्तब्दाद के तारीक बादल हट गए
बारिशे-अल्ताफ से तूफाँ हुआ पाश इंसानों पे
राज़े-हस्ति-ए-इंसाँ हुआ।"

हयात-ए-जाविदा (अमर जीवन) का संदेश देने वाले श्री कृष्ण को अल्लमां "सीमाब" अकबराबादी ने श्रद्धा सुमन प्रस्तुत करते हुए कहा है :—

"हुआ तुलूए सितारों की दिलकशी लेकर
सुरूर आंख में नज़रों में ज़िंदगी लेकर
खुदी के होश उड़ाने बसद नियाज़ आयेगा
नये प्यालों में सहवा-ए-बेखुदी लेकर
फ़ायज दहर में गाता फिरा वो प्रीत के गीत
नशात खेज-ओ-सुकूँरेज़ बांसुरी लेकर
जहाने-क़ल्ब सरापा गुदाज़ बन ही गया
हर जर्रा मुहब्बत का साज़ बन ही गया।"

उर्दू के प्रसिद्ध शायर मौलान "हसरत" मोहानी सच्चे मुसलमान, स्वतन्त्रता सेनानी तथा कवि थे। उनका सूफियाना कलाम उर्दू साहित्य का बेशकीमती सरमाया है कट्टर धार्मिक होते हुए भी जब वह मथुरा, गोकुल, बरसाना, नंदगांव की कल्पना करते हैं तो उनकी भावनाओं में हलचल मच जाती है—

"मथुरा कि नगर है आशिकी का
दम भरती है आरजू इसी का
हर ज़र्रा सरज़मीन-ए-गोकुल
दारा है जमाल-ए-दिलबरी का
बरसाना व नन्दगांव में भी
देख आये हैं जलवा हम किसी का
पैग़ाम-ए-हयात-जाविदां का
हर नगमा कृष्ण की बांसुरी का।"

उर्दू साहित्य के लब्ध-प्रतिष्ठित कवि बी.एल. शोला इन शब्दों में श्री कृष्ण के प्रति इन शब्दों में करते हैं—

"तू ही है हुस्ने रूखसारे-हक़ीकत
तू ही है परदा बरदारे हक़ीकत
तू ही है काशिफ़े असरारे अजली
तू ही है रूनमा-ए-हुस्ने-अबदी
तू ही है जलवा फरमा-ए-दो आलम
तू ही है खुदा तमाशा-ए-दो आलम।"

श्रीकृष्ण द्वारा महाभारत में अर्जुन को युद्ध के समय दिए उपदेश को आत्मसात कर मौलाना ज़फर अली ने गीता के प्रति अपनी श्रद्धा इन पंक्तियों में हृदय-स्पर्शी शब्दों में की है-

"दिलों पर डालती आई है,
डोरे सहर के गीता,
नहीं मिटने में आई है-
यह जादू की लकीर अब तक।

श्रीकृष्ण की नीति-संचालन का भी गुरमगान करते हुये वर्तमान परिपेक्ष्य में मौलाना ज़फर साहब आगे कहते हैं :—

"तेरी रथवानी का फिर
हिन्दोस्तां मोहताज है,
और इस नभ की हकीकत का
जहाँ मोहताज है।"

उर्दू के प्रसिद्ध शायर मूर्तिजा अहमद खां भी श्री कृष्ण के बड़े दीवाने हैं। इन्होंने श्री कृष्ण की बाँसुरी की प्रशंसा इस प्रकार की है :—

"कान अब तक सुन रहे हैं
बाँसुरी की वह सदा,
जो दिले अहले-दरद,
मथुरा में तड़पती रही।"

इन विख्यात कवियों व साहित्यकारों के अतिरिक्त महबूब तालिबशाह, सैयद क़ासिम अली, क़ाजी अशरफ महबूब, लतीफ हुसैन, इंशा, ताज, करीम बख्श, रसलीन पकरंग आदि अनेक मुसलमान कवि श्री कृष्ण रंग में रंगे थे। अत: उन्होंने उनके आलौकिक सौन्दर्य पर मुग्ध होकर उनके गुणों एवं विशेषताओं का बखान अपनी कविताओं में लिपिबद्ध किया। हिन्दू और मुस्लिम समुदाय में पारस्परिक सौहार्द, बन्धुत्व और आपसी भाईचारे की जो सरस, पवित्र और अमर धारा इन मुस्लिम कवियों ने बहाई है, उसके सम्बन्ध में बहुमुखी प्रतिभा के धनी कवि भारतेन्दु हरीशचन्द्र ने उन पर "कौटिक हिन्दु वारने" अपने कथन को अक्षरश: सिद्ध किया है। इन मुस्लिम भक्त कवियों की श्रंखला में राही मासूम रजा का नाम उल्लेखनीय है, जिन्होंने हिट सीरियल "महाभारत" में अपने उच्चकोटि के संवाद लिखकर साम्प्रदायिक सौहार्द का अनूठा एवं अनुकरणीय उदाहरण भारत के नागरिकों के सन्मुख प्रस्तुत किया है।

इस भौतिकवाद के युग में इन मुस्लिम कृष्ण भक्तों के प्रेम रस के छलकते सुधापात्र से रसपान करके कौन लाभान्वित नहीं होगा। प्रत्येक भारतीय नागरिक का यह पुनीत कर्तव्य है कि जब हमारे देश का राजनैतिक, नैतिक एवं धार्मिक वातावरण दिन प्रतिदिन दूषित होता जा रहा है, ऐसी विषम परिस्थितियों में हमें श्री कृष्ण जी के आदर्शों का अनुसरण करने की प्रतिज्ञा लेनी चाहिए। इसी सन्दर्भ में प्रसिद्ध उर्दू शायर अली सरदार जाफरी की निम्न पंक्तियां विश्व के लोगों के लिए वर्तमान परिस्थितियों में बहुत ही प्रांसगिंक है:—

"अगर कृष्ण की तालीम आम हो जाए,
तो फितना गरों का काम तमाम हो जाए,
मिटायें बिरहमन शेख तफर्रूकात अपने,
जमाना दोनों घर का गुलाम हो जाए।"

457, न्यू जनता कालोनी, फरीदाबाद (हरियाणा) 121001

पुरानी यादें-नये परिप्रेक्ष्य

राष्ट्रभाषा हिन्दी समर्थक नेता जी सुभाष चन्द्र बोस

—आचार्य राधा गोविन्द थोंगाम

नेताजी सुभाषचन्द्र बसु ऐसे भारतीय थे जिन्होंने इण्डियन सिविल सर्विस की परीक्षा सर्वप्रथम स्थान प्राप्त कर उत्तीर्ण की थी। इसका लक्ष्य था-भारतीय विवेक की श्रेष्ठता को प्रतिष्ठित करना। निर्भीक इतने थे कि हीटलर के सम्मुख हीटलर के देश की राजधानी में धन्यवाद ज्ञापन करते हुए उनके प्रस्ताव को नम्रता से अस्वीकार कर देते हैं। साहसी इतने कि ब्रिटिश साम्राज्य और मित्र राष्ट्रों की सेना से घिरे समुद्र के बीच से यात्रा करते हुए सिंगापुर पहुँचे। इरादे इतने बुलन्द कि जापानी सेना के बीच आजाद हिन्द फौज के सपनों को साकार करने का संकल्प लिया।

नेताजी सुभाष 22 जुलाई, 1944 को मणिपुर की राजधानी इम्फाल पहुँचे थे। आजाद हिन्द फौज ने पूरे मणिपुर को स्वतंत्र करा लिया था। 14 अप्रैल, 1944 को नेताजी की आज्ञा से मोइरां के राज प्रासाद के सामने तिरंगा गाड़कर 18 अप्रैल, 1944 से आजाद हिन्द सरकार का काम शुरू करवाया था। नेताजी के आदेश के अनुसार आजाद हिन्द सरकार ने हिन्दी में काम शुरू किया था। 14 अप्रैल तथा 18 अप्रैल, 1944 को "कदम-कदम बढ़ाये जा" हिन्दी प्रयाण गीत गाते हुए आजाद हिन्द फौज ने पद संचलन किया था।

"गंगाशरण सिंह सम्मान से सम्मानित श्री हेमाम नीलमणि सिंह ने बताया कि जब नेता जी उनसे मिले थे तो हिन्दी में ही बोले। उन्होंने नेता जी को सदा हिन्दी में बोलते पाया। नेताजी व्यस्तता के बावजूद भी अहिन्दी भाषी सैनिकों को हिन्दी सिखाने के लिए समय निकाल लेते थे। मैंने हिन्दी का पहला पाठ नेता जी से रंगून में पढ़ा था।"

29 दिसम्बर, 1928 को कलकत्ता में राष्ट्रभाषा सम्मेलन हुआ। नेताजी स्वागत समिति के अध्यक्ष थे। उन्होंने स्वागत भाषण में कहा था, "हमारे देश को एक एकता बनाने वाली भाषा की जरूरत है। प्रान्तीय ईर्ष्या-द्वेष दूर करने में जितनी सहायता हिन्दी प्रचार से मिलेगी उतनी किसी दूसरी चीज से नहीं। हम सब यह जानते हैं कि हिन्दी सारे देश में समझी जाती है तथा देश के सबसे बड़े भूभाग में बोली जाती है। यह भी बात सत्य है कि देश के सभी नेताओं ने अपने दिल से हिन्दी को ही राजभाषा बनाने का निश्चय किया है। वह दिन भी दूर नहीं है, जब भारत स्वाधीन होगा और उसकी राष्ट्रभाषा होगी हिन्दी।"

आजाद हिन्द फौज की कैप्टन लक्ष्मी सहगल तमिल भाषी है। उन्होंने भारत में एम.जी.बी. एस. पढ़ते समय हिन्दी सीख ली थी। वे 1940 के मई माह के अंतिम सप्ताह में सिंगापुर पहुँची थी। वे अपनी साक्षात्कार में बताती हैं—

"आजाद हिन्द फौज के जनरल नेताजी के दर्शन करने की मेरी उत्कठ इच्छा थी। मैं जब उनसे मिली तो चरण छूने के लिए बढ़ी तो नेताजी ने पीछे हटकर मुझसे कहा—'ज़य हिन्द'। नेता जी जब भी किसी हिन्दुस्तानी से मिलते थे तब 'जय हिन्द' कहते थे। हम सब भी नेताजी और आपस में 'जय हिन्द' कहकर अभिवादन करने लगे। मुझे याद है, अपनी पहली मुलाकात में पाँच घंटे.....पूरे पाँच घंटे नेता जी ने मुझ से बात की। अन्त में उन्होंने हिन्दी में पूछा, "आप बहादुर हिन्दुस्तानी नारी सेना बनायेंगी। मैं यह जिम्मेदारी आपको सौंपता हूँ।"

मैंने जबर्दस्त भाग दौड़कर छः हजार हिन्दुस्तानी नारियों को एकत्र कर एक सभा का आयोजन किया। इनमें सबसे बड़ी संख्या अनपढ़ तमिल तथा मलयालम भाषियों की थी। ये महिलाएँ सिंगापुर में पी.डब्ल्यू.डी. की सड़कें बनाने वाली मजदूरनियाँ थीं या ये स्टेट्स बार्न इंडियंस में काम करने वाली थीं। इन सब से बात नेताजी ने हिन्दी में की। नेताजी हिन्दी में बोलते थे तथा मैं और मेरी एक सहेली तमिल तथा मलयालम में उन्हें समझाते रहे। सभी खुशी से तैयार हो गईं।

आजाद हिन्द फौज के सारे आदेश, कबायदे सभी हिन्दी में होते थे। नेता जी जब भी मुयाना करते थे तब हिन्दी में बोलते थे तथा हिन्दी में ही आदेश देते थे। आजाद हिन्द फौज में सम्मिलित सभी नारी सैनिकों ने हिन्दी सीखनी शुरू की। नेता जी रोज कुछ न कुछ समय निकालकर आते तथा हिन्दी सिखाते थे।

नेताजी ने ही स्वयं "दिल्ली चलो" का नारा अपने मुख से दिया था। जब "कदम कदम बढ़ाये जा" की धुन पर आजाद हिन्द फौज कबायद करती थी तब नेता जी भी यह प्रयाणगीत गाने लगते थे।

नेता जी से मेरी आखिरी मुलाकात शान स्टेट स्थित आजाद हिन्द फौज के अस्पताल में हुई थी। नेता जी ने घायल सिपाहियों से हिन्दी में बात की। मैं इम्फाल से लौटी थी। नेता जी ने मुझे रंगून चलने का आग्रह किया था। नेताजी के रवाना हो जाने के बाद दूसरे दिन ब्रिटिश सेना ने जबर्दस्त हमलाकर अस्पताल को बमबारी कर उड़ा दिया। उस अस्पताल में चार-पाँच सौ आजाद हिन्द फौजी घायल पड़े थे। इस बमबारी में अधिकांश आजाद हिन्द फौजी मारे गये; क्योंकि अपने बिस्तरों से हिल भी नहीं पाते थे। लंगड़ाकर या घसीटकर चलने वाले को ही हम बचा पाये; क्योंकि हमला अचानक हुआ था तथा चारों तरफ से हुआ था।

आजाद हिन्द फौजियों से बात की जाय तो ऐसी कितनी ही बातें नेताजी सुभाषचन्द्र बसु के हिन्दी प्रेम के सम्बन्ध में प्रकट हो सकती है। क्या यह कार्य आजादी के इस पचासवें वर्ष में कोई पूरा करेगा?

बहुमुखी प्रतिभा के महापंडित राहुल सांकृत्यायन

—डॉ. सुरेन्द्र प्रसाद जमुआर

अनेक विषयों पर लिखित सौ से अधिक ग्रन्थों के प्रणेता महापंडित राहुल सांकृत्यायन (जन्म: 9 अप्रैल, 1893 ई. : आजमगढ़, उत्तर प्रदेश स्थित ग्राम पंदहा तथा निधन: पश्चिम बंगाल, 14 अप्रैल, 1963 ई.) विद्वता, कर्मनिष्ठा, निश्छल हिन्दी-सेवा एवं पर्यटक के जीवन्त प्रतीक थे। उनके लिखित ग्रन्थ ऐसे हैं, जिनमें एक को पाकर भी कोई भाषा धन्य हो सकती है। उन्होंने ब्रिटिश शासन-काल में अंग्रेजी की बजाय हिन्दी का पक्षधर बनकर, भारत के बाहर भी हिन्दी का अलख जगाया तथा तन-मन-धन हिन्दी की सेवा के लिए समर्पित कर दिया। वे अपने साहित्य-कोष से हिन्दी को विश्व की श्रेष्ठ भाषाओं के समानान्तर बनाने की दिशा में संभवत: अकेले व्यक्ति थे। वे पुरातत्व को ठोस आधार देने के लिए जीवन-पर्यन्त देश-विदेश का भ्रमण करते रहे और अनेक कष्ट से जूझते हुए भारतीय सिद्धों की तिब्बती पुस्तकों को खच्चरों पर लादकर, तिब्बत से भारत लाये। इससे उनके विलक्षण बुद्धि-कौशल एवं अदम्य पुरूषार्थ की झलक मिलती है। तिब्बत एवं चीन का पर्यटन करने के दौरान उन्होंने सैकड़ों प्राचीन ग्रन्थ का उद्धार कर, उनके सम्पादन एवं प्रकाशन का मार्ग प्रशस्त किया। ये सारे ग्रन्थ पटना संग्रहालय में सुरक्षित हैं।

राहुल जी सचमुच महिमामय व्यक्तित्व थे, जिनकी मेधा एवं मनीषा ने इस देश की सारस्वत साधना को अभिभूत किया है। वे महामहोपाध्याय पंडित रामावतार शर्मा की तरह उसी मेधा एवं मनीषा की जाज्वल्यमान विभूति थे, जिनकी प्रतिभा-प्रभा से इस देश की संस्कृति अलंकृत हुई है। भारतीय ज्ञान-विज्ञान और संस्कृत वाङ्गमय को आधुनिक युग में पल्लवित एवं पुष्पित कराने की दिशा में, उनका योगदान अप्रतिम रहा है। उन्होंने वांङ्गमय के अनेक क्षेत्रों में ऐतिहासिक कार्य किया है। बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना द्वारा दो खण्डों में प्रकाशित "भव्य एशिया का इतिहास" पर भारत का सर्वश्रेष्ठ "साहित्य अकादमी-पुरस्कार" उन्हें 1959 में प्राप्त हुआ था। अ.भा. हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने उन्हें 1949 में "साहित्यवाचस्पति" की उपाधि से सम्मानित किया था।

राहुलजी, जिनके बाल्यकाल का नाम केदार नाथ पाण्डेय था, की प्रकृति शुरू से ही स्वच्छन्द थी। वे यायावरी प्रवृत्ति के अक्खड़ व्यक्ति थे। भाषा पर उनका व्यापक अधिकार था और उनमें विषय एवं भावानुरूप भाषा-प्रयोग की विलक्षण क्षमता थी। हालांकि उनका शब्द-भण्डार अत्यन्त समृद्ध था, किन्तु वे सदा सरल, स्वाभाविक एवं परिचित पदावली का प्रयोग करना ही ज्यादा पसन्द करते थे। वे किशोरावस्था में एक मठ के वैरागी साधु बन गए थे। वाराणसी में उन्होंने कई वर्ष तक व्याकरण, साहित्य एवं दर्शन का विस्तृत अनुशीलन किया। रूस में वे लम्बे अरसे तक भारतीय दर्शन के प्राध्यापक रहे। वे संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश, फारसी, अंग्रेजी, तिब्बती, चीनी, रूसी आदि कई भाषाओं के जाने-माने विद्वान थे। बौद्ध दर्शन के वे प्रख्यात व्याख्याता थे। उन्होंने बौद्ध धर्म के अनेक ग्रंथों का हिन्दी में अनुवाद किया है। वर्षों तक वे आर्य समाज के उपदेशक एवं प्रचारक रहे। उन्हें श्रीलंका के बौद्ध विद्वानों की ओर से "त्रिपिटकाचार्य" की उपाधि से विभूषित किया गया था। वे 1921 में असहयोग आंदोलन में शामिल होकर पहली बार जेल गये थे, जहां उनका विद्या-व्यसन घटन की बजाए, बढ़ता गया। उन्होंने 1931 में यूरोप जाकर प्राच्य भाषाओं का अध्ययन किया तथा 1933 में एक मासिक पत्रिका गंगा सुलतानगंज, भागलपुरी के पुरातत्वांक का सम्पादन किया था। वे लंका के एक कालेज में संस्कृत विभाग के अध्यक्ष भी रहे।

"वोल्गा से गंगा" राहुल जी द्वारा लिखित एक लोकप्रिय उपन्यास है। प्रो. नलिन विलोचन शर्मा द्वारा सम्पादित "हिन्दी की उत्तम कहानियां" (1977) में संगृहीत कहानी "सतमी के बच्चे" राहुल जी की अत्यन्त रोचक कहानी है। "दु:ख की घड़ी लम्बी जरूर होती है लेकिन उसे भी काटना ही पड़ता है।" अपने जीवन के उत्तरार्ध में राहुल जी कुछ वर्ष मसूरी में रहे थे। "हिमपात" नामक यात्रा उनके यात्रा-वृतांत से जुड़े हिमपात का वर्णन है, जिसमें लेखक ने प्रकृति -सौन्दर्य के एक अद्भुत रूप की ओर ध्यान खींचता है जिसकी कल्पना समतल मैदान में रहने वाले लोग नहीं कर पाते। पड़ती हुई बर्फ का दृश्य बड़ा मोहक होता है। हिमपात के समय सर्द मुल्कों के लोग बाहर घूमने में आनन्द का अनुभव करते हैं। "राहुल जी ने सैलानी स्थानों पर बर्फ पड़ने के दृश्य का सजीव चित्रण किया है। एक बार आचार्य शिवपूजन सहाय ने राहुल जी के बारे में लिखा था-"वे इस युग के एक धुरंधर साहित्यकार थे। साहित्यिक शोध का क्षेत्र उनके अनवरत अनुसंधानात्मक परिश्रम एवं लेखनी संचालन से बहुत उर्वर हुआ है। उनकी अथक लेखनी ने कितने ही ऐसे विषयों को सनाथ किया है, जिनकी ओर हिन्दी संसार के विद्वज्जनों का ध्यान आकृष्ट नहीं हुआ था।"

"मध्य एशिया का इतिहास" (1956) ग्रंथ प्रणयन कर, राहुलजी ने हिन्दी साहित्य के एक चिर-अनुभूत अभाव की पूर्ति की तथा ऐतिहासिक शोध की नई दिशा दी है। इस ग्रंथ में मानव के इतिहास के साथ मानव की पृष्ठभूमि पर, सरसरी तौर पर विचार किया गया हैं। "सिंह सेनापति", "जयौधेय" (1944), "मधुर स्वप्न" (1949), "विस्मृत यात्री" (1954), सप्रसिन्धु (1956), उनके बड़े रोचक उपन्यास हैं। इनके अनुशीलन से राहुल जी की अद्भुत ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि की झलक मिलती है। राहुलजी जैसा व्यक्तित्व युगों के बाद अवतरित होता है। पंजाब विश्वविद्यालय के प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित विचारात्मक निबन्ध-संकलन विचार और विमर्श (1951) में संगृहीत "भारत की राष्ट्रभाषा और लिपि." में उन्होंने अपना मन्तव्य देते हुए लिखा है- हिन्दी को हिन्दी प्रान्तों के न्यायालयों, पार्लियामेन्टों एवं सरकारी शासनपत्रों की ही भाषा नहीं माना है, बल्कि आज के विकसित विज्ञान की हर शाखा के अध्ययन का माध्यम ही बनाना है। इस भारी काम को हिन्दी सहर्ष वहन करेगी। कोई भी अविकृत मस्तिष्क आदमी आज अंग्रेजी को राष्ट्रभाषा बनाने की कोशिश नहीं करेगा। हिन्दी भाषा-भाषी बहुत भारी प्रदेश तक फैले हुए हैं। अब हिन्दी में सारा ज्ञान-विज्ञान लाना होगा-हम भारत माता के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करें :—

सबके रहे सहारा, करूणा निधान, राहुल
अभिमान देश के थे, ये शीलकाय, राहुल,
हिन्दी-हितैपियों में तुम हो गए हिमालय
प्रिय विश्व लेखकों में सबसे प्रधान राहुल।

—कवि महेन्द्र शास्त्री

इस प्रकार महापंडित राहुल सांकृत्यायन बहुमुखी प्रतिभा के प्रख्यात साहित्यकार थे।

वन्दना कुटीर, दुजरा, पटना-1

भाषा संगम

मलयालम कविताएं

मेरे गुरुदेव

— वल्लत्तोल नारायण मेनन

--नगारी लिप्यंतरण

लोकमे तरवाटु तनिक्की, चेटि कळुम्
पुल्कळु पुषु क्कलुं कूटि त्तन् कुटुम्बक्कार,
त्यागमेन्नते नेट्टं, ताषं मतानम्युन्नति
योगवित्तेवं जयिक्कुन्नितेन् गुरुनाथन्।
तारकामणिमाल चार्तियालतुं कॉळ्ळाम्,
कारणिच्चॉळि नीले पुरण्टालतुं कोळ्ळाम्,
इल्लिह संगं, लेप मॅटिन्नव-समस्वच्छ-
मल्लयो विहायस्स, व्वण्णमेंन् गुरुनाथन्।

दुर्ज्जनतु विहीनमां दुर्लभ तीर्थ ह्रदम,
कज्जलोद्गम् मिल्लात्तोरु मंगल दीपम्,
पाक्पुकळ्, तीण्टीटात्त माणिक्य महानिधि,
पाष् निषलुण्टॉक्कात्त पूनिलावेन्ना चार्यन्।
शस्त्रमेन्निये धर्म संगरम् नटत्तुन्नोन्,
पुस्तक मन्ये पुण्याध्यापनं पुलर्त्तुन्नोन्,
औषध मन्ये रागं नशिप्पिपवन हिंसा-
दोष मन्निये यज्ञं चेयवक्नेम्नाचार्यन्॥

शाश्वतमहिंसयाणम्महात्माविन् व्रतम्,
शान्तियाणविटुन्नु पूजिक्कुं परदैवम्,

ओतुमारुण्टदेहमहिंसा मणिच्चट्ट
येतुटवाळिन् कोटुवायुत्तल मटक्कात्तू?
भार्यये क्कटत्तिय् धर्मत्तिन् सल्लापङ्ङळ्
आर्य सत्यत्तिन् सदस्सिकलॅ स्सगीतङ् ङळ्
मुक्ति तन् मणिमय क्कालुतळ क्किलुक्कङ् ङळ्,
मुट्टु मेन् गुरुविन्टे शोभन वचनङ् ङल्।
प्रणयत्ताले लोकं वेल्लुमी योद्धाविन्नो
प्रणवं धनुस्सात्मावाशुगं, ब्रह्मं लक्ष्यम्।
ओंकारत्तेयु क्रमाललियिच्चलियिच्चु
तान् केक्कॉल् लुन्नू तुलों सूक्ष्मामंशं मात्रम्॥

कृस्तुदेवन्टे परित्याग शीलवुं, साक्षात्
कृष्णनां भगवान्टे धर्म रक्षोपायवुम,
बुद्धन्ट्टेयहिंसयुं, शंकराचार्यरुटे

बुद्धि शक्तियुं, रन्ति देवन्टे दयावायुपुम,
श्रीहरिश्चन्द्रन्नुळ्ळ् सत्यवुं, मुहम्मदिन्

हिन्दी अनुवाद

वसुधा मेरा कुटुंब
तृण-पल्लव कीट-पतंग सब मेरे परिजन
त्याग ही है सम्पदा विनय ही है उन्नति
ऐसा मानने वाले योगज्ञाता मेरे गुरुदेव! जय!

तारक-रत्न-माला पहनाई जाय, ठीक है
काली-मेघ माला ओढ़ाई जाय, ठीक है
सर्व संग निस्संग, निर्लिप्त,
निरभ्र आकाश जैसे अकलंक मेरे गुरुदेव! जय!

मेरे गुरु ऐसे दुर्लभतीर्थ-ह्रदय हैं जो जन्तु रहित हैं
ऐसे हैं जिनमें नहीं फैलती है कालिमा
माणिक्य महानिधि हैं जिन पर नहीं फैलती है सर्प-छाया
जिसमें कभी छाँह नहीं ऐसी ज्योत्सना मेरे गुरुदेव! जय!

शस्त्रहीन धर्मयुद्ध,
ग्रंथहीन पुण्याध्ययन,
दवा बिना दर्द दूर करना
हिंसा दोष विरहित यज्ञ होता मेरे गुरुदेव! जय!

शाश्वत अहिंसा है महात्मा-व्रत
शांति है इष्ट देवी शुरू से
''किस तलवार को न मोड़ देता
अहिंसा का कवच''—सुना उस गुरू से!

प्रेम से लोक-विजय करता है यह योद्धा
प्रणव ही मनुज, आत्मा बाण, ब्रह्म लक्ष्य है
ओंकार धीरे-धीरे पिघला कर लेते हैं
अपने लिए केवल एक अंश सूक्ष्म हैं।

भगवान ईसा का वह महान बलिदान
श्रीकृष्ण जी की धर्म-रक्षा
बुद्ध-निर्वेद, शंकर की प्रतिभा
रन्तिदेव-करुणा, हरिश्चन्द्र का सत्य प्रण
मुहम्मद की दृढ़ता के एक साथ दर्शन
जिनमें हो वे मेरे गुरुदेव! जय!

मेरे गुरुदेव

—वल्लत्तोल नारायण मेनन

—नगारी लिप्यंतरण

स्थैर्यवु मोराळिळ् चेन्नोत्तु काणणमेंकिळ्
चेल्लुविन भवान्मारेन् गुरुविन् निकटत्ति
लल्लायूकिलविटुत्ते च्चारित्रं वायि क्कुविन्॥

हा! तत्र भवत्पाद मोरिक्कल् दार्शिच्चिन्नाल्
कातरनतिधीरन् कर्क्कशन् कृपावशन्,
पिशुक्कन् प्रदानोत्कंन्, पिशुनन् सुवचनन्,
अशुद्धन् परिशुद्ध, नलसन् सदायासन् !
आतत प्रशमनामत्तपस्वि तन् मुन्नि-
लाततायितन् कैवाळ् करिंकूवळ माल्यम्,
कूर्त्त दंष्ट्रकळ् चेर्न्न केसरियोरु मान्कु-
ञात्तोन्वि त्तटं तल्लुं वन् कटल् कळि प्पोयूका॥

कार्य चिंतन चेयूयुं नेरमन्नेताविन्नो
कानन प्रदेशवुं कांचन सभातलम्,
चट्टट्ट समाधियिल् एप्पैर्टुमायोगिक्कु
पट्टणं नटुत्तट्टु पर्वत गुहान्तरम्।
शुद्धमां तंकत्तत्तानल्लयो विळयिप्प-

तद्धर्मकृषकन्टे सत्कर्म वयल् तोरु म्।
सिद्धनामविटुत्ते त्तृक्कणी नत्तेकत्ते-
यिद्धरित्रि तन् वेरुं मञ्ञ मण्णयि क्काण्मू!
चामर चलनत्तालिळिच्चु काट्टुं पिशा
चामहा विरक्तनु पूज्य साम्राज्य श्रीयुम्!
एतु पूंकषलिन्नु मषल् तोन्नायूवानारि
स्वातंत्र्य दुर्गाध्वाविल् पट्टु कळ् विरिक्कुन्नु,
अत्तिरुवटि वल्ल वत्कत्तुण्टु मुट्टु-
त्तर्द्ध नग्ननायल्लो वाषन्नु सदाकालम्॥

गीतक्कु मातावाय भूमिये दृढमितु
मातिरि योरु कर्मयोगिने प्रसविक्कू
हिमवद्विंध्याचल सानु देशत्ते काण
शममे शीलिच्चेषु मित्तरं सिंहत्तिने-
गंगयारोषु कुन्नु नाट्टिले शरिक्कित्र
मंगळं कायूक्कुं कल्पपादह मुण्टाय् वरू!
नमस्ते गततर्ष, नमस्ते दुराधर्ष!
नमस्ते सुमहात्मन्, नमस्ते जगत्गुरो॥

हिंदी अनुवाद

उनके चरणों के एक बार कर दर्शन
कायर भी वीर, क्रूर भी कृपालु, कंजूस दानी
परुषवादी प्रियवादी, अशुद्ध शुद्ध और
आलसी भी मिहनती बनता है तत्क्षण

उस शांतिदाता परम तपस्वी के सम्मुख
आततायी का है खड्ग नीलोत्पल माला
भयानक दाढ़वाला केसरी भी मृग शावक
क्रीड़ा-पुष्कर है सागर उत्तुंग तरंगोंवाला

गंभीर कार्य चिंता-काल में उस अग्रणी को
कानन-प्रदेश भी है काँचन-सभा-मंडप-सा
निश्चल समाधि स्थिति होने पर योगी को
नगर-मध्यस्थल भी है गुहान्तर पर्वत का

उस धर्म-कृषक का सत्कर्म उपजाता
हर खेत में शुद्ध हेम सा
उस सिद्धपुरुष की दृष्टि में है स्वर्ण
मृत्तिका से भरी हुई पीली भूमि सा

उस महा विरागी को संपूज्य साम्राज्य श्री
चामर चलन से दाँत दरसाती डाकिनी
किसी मृदु, सूम-कोमल चरण को न पीड़ा गड़े
इसीलिए मुक्ति मार्ग पर जो बिछा रहा रेशम के पाँवडे
वह तो खुद वल्कल का टुकड़ा पहन रहता है अधनंगा

गीताजननी भारत में ही
ऐसे कर्मयोगी को जन्म देने की क्षमता
हिमवत्-विंध्याचल के मध्यप्रदेश में
शम साधना करते सिंह के हों दर्शन
गंगा जिस देश में बहती है उसी में
मंगल-फल् दाता ऐसे कल्प-वृक्ष का स्फुरण

नमस्ते गतवर्ष! नमस्ते दुराधर्ष!
नमस्ते सुमहात्मन्! नमस्ते जगद्गुरो!

राजघट्टिले पूक्कळ्

वी.ए. केशवन् नंपूतिरि

—नगारी लिप्यंतरण

कूप्पुकै प्पूमोट्टेन्ति नम्रशीर्षन् ञान् निलप्पू
बाप्पुविन् चितामण्डपत्तिल् "ॐ शान्तिः शान्तिः"
शान्तसुन्दरं ध्यानतप्परं परिसरं
स्वान्तमोरपूर्वानुभूतियाल् विकस्वरं!
वल्लिकळ् तळिर्च्चुण्टाळ् मंत्रिप्पितेन्तो, शब्द—
मिल्लाते प्रदक्षिणं वेय्क्कुन्न् बालानिलन्।
मुग्धमां सायाह्नमे, नी प्रतीचियिलेतु
रक्तसाक्षितन् चित्रं रचिप्पू चेंचोरयाल्?
विहगंङ् ङ् ळे, एतु संध्यतन् स्मृतियालो
वितुंपीटुन्नु निङ् ङ् किप्पोयुं—"हरे राम, राम!"
मर्क्कान् श्रमिच्चालुमोर्म्मकळ् कटन्नलिन्
निरपोल् मनस्सिनेक्कुत्ति नीट्टु न्नू मुट्टु!
चुटुकण्णुनीर् वीणु मण्डपमशुद्धमा—
यिटुमेन्नोर्कैप्पेट्टेन्निर्ङ् ङी ताषत्तु ञान्!
कल्लेर्ञ्ञुटल कीर्मांग्ळेयक्कांफ्रिक्कयिळ्
किल्ळेन्ये माप्पोकिक्कोण्टुतिर्त्त मन्दस्मितं,

हिंदी अनुवाद

नतमस्तक खड़ा हूँ बापू-समाधि पर
अंजलि में फूल लिये "ॐ शान्तिः"
शांत सुंदर ध्यानतप्तर वातावरण
अपूर्व अनुभूति में उमड़ता अंत:करण
लतिकाएँ जपती कुछ अधर-पल्लव से
मौनता बढ़ाता प्रदशिणा करता बालानिल!

ओ सुन्दर गोधूलिबेला तू प्रतीची में
किस शहीद की रँगती चित्र ल ाल रक्त से?
ओ विहगो! स्मृति में किस करुण संध्या के
अब भी बिलख-बिलख रोते हो—'हे राम!'
भूलने की चेष्टा तो करता हूँ बार-बार
ततैयों सी डस लेती है तेरी यादगार!
ऊष्ण आँसुओं से उस समाधि की पवित्रता
नष्ट न हो इसलिए मैं वेदी से उत्तरा।

ओ फूलो! देख रहा हूँ तुममें मैं विस्मित
समय-समय खिले हुए बापू के मंदस्मितः

राजघाट के फूल

—वी.ए. केशवन् नंपूतिरि

—नगारी लिप्यंतरण

दण्डियिल् सत्याग्रहं कोळुत्ति स्साम्राज्यत्व—
दण्डनीतिये दहिप्पिच्चतां मन्दास्मितं,
नवखालियिल् नीळे प्योङ्ङीय कठारिकळ
नरुमालकळाक्कि माट्टि मन्दस्मितं,

प्रार्थनलायत्तिकल् पतुङ्ङ्ङ्त्ती तुप्पिय
पाषि् रुळिने नोक्कि प्योषिच्चोरंत्यस्मितं—
चिरियायिरुन्नल्लो कर्मचन्द्र ने च्चूषुं
चरितं, महात्मावु निङ्ङळिल् चिरिक्कुन्नू!
राजघाट्टिले प्रदीपड्डळे, प्रत्याशयाल्
राष्ट्रङ्ङ् डल्लामिङ्ङ् डोट्टुटु नोक्कुन्नुण्टिप्पोळ्।
आणवशक्ति ज्वालचितरुं, शास्त्रत्तिनन्टे
बाण्ताल् चिर्कट्टु, पिटयुं बिश्वत्तिने
स्नेहत्ताल तलोटुवान् सिद्धार्थ द्वितीयनां
मोहनदासिन् दर्शनत्तिने कषिबुळ्ळू।
पूक्कळे, भरतोर्वी युगनेताविन् हृत्तिन्
पूक्कळे, दिगन्तजेतक्कळे, चिरिक्कुविन्!

हिंदी अनुवाद

अफ्रीका में पत्थर मार रहे गोरों को
क्षमा-दान देते हुए खिला हुआ मन्दस्मित

दांडी में सत्याग्रह जब तुमने शुरू किया
साम्राज्यवाद को थरथराता हुआ मंदस्मित
नोआखाली की गलियों में उठे हुए छुरों को
फूलों की मालाओं में बदलता हुआ खिला था
वह अंतिम मंदस्मित, प्रार्थना मंदिर में
छिपकर आग उगलती मृत्यु को देख खिला था
मंदस्मित ही है 'मोहनदास करमचंद' का जीवन
ओ फूलो! उनकी आत्मा खिलती है, तुममें

राजघाट के दीपों! अब सभी राष्ट्र देखते हैं
प्रत्याशा से इधर : विश्वास हो गया है सबको
अणुशक्ति के तीक्ष्ण बाण से घायल फड़फड़ाते हुए
विश्व को प्यार से सहलाने-जिलाने वाली
शक्ति केवल इस सिद्धार्थ-द्वितीय के दर्शन में है।
ओ फूलो! भारत के युग-नेता के हृदय के फूलो!
दिग्दिगंत विजेताओ, हँसते रहो!

****

"राष्ट्र के एकीकरण के लिए सर्वमान्य भाषा से अधिक बलशाली कोई तत्त्व नहीं। मेरे विचार में हिन्दी ही ऐसी भाषा है।"

लोकमान्य तिलक

****

पुस्तक समीक्षा

पड़ोसन (कहानी संग्रह)

[पुस्तक : पड़ोसन, लेखक : राजकुमार सैनी; प्रकाशक : राजेश प्रकाशन, जी-5/62 अर्जुन नगर, दिल्ली-51; मूल्य : 100.00 रुपए; प्रथम संस्करण —1997]

कहानी की मुख्य विशेषताओं में उसकी यथार्थपरकता, पठनीयता और रोचकता की चर्चा अक्सर की जाती है। राजकुमार सैनी की कहानियां उपर्युक्त के मद्देनजर उल्लेखनीय हैं। आलोच्य कहानी संग्रह ''पड़ोसन'' इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि यहां विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित उनकी अब तक की छोटी-बड़ी सभी कहानियां उपलब्ध हैं। हरेक कहानी का अपना मिजाज और अपना व्यक्तित्व है जिसमें लेखक ने अपने अनुभव और पर्यवेक्षण को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

''तुषार'' शीर्षक पहली कहानी मर्मस्पर्शी और युवा मनोविज्ञान की दृष्टि से स्वाभाविक है। तुषार कहानी की नायिका है जिसके चरित्र को केंद्र में रखकर कहानी रची गई है। इसलिए इस कहानी को नायिका प्रधान कहानी कह सकते हैं, हालांकि व्यक्ति मन की सच्चाइयों में झांकने का प्रयास यहां प्रमुख है। कहानी के उत्कर्ष पर तुषार की ''अंगूठी'' काफी देर तक जमीन पर पड़ी रहती है। ''काफी देर तक पड़ी रहती है''—इसका व्यंग्य है कि बाद में तुषार ने स्वयं उसे उठा लिया होगा। प्रेम की त्रिकोणात्मक स्थिति यहां दिखाई गई है। यहां प्रेम असफल होता है, क्योंकि प्रेम अगर विवाह में परिवर्तित हो जाता है तो उसे सफल कहने का प्रचलन है किंतु प्रेम का प्रेम होना भी क्या कम महत्वपूर्ण है ?

''हाथों से छूकर इन्हें रिश्तों का इल्जाम न दो
प्यार को प्यार कहो इसे कोई नाम न दो।''

तुषार-कमल और फिर कमल-कुमुद प्रेम के जोड़े हैं। शुरू में कहानी छिछली मुहब्बत की दास्तान लगती है, खासकर बस वाले प्रकरण में। बस वाला प्रकरण कहानी के विकास में कोई विशेष योगदान करता हुआ नहीं लगता। तुषार के प्यार में कमल की प्रतिभा दिग्भ्रमित होकर मुरझा गई है, यह बात अन्य घटनाओं से भी जाहिर है।

कमल के गांव में तुषार का जाना और इस कारण उसका हृदय परिवर्तन दिखाना अच्छी योजना है। इससे कहानी एक ओर गांव के उस परिवेश से जुड़ती है जो स्वभावत: निश्छल होता है तो दूसरी तरफ इससे तुषार के हृदय में कमल के लिए दबे प्रेम को नई ऊर्जा मिलती है। कमल का गांव का जीवन, उसके बूढ़े पिता का ऋषितुल्य जीवन, कमल की मां और बहन की निश्छलता, वहां का अकुंठ वातावरण सब ऐसा है जिससे तुषार के हृदय में लगभग नए प्रेम का उदय होता है।

कुमुद की अंगुली में अंगूठी को देखकर तुषार का तिलमिलाना नारी मनोविज्ञान की दृष्टि से बहुत ही सत्य है मानो, ''नारी न मोह नारी कर रूपा'' यहां चरितार्थ हो जाता है। कहानी के संदर्भों से साबित होता है कि तुषार कमल को अपनाना नहीं चाहती, पर जब उसे यह भान होता है कि कमल कुमुद के प्रति अनुरक्त है तो उसमें कमल के प्रति नए सिरे से सोचने की विकलता पैदा होती है। यही विकलता उसे कमल के गांव तक जाने के लिए विवश करती है।

लेखक ने किसी युवती के प्रेम में युवक की उलझनों और उसमें अपना लगभग सर्वनाश कर लेने का यथार्थ दिखाया है तो नारी मनोविज्ञान का यह सत्य भी दिखाया है कि किस तरह वह किसी अनुरक्त युवक के समर्पण को भुला नहीं पाती। भाषा की दृष्टि से यह कहानी बहुत ही सरल है, कहीं उलझाव नहीं है। भाषा की सीधी सरल रेखा पर कहानी विकसित होती चली जाती है जैसे सपाट सड़क पर कोई मोटर गाड़ी सरपट दौड़ी चली जाती हो।

''पड़ोसन'' शीर्षक कहानी अपने संस्मरणात्मक तेवर में उल्लेखनीय है। ऊपर से बातूनी और झगड़ालू प्रतीत होने वाली औरत भीतर से कितनी कोमल है जैसे नारियल के कठोर कवच के अंदर कोई मुलायम गीरी हो। लेखक की भाषा में अनुभव वास्तव की उष्मा है और लगता है कि लेखक के जीवन में ऐसा कोई जीता-जागता व्यक्ति जरूर रहा होगा। कठोरता के भीतर कोमलता, कर्कशता के कोश में करूणा, बदसूरती के भीतर सुंदर मन की पहचान संवेदनशील जनों को अवश्य ही छूती है।

''फ्रिज'' शीर्षक कहानी मध्यमवर्गीय जीवन और उपभोक्ता संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में पठनीय है। यह कहानी पाठक को अपने पास ''फ्रिज'' न होने की व्यथा में उपजी हुई लग सकती है। अभाव की व्यथा व्यंग्य के आवरण में कहानी का शिल्प पा गई है। सरकारी फ्लैटों का परिवेश, पर्दा और फ्रिज, पड़ोसी का जीवन और उसकी मानसिकता और इन सभी चीजों के बरकश अपनी स्थितियों पर प्रतिक्रिया कहानी की विषयवस्तु है। ''फटीचर टाइप'' पड़ोसी का हुलिया बताते हुए लेखक के शब्द हैं—''देखने में यह बिल्कुल चिड़ीमार जैसे लगते हैं। अखबार लेने को फिजूल-खर्ची मानते हैं।'' (पृष्ठ-31) फ्रिज के प्रति निम्नमध्यमवर्गीय लोगों के सम्मोहन पर कटाक्ष देखिए—''छैला-सा खड़ा है मीडियम साइज का फ्रिज।'' (वही पृष्ठ-31) फ्लैटों का यह मानवीकरण देखने लायक है—''दोनों के दरवाजे खुले रहते हैं और पारस्परिक सद्भाव के साथ दोनों एक-दूसरे को ताकते रहते हैं'' (पृष्ठ-30) सरकारी फ्लैटों में आमने-सामने रहने वालों में सौमनस्य बहुत विरल होता है।

संपूर्ण रूप से बात करें तो रोजी-रोटी के लिए संघर्ष करते आदमी का परिवेश इन कहानियों के मुख्य सरोकार हैं। ''रोज की लड़ाई'' ऊपर-ऊपर भी चलती रहती है और भीतर भी। अत: इस संग्रह में इस शीर्षक से न केवल एक कहानी दी गई है, बल्कि अधिकतर कहानियों की आत्मा में यह सत्य की तरह उपस्थित है। ''रोज की लड़ाई'' यानी दिन-प्रतिदिन की जद्दोजहद है यहां जो कि आज के जीवन में सर्वत्र देखने को मिलता है।

आर्थिक बदहाली में जीवन कितना कष्टप्रद हो जाता है, इसका एक सच्चा ब्यौरा यहां देखा जा सकता है। कामगार आदमी की पत्नी के सामने पेश आ रही जटिलता का बहुत ही आत्मीय चित्रण सैनी जी ने किया है। कभी-कभी अंधेरा इतना गहरा होता है कि उससे उजाला फूटने का विश्वास टूटता लगता है। "शारदा नन्दन" कहानी सुमित्रानंदन पंत के जीवन पर आधारित रूपक प्रतीत होती है। कहानी में रचित लोक की संवेदना अच्छी बात कहानी के निकट है।

"पिस्तो" कहानी प्रेम संवेदना में लिखित है। पिस्तो के रूप पर उमड़ा बचपन का प्यार अंततः चकनाचूर हो जाता है। तनाव का वर्णन देखिए—"स्थिति ही ऐसी हो गई थी कि या तो आदमी रो सकता था या जोर से चीख सकता था। लेकिन ऐसा कहना शिष्टाचार के विरूद्ध था। मैं जैसे समाधिस्थ हो गया और अंधकार के सिवा मुझे कुछ भी दिखाई नहीं दिया।" (पृष्ठ-53) सौंदर्य वस्तु में नहीं, वरन् उसके प्रभाव में निहित होता है। कहानी में प्रेमातुर मन "पिस्तो" के रूखे व्यवहार से टूटता है : "जाते समय मैंने अंतिम बार पिस्तो की ओर निहारा था तो मुझे लगा था कि वह सौंदर्य की प्रतिमा नहीं रही। .....सिर्फ ग्लैमर ही ग्लैमर था।" (पृष्ठ-53)

शिल्प और भाषा में किसी मजे हुए कहानीकार जैसी प्रौढ़ता बहुत अधिक नहीं लगती। फिर भी बोलचाल और सामान्य भाषा का रचनात्मक प्रयोग यहां देखा जा सकता है। केवल लिखने के लिए ये कहानियां लिखी गई नहीं हैं, बल्कि भीतर की अकुलाहट इसकी प्रेरणा है। यहां संकलित 26 कहानियां सैनी जी की प्रतिनिधि कहानियां हैं जिसमें जीवन के अनुभवों को रचना शिल्प में पेश किया गया है। प्रेम, सामाजिक संघर्ष, आर्थिक तंगी, उपभोक्ता संस्कृति की विडंबनाएं आदि इसके विषय हैं।

रचनात्मकता के संदर्भ में अक्सर शाश्वत महत्व और कालजयी जैसी बातों का जिक्र किया जाता है। इस संदर्भ में सैनी जी का स्पष्ट मानना है कि "कोई रचना या रचनाकार अमर नहीं है, क्योंकि काल किसी को नहीं छोड़ता, अंतर केवल अवधि का है। .....मैं भी नश्वर हूं और मेरी कहानियां भी, तथापि जब तक वे पाठकों के लिए पठनीय हैं, प्रासंगिक है और सार्थक हैं तभी तक वे आयुष्मती हैं।" (आप बीती, जगबीती आमुख से) यहां इस कथन में यह बात अंतर्निहित है कि रचना कर्म जीवन और समाज के साथ रचनाकर के संबंधों का दस्तावेज होता है। चूंकि रचनाकार और लेखक समाज का एक संवेदनशील और जागरूक प्रतिनिधि होता है, अतः उसका कर्त्तव्य है कि वह अपने अनुभव और देखे हुए सत्य को दर्ज करे। सैनी जी ने अपनी इन कहानियों में यह कार्य बखूबी किया है।

ईश्वर चंद्र मिश्र, डी-12/94, सेक्टर-7,
रोहिणी, दिल्ली-85

रबिया

[पुस्तक : रबिया; लेखक : मुहम्मद अलीम; प्रकाशक : पिजन बुक हाउस, ए-8, अबुल फज़ल एन्कलेव-II, जामिया नगर, नई दिल्ली; मूल्य : 29.00 रुपए]

मुहम्मद अलीम द्वारा लिखित तथा 'उर्दू अकादमी' दिल्ली द्वारा पुरस्कृत नाटक 'रबिया' एक निम्न मध्यवर्गीय परिवार में जन्मी तथा पली-बढ़ी हुई रबिया नामक लड़की की कथा (कहानी) है, जो विवाह के बाद अपनी इच्छानुसार वर की प्राप्ति न होने पर गमगीन हो समस्त सुखों को तिलांजलि दे देती है। विवाह के बाद वह अपनी ससुराल को अपना नहीं मान पाती। वहाँ उसका दम घुटता है और उसे कुछ भी अच्छा नहीं लगता। उसके मन में अपनी ससुराल के प्रति मुहब्बत नहीं उत्पन्न होती। वह अपने पिता के घर ही रहना चाहती है, चाहे उसे सारी जिंदगी वहाँ गुलामी करनी पड़े परंतु वह कभी भी ससुराल न जाने का दृढ़-निश्चय करती है ओर उस पर अडिग रहती है।

'रबिया' यद्यपि एक मुस्लिम परिवार से संबंद्ध (कथा कहानी) है परंतु एक परिवार विशेष की (कथा कहानी) होते हुए भी संपूर्ण भारतीय परिवेश को, उसके सामाजिक एवं पारिवारिक वातावरण को चित्रित करती है। लड़की की इच्छा जाने बिना अनमेल विवाह कर देना, बेटियों को बोझ मानना, शादी के बाद पिता के घर रहने पर माता-पिता का परेशान होना, संबंधियों और पड़ोसियों का तरह-तरह की बातें बनाना और बदनामी करना भारतीय समाज की कुछ ऐसी कुरीतियाँ और विचार-पद्धतियाँ हैं जो सर्वत्र आसानी से देखी जा सकती है। साथ ही रबिया और उसकी भाभी के चरित्र के माध्यम से कुछ प्रश्नों को भी उठाया है तथा भाभी के संवादों के माध्यम से सामाजिक-सत्य को भी उद्घटित किया है। रबिया द्वारा भाभी से यह पूछने पर कि ".....क्या इस घर में अब मेरा गुजारा नहीं हो सकता भाभी?" वह उत्तर देती हैं "बेटियों के लिए शादी के बाद मैका कुछ नहीं होता मेरी बहन। .....एक पराया घर। ..... लोग तुमसे यह न पूछेंगे कि रबिया अपने घर आई हो। बल्कि यह पूछेंगे कि रबिया अपने घर कब जाओगी।" वह उस प्रश्न को उठाती हैं, जो शायद प्रत्येक भारतीय नारी के मन में अपने पिता का घर छोड़ते हुए, पैदा होता होगा कि "मर्दों को अपना घर क्यों नहीं छोड़ना पड़ता। यह सारी मुसीबत हम औरतों के लिए ही क्यों?" सामाजिक परिवेश की विवशता के कारण ही पति के घर छोड़कर चले जाने पर भी वह बरसों से सुसराल में रही। दूसरी ओर माता-पिता भी बेटी का विवाह कर अपने उत्तरदायित्व से मुक्त हो जाते हैं। विवाह के बाद बेटी किस हाल में है यह उनके लिए चिन्ता का विषय नहीं रहता। साल-छः महीने में एक बार बुलाकर ही उनका फर्ज पूरा हो जाता है। माता-पिता के इस चरित्र पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए रबिया यह प्रश्न करती है "क्या लड़कियाँ बोझ होती हैं भाभी?" इस बोझ से छुटकारा पाने के लिए वह बेहतर जोड़ी का भी ध्यान नहीं रखते और यदि बेटी सुसराल छोड़कर घर आ बैठे तो उसके भविष्य की सुरक्षा की दुहाई देकर पुनः अधेड़ व्यक्ति से विवाह तय कर उसकी बची-खुची आकांक्षाओं का भी गला घोंट देते हैं।

एक अंक और दस दृश्यों में विभाजित इस नाटक का कार्य-व्यापार तीन कार्य-स्थलों पर घटित होता है। पहला रबिया के पिता महमूद का घर जहाँ रबिया के कहकहे और आवाज़ विवाह से पूर्व गूंजती थी। दूसरा रबिया के पति अब्दुल खबीर का घर जहाँ विवाह के बाद भी ख़ामोशी छाई रहती है तथा तीसरा रबिया की बड़ी अम्मी का घर जहाँ रबिया व उसके परिवार के प्रति तरह-तरह की टीका-टिप्पणी की जाती है। रबिया की पूरी कथा लगभग एक वर्ष की समयावधि में सिमटी हुई है। कथा का आरंभ रबिया के खुशमिजाज एवं एक शोख अल्हड़ लड़की के रूप में होता है। फिर उसके विवाह की खुशियाँ मनाई जाती हैं। विवाह के बाद उसका व्यवहार एकदम बदल जाता है। बेमेल पति को प्राप्त कर उसका मन खेद और वितृष्णा से भर जाता है और यह वितृष्णा उसकी मृत्यु के बाद भी

समाप्त नहीं होती। इस नाटक की कथा-स्थितियाँ तीव्र गति से परिवर्तित होती गई हैं। इसका कारण शायद यह है कि नाटककार एक व्यक्ति की विडम्बनात्मक परिणति के पीछे परिचालित सामाजिक परिवेश को समग्रता से उद्घाटित करना चाहता है। सामाजिक परिवेश ही अब्दुल खबीर को आत्महत्या के लिए विवश करता है। सामाजिक परिवेश ही रबिया के माता-पिता को पुन: उससे दुगुनी उम्र वाले व्यक्ति से विवाह के लिए बाध्य करता है। सामाजिक परिवेश ही रबिया की निंदा कर उसे बदनाम कर देता है। समग्रत: समाज की कुरीतियाँ ही व्यक्ति के विकास में बाधा डालती हैं और उसकी अभिलाषाओं तथा आकांक्षाओं का गला घोंटती हैं।

इस नाटक के सभी पात्र समाज के मध्यम-वर्ग से जुड़े हैं। यह वर्ग सामाजिक मर्यादाओं एवं नैतिकताओं का पोषक और पालक होता है। फलत: भाभी और रबिया ही उस सामाजिक ढांचे के प्रति असंतुष्ट दिखाई देती हैं। शेष सभी पात्रों में सामाजिक रीतियाँ, नैतिकताएँ और मर्यादाएँ रची-बसी हैं। सही अर्थों में रबिया ही इस सामाजिक ढांचे को तोड़ने का प्रयत्न करती नज़र आती है किंतु इस ढांचे को तोड़ने के क्रम में वह स्वयं टूटती-बिखरती जाती है। इसके विपरीत भाभी के मन में सामाजिक परिवेश के प्रति असंतोष तो है, किंतु वह रबिया की भांति उसे नाकार या तोड़ नहीं पाती।

नाटक में नाटककार ने कई संकेतों और दृश्य-बंध की नियोजना द्वारा भी पात्रों की स्थितियों एवं परिस्थितियों को व्यक्त किया है। नाटक के प्रथम दृश्य का दृश्य-बंध ही एक गरीब परिवार की आर्थिक स्थिति को स्पष्ट करता दिखाई देता है। साड़ी में पैबंद लगाती भाभी की क्रिया इस आर्थिक संकट को और स्पष्ट कर देती है। अब्दुल कादिर के घर का दृश्य-बंध उनकी बेहतर आर्थिक-स्थिति को उद्घाटित तो करता है किंतु उनके घर में छाई खामोशी दर्शक को भावी खतरे की सूचना अवश्य दे देती है। इसी प्रकार नाटक के अंत में रबिया के पुनर्विवाह की चर्चा के बाद उसे घेरता हुआ अंधेरा उसकी विडम्बनात्मक परिणति की अप्रत्यक्ष रूप से सूचना देता है।

सारत: रंगमंच की दृष्टि से यद्यपि रबिया बहुत प्रौढ़ नाट्य कृति नहीं है किंतु इसकी संकल्पना में रंगमंच विद्यमान है। यह नाटक एक पारंपरिक मुस्लिम विवाह की ही ट्रैजेडी नहीं वरन् भारतीय परंपरागत विवाह-पद्धति की खामियों को उद्घाटित करने वाला और उन रूढ़ परंपराओं के प्रति जागरूक करने वाला नाटक है जो स्त्री की विवाह संबंधी स्वंतत्रता का हनन करती हैं।

—रेणु अरोड़ा, ई-34, से०-15, नौएडा

हिन्दी : मत-अभिमत: प्रामाणिक उद्धरण कोश

[पुस्तक : हिन्दी : मत-अभिमत; लेखक : डॉ० विमलेश कांति वर्मा; प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार; प्रकाशन वर्ष 1996; मूल्य : 100 रुपए]

हिन्दी भारत के सर्वाधिक व्यक्तियों द्वारा बोली जाने वाली भाषा ही नहीं है, विश्व के भी अनेक देशों में इसका व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ है। प्रवासी भारतीय के माध्यम से मारिशस, फिजी, इंडोनेशिया, त्रिनिडाड तथा टोबैगो आदि अनेक देशों में पहुँची हिन्दी आज लगभग विश्वभाषा का स्थान ले चुकी है। भारत में ही हिमालय से सिंधु पर्यन्त यह बोली अथवा समझी जाती है, फिर भी इसके महत्व, भारत में ही प्रचार-प्रसार तथा इसे राजभाषा का स्थान वास्तविक अर्थों में दिए जाने को लेकर विद्वानों, राजनीतिज्ञों तथा समाज के लगभग सभी वर्गों द्वारा समय-समय पर चर्चा होती रही है। इस चर्चा ने कभी वाद-विवाद का स्वरूप भी ग्रहण किया है। हिन्दी मत-अभिमत में विभिन्न समय पर विद्वानों एवं चिन्तकों द्वार प्रकट किए गए विचारों के सार तत्व को लेखक ने एक स्थान पर प्रस्तुत किया है जिससे हिन्दी के विकास की गति और दिशा का सम्यक् ज्ञान अनायास प्राप्त हो जाता है।

आलोच्य ग्रंथ सामान्यत: एक उद्धरण ग्रंथ है, परंतु इसमें लेखक ने जिस प्रकार से विषय का वर्गीकरण कर उसे अध्यायों एवं उपअध्यायों में विभाजित किया है, उससे इसने हिन्दी: सम्बन्धी एक संपूर्ण ग्रंथ का ही स्वरूप ग्रहण कर लिया है। ग्रंथ 'हिन्दी' अर्थ व स्वरूप, हिन्दी की महत्ता, हिन्दी : विविध आयाम, हिन्दी : प्रचार व प्रसार तथा देवनागरी लिपि—इन पाँच अध्यायों में विभाजित है जिन्हें अर्थ परिधि, विविध नाम, क्षेत्र, हिन्दी की उपभाषाएँ, व्यापकता, उपयोगिता, जनभाषा, हिन्दी की वर्तमान स्थिति, हिन्दी और भारतीय संविधान, हिन्दी व प्रांतीय भाषाएँ, हिन्दी और अंग्रेजी, देवनागरी अंक/अंतर्राष्ट्रीय अंक आदि तैंतीस उपअध्यायों में विभाजित किया गया है। इनमें हिन्दी का क्षेत्र उपबोलियाँ आदि यदि हिन्दी के भौगोलिक स्वरूप को स्पष्ट करते हैं तो राष्ट्रभाषा, राजभाषा, संपर्क भाषा तथा विश्वभाषा उसके सामाजिक-सांस्कृतिक महत्व के निदर्शक हैं। स्पष्ट है कि हिन्दी सम्बन्धी कोई भी विषय इस ग्रंथ के लिए अविषय नहीं है और कोई भी विषय इससे छूटा नहीं है।

हिन्दी: मत-अभिमत का एक वैशिष्ट्य यह है कि इसमें भारतीय समाज के सभी वर्गों के विद्वानों-चिन्तकों के मत को संगृहीत किया गया है। ये विद्वान राजनीति, धर्म, दर्शन, विधि, इतिहास, साहित्य, भाषा, पत्रकारिता आदि क्षेत्रों में अपनी विशिष्ट पहचान रखने वाले हैं। इनमें कुछ प्रमुख चिंतक हैं—महर्षि अरविंद, सोम आनंद, इंशा अल्ला खाँ, मोहन दास गाँधी, सुनति कुमार चटर्जी, सैयद शबाउद्दीन, अब्दुल रहमान, नीहार रंजन रे, सी. राजगोपालाचारी, दीवान बद्रीनाथ, रघुबीर, राम मनोहर लोहिया आदि। स्पष्ट है कि इसमें भारत के लगभग सभी प्रांतों के हिन्दी तथा हिन्दीतर भाषाओं के विद्वान शामिल हैं जिससे सम्पूर्ण भारत में हिन्दी का वास्तविक स्वरूप सामने लाने में मदद मिली है। विदेशी राजनीतिज्ञों, साहित्यकारों, वैयाकरणों और भाषाविदों के विचारों को भी इस ग्रंथ में स्थान मिला है। ऐसे विद्वानों में प्रमुख हैं—एस. एच. केलाग, एम. पी. कोइराला, एफ. एस. गांउज, जी. ए. ग्रियर्सन, रेमण्ड सी. पिल्लई, भारत वी. मारिस, डब्ल्यू. येट्स, फ्रेडरिक जॉन शोर आदि। स्पष्ट है कि इनमें वे विदेशी विद्वान भी हैं जो भाषाविद् हैं, जिन्होंने हिन्दी संबंधी सर्वेक्षण किए हैं, व्याकरण-ग्रंथ लिखे हैं और वे भी जो विदेश में रहकर हिन्दी में साहित्य-रचना कर रहे हैं। निश्चय ही, ऐसे विद्वानों की दृष्टि से हिन्दी का जो अन्तरराष्ट्रीय स्वरूप प्रकट होता है, वह उसे विश्व के भाषायी मानचित्र पर अधिक प्रामाणिकता के साथ रेखांकित करता है।

राष्ट्रभाषा हिन्दी भारत की सम्पर्क भाषा के रूप में मान्यता प्राप्त करे, इसका प्रयास लम्बे समय से अनेक हिन्दीतर भाषा-भाषी विद्वानों ने भी

किया है। अंग्रेजी की तुलना में हिन्दी के माध्यम से आम भारतीय अपने मनोभावों, योजनाओं और चिंतन को सम्पूर्णता के साथ सामान्य जन और शासक वर्ग के सम्मुख रख सकता है। वी. वी. गिरि, ज्ञानी जैल सिंह, पी. वी. नरसिंहाराव से लेकर सुनीति कुमार चटर्जी और के. भाष्यम् तक सभी अहिंदी भाषियों की ऐसी ही मान्यता रही है—"कुछ लोग यह कहते हैं कि हिंदी के प्रयोग पर जोर देने से देश का विखंडन हो जाएगा। क्या यह सच है? दूसरी ओर असलियत यह है कि अगर केन्द्रीय प्रशासन में हिंदी धीरे-धीरे लाई जाए तो देश के एक क्षेत्र के जनमानस की भावनाओं को दूसरे क्षेत्रों के निवासियों के समक्ष अंग्रेजी के बजाय हिंदी में व्यक्त करने का मौका मिलेगा और वह पहले से कहीं अधिक प्रभावशाली होगा।" (के. भाष्यम्, पृ. 94) इससे यह भी स्पष्ट होता है कि दक्षिण भारत में हिंदी का तथाकथित विरोध न तो वहाँ के सामान्य जन के मन में है और न ही विद्वानों-चिंतकों के मन में। देश के कुछ अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोग और राजनीतिज्ञ अपने निहित स्वार्थों के कारण अभी भी अंग्रेजी की 'फूट डालो-राज करो' की नीति से सामान्य जन को मूर्ख बनाने का उपक्रम करते नजर आते हैं।

स्वाधीनता प्राप्ति के पचास वर्ष बाद भी हिन्दी भारत में अभी तक न तो राजभाषा का स्थान ग्रहण कर पाई है और न ही इसके गम्भीर प्रयास अभी तक नजर आ रहे हैं। वास्तव में तो इस ग्रंथ की रचना का एक प्रमुख कारण लेखक की यह पीड़ा ही है कि आजादी के बाद भी हिन्दी को उसका उचित स्थान नहीं मिल पाया है। अंग्रेज़ों के समय में उनके विरुद्ध हिन्दी सब भारतीयों का सहारा थी, परन्तु स्वतंत्रता के पश्चात हमारे लिए जातीयता, प्रांतीयता, धन, पद, यश महत्वपूर्ण हो गए। देश की एकता, अखण्ड़ता का महत्व सिर्फ किताबों और भाषाओं में सिमटकर रह गया। (भूमिका) ऐसे में इस ग्रंथ में दिए गए उद्धरण इस तथ्य को पुनः रेखांकित करते हैं कि हिन्दी देश की एक मात्र ऐसी भाषा है जो राजभाषा और राष्ट्रभाषा की दृष्टि से सर्वाधिक उपयुक्त एवं सबके लिए समान रूप से ग्राह्य है। निम्नलिखित उद्धरण इस तथ्य का स्पष्ट निदर्शक है—"मैं यह भी जानता हूँ कि अगर कोई देशी भाषा राष्ट्रभाषा बन सकती है तो वह हिन्दी ही है।.....हिंदी का स्वदेशीपन, हिन्दी में रही संस्कृत की शब्दावली और हिंदी में प्रादेशिक शब्द हजम करने की शक्ति—ये तीन गुण इतने जबरदस्त हैं कि हिंदी स्वराज्य-भारत की राजभाषा और राष्ट्रभाषा होकर ही रहेगी"—काका साहब कालेलकर, पृ. 90

प्रस्तुत ग्रंथ का एक महत्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि इसमें संविधान सभा के सदस्यों के हिन्दी सम्बन्धी विचारों को पर्याप्त महत्व दिया गया है। इस ग्रंथ के स्वरूप की दृष्टि से यह आवश्यक भी था। वास्तव में भारत में हिन्दी की जो स्थिति आज है उसका एक प्रमुख कारण संविधान-रचना के समय इन सदस्यों द्वारा व्यक्त किए गए विचार ही हैं। ये विचार हमें इस बात का बोध कराने में सक्षम हैं कि उस समय किन परिस्थितियों में हिन्दी को अंग्रेजी के साथ राजभाषा बनाने का निर्णय लिया गया और हिन्दी की आज की दुरवस्था की पूर्व पीठिका क्या है?

हिन्दी की वर्तमान स्थिति और उसके प्रचार-प्रसार की आवश्यकता पर बल देने वाले उद्धरणों के साथ ही लेखक ने ऐसे उद्धरण भी प्रमुखता के साथ प्रस्तुत किए हैं जो इस ओर संकेत करते हैं कि हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि के प्रचार में सावधानी की अत्याधिक आवश्यकता है। यद्यपि हिन्दी भाषियों का यह दायित्व बनता है कि वे सामान्य अहिन्दी भाषी की भावनाओं और निहित स्वार्थी तत्वों का ध्यान रखते हुए इसके प्रचार-प्रसार का प्रयास करें। परन्तु वास्तविक स्थिति यह है कि इस सम्बन्ध में विद्वानों में पर्याप्त मतभेद रहे हैं। विद्वानों का एक वर्ग हिन्दी प्रचार को प्रांतीय भाषाओं की प्रगति में बाधक मानता है (जी. दुर्गा बाई, पृ. 152), दूसरा देशहित के नाम पर जबरदस्ती की संस्कृतनिष्ठ हिन्दी का प्रचार करने के पक्ष में है (विनायक दामोदर सावरकर, पृ. 152), तो तीसरा समन्वयवादी वृत्ति का पक्ष लेते हुए हिन्दी के प्रचार का पक्षधर है। (काका साहब कालेलकर, पृ. 154-155)

प्रस्तुत ग्रंथ लेखक ने अत्यंत अध्यवसायपूर्वक लिखा है। इसका प्रमाण यह है कि इसमें विभिन्न देशी-विदेशी विद्वानों के भाषणों, लेखों आदि के मूल ग्रंथों तक पहुँचने का प्रयास किया गया है। इसके अतिरिक्त अनके प्राचीन अभिलेखों, हिन्दी-अंग्रेजी के देशी-विदेशी ग्रंथों तथा साहित्य की अन्यान्य विधाओं में प्रयत्नपूर्वक सम्बन्धित सामग्री को खोजने का प्रयास किया गया है। इन उद्धरणों से यह ग्रंथ समृद्ध हुआ है और पाठक को भारत तथा अन्य देशों के विद्वानों के हिन्दी संबंधी चिंतन को जानने का अवसर मिला है।

'हिन्दी: मत-अभिमत' विभिन्न विद्वानों द्वारा समय-समय पर दिए गए हिन्दी संबंधी वक्तव्यों का संग्रह मात्र नहीं है वरन् यह एक प्रकार का उद्धरण कोश ही बन गया है, जिसमें सभी उद्धरणों को ससंदर्भ प्रस्तुत किया गया है। व्यक्ति संदर्भ, संक्षेप संकेत और प्रत्येक उद्धरण के साथ दी गई कूट संख्या ने इसकी उपयोगिता को बढ़ा दिया है। ग्रंथ को अधिक उपयोगी बनाने के लिए अन्य भाषाओं में व्यक्त हिन्दी संबंधी विचारों को अनूदित रूप में प्रस्तुत किया गया है। लेखक के अनुसार, "संभवतः पहली बार उद्धरणों के साथ संदर्भ भी दिए गए हैं, जिनमें तिथि, अवसर तथा जहाँ से सामग्री ली गई है, उस स्रोत का भी उल्लेख है.....। हिंदी के संबंध में दिए गए अहिंदी भाषा-भाषी विचारकों के वक्तव्य सामान्यतः या तो अंग्रेजी में हैं या उनकी अपनी भाषा में। सहज बोधगम्यता तथा व्यापक पाठक वर्ग को दृष्टि में रखते हुए प्रस्तुत ग्रंथ में वे सारे वक्तव्य हिंदी में अनूदित रूप में दिए गए हैं। जहाँ अनुवाद उपलब्ध थे वहाँ वे उसी रूप में दे दिए गए हैं और उनके स्रोत का भी उल्लेख कर दिया गया है, अन्यत्र अनुवाद मैंने स्वयं किए हैं।" (भूमिका)

समग्रतः 'हिन्दी: मत-अभिमत' एक ऐसा उद्धरण कोश है जो अनेकानेक विचारकों के हिन्दी सम्बन्धी मत-मतान्तर और इस माध्यम से उनकी निजी मानसिकता का दर्पण ही बन गया है। यह हिंदी के विकास की कहानी लेखक के नहीं, वरन् अन्य विचारकों के माध्यम से कहने में सफल हुआ है। हिन्दी की लगभग सभी आयामों को चित्रित करने और अन्य लिपियों की तुलना में देवनागरी के महत्व को इंगित करने वाले इस प्रामाणिक कोश को प्रस्तुत कर लेखक ने एक अभाव की पूर्ति ही नहीं की है, हिंदी के विद्यार्थियों को इस दिशा में और अधिक सोचने के लिए प्रेरित भी किया है। इस अध्यवसाय पूर्ण प्रस्तुति के लिए लेखक निश्चय ही बधाई का पात्र है।

—डॉ. मुकेश अग्रवाल, 42-कादम्बरी,
सैक्टर 9, रोहिणी, दिल्ली - 110085

प्रेम और युद्ध

[पुस्तक : प्रेम और युद्ध; लेखक : शंकर सिंह; प्रकाशक : पूर्वांचल प्रकाशन, 1180 ए ब्लाक, सोनिया विहार, दिल्ली - 110094, मूल्य : 110 रुपए]

मध्ययुगीन रोमांचक आख्यानों की काव्य परम्परा में 'लोरिकायन' या लोरिकी, आल्हखण्ड, भरथरी, वनजरवा, विडुला व चन्दायन आदि लोकजीवन में बहुश्रुत हैं। इनमें से कई एक अब छप चुके हैं जो सनुकर या टेपों की सहायता से पुस्तकाकार हुए हैं। परन्तु लोरिकी का बहुश्रुत कव्या-ख्यान नहीं प्राप्त हुआ। इसी श्रंखला में श्री श्याम नारायण पान्डेय (बलिया) के टेपों की सहायता से 'लोरिकी' को छपवाने की योजना बना रहे थे। इसी प्रयास हेतु उन्होंने डा. नित्या नन्द तिवारी जो "मध्ययुगीन रोमांचक आख्यान" शेधग्रन्थ लिखा, उनकी 400 पृष्ठ की हस्तलिखित पांडुलिपि भी ले गये। अब वो सम्भवत: विदेश (अमेरिका) में रहकर प्रयत्न कर रहे हैं।

'लोरिकी' उत्तर प्रदेश के भोजपुरी क्षेत्र व इससे लगता हुआ बिहार के क्षेत्र में बहुधा गाई व सुनी जाती है। गद्य परम्परा में डा. हजारी प्रसाद का 'पुनर्नवा' उपन्यास इसी लोक-गाथा के आधार पर बहुचर्चित हुआ। शंकर सिंह जो लोरिकी के जन्म व कर्म स्थल से जुड़े हुए हैं, बहुत श्रम-साधना के रूप में यह प्रामाणिक उपन्यास लोकानुरंजन हेतु उपलब्ध कराया है, वे हार्दिक बधाई के पात्र हैं।

उपन्यास सरल भाषा में लिखा गया है जो सुबोध और ग्राह्य है। कथा में निरन्तरता व रोचकता बनी रहती है। इतिहास पुरुष यादववंशी लोरिक की कथा शौर्य गाथा है और भारतीय सभ्यता व संस्कृति की महान धरोहर है। उपन्यास लोरिक की आत्मकथा के रूप में उभरा है जिसका निर्वाह बड़ी सहजता से हुआ है। इस कथा यात्रा में रहस्य, रोमांच, प्रेम, जय-पराजय, हानि-लाभ व जन-कल्याण लगातार प्रतिपादित होते हैं।

मनियार कुल में कुब्बे मनियार के यहाँ गौरा गांव में लोरिक का जन्म हुआ। यह गांव गंगा के किनारे बसा हुआ छोटा-सा गांव है। खुल्हनी मां साहसी व धर्म परायण महिला थी। लोरिक का बड़ा भाई संवरु गंगा का पहला वरदान था खुल्हनी के लिये। और लोरिक दूसरा वरदान। गंगा माई ने स्वयं प्रकट होकर खुल्हनी को वरदान स्वरूप अमृतफल दिया और पुत्रवती होने का आशीर्वाद दिया और कृष्ण जन्माष्टमी के दिन ठीक बारह बजे रात लोरिक का इस धरती पर पादुर्वाव हुआ। इन्द्र के दरबार के एक बीर एत्ती को ब्रह्मा का आदेश था कि खुल्हनी के गर्भ से गंगा का वरदान प्रमाणित करे। मंगरा नामक दिव्य अश्व भी धरती पर आता है और ब्रह्मा जी विजयी होने का आशीर्वाद भी देते हैं। साथ ही शक्ति की प्रतीक दुर्गा मां का वरद हस्त भी उसके ऊपर आजीवन रहे, इस बात का भी आश्वासन देते हैं। लौह-पिण्डी नाभि नाल होने के कारण लोरिक नाम पड़ा जिसे माँ खुल्हनी लोरिका पुकारती थी।

सांवर व लोरिक अजबू गुरू के आश्रम में कुश्ती, तलवार बाजी घुड़सवारी व भाला चलाने में दक्ष हुये। अजबू गुरू के प्रवचन तृप्ति, मुक्ति व पूर्णता का पाठ पढ़ाते। साथ ही धर्म से कर्म को साथ ही रखने का उपदेश भी।

शोषण, दमन व उत्पीड़न के खिलाफ लोरिक का पहला युद्ध अगोरी के राजा मोलागत के विरुद्ध हुआ। महरा सेठ की कन्या मंजरी को मोलागत अपने रनिवास की शोभा के लिये लालायित है। पंडित चिन्तामणि की बातों को अनसुना करके निकाल देता है अपमानित करके। मंजूरी की मां महलि अपनी बेटी की इज्जत के लिये अपने भाई सुवायन व मोहिनी पंडित को अपनी योजना बताती है। वे दोनों नाई के साथ गौरा जाकर लोरिक के साथ मंजरी के परिणय की बात चलाते हैं। स्थानीय राजा सहदेव की पुत्री चन्दा भी इर्ष्या से अपना तिलक भिजवाती है। चन्दा का तिलक लौटा दिया जाता है। और दूसरे दिन बारात अगोरी के लिये चल पड़ती है। रास्ते में कोटासे गांव का क्षत्रिय राजा वसुदेव प्रतिरोध करने आया। पर सॉवर व लोरिक बिजली जैसी तलवार से वसुदेव की सेना का सर्वनाश करते हैं। मोलागत चिन्तित होता है। लोरिक व सांवर व्यापारी के वेश में मंजरी को देखते है। उसका मोहक रूप लोरिक को आकर्षित करता है। पं. चिन्तामणि की योजनानुसार मंजरी का विवाह होता है। लोरिक मंजरी की मांग में सिन्दूर भर कर उसे सुहागिन बनाता है। गंगिया नाई से खबर पाकर लोरिक बयालिस हाथ उपर उछल कर मंजरी के महल जाकर अपनी अर्धांगिनी, सहधर्मिणी व सहकर्मिणी मंजरी के साथ अगोरी के महादेव की आराधना करता है व आशीर्वाद प्राप्त करता है। वंसरा देवी का जीवन्त आशीर्वाद मिलता है। राजा मोलागत महरा के महल पर आक्रमण करता है पर लोरिक अपनी बिजुरिया तलवार से राजा के सैनिकों पर टूट पड़ता है। राजा भाग जाता है। पर मरदमल पहलवाल को मेरे साथ मल्ल-युद्ध के लिये भेज दिया। उसको परास्त कर मोलागत के अन्य सहायक राजाओं को पछाड़ कर सोन तट नरदेह से पट गया। फिर एक सौ हाथी-हथिनियों को भगाया। फिर भदौरवर का राजा निर्मल जो नववधू ले कर लौटा था, वह भी लोरिक के हाथों मारा गया।

फिर सिरुलीगढ़ के राजा ब्रह्मी पर सवालाख बाराती लेकर उसकी लड़की सतिया से अपने भय्या संवरु के लिये झिमली व दसवन्त का संहार किया। सतिया विवाह और बारह सौ क्वॅारी कन्याओं के साथ हुआ। यह युद्ध भरा जीवन लोरिक बिता रहा था।

इधर चन्दा (राजा सहदेव की पुत्री) शिवहर से शादी करके प्रसन्न नहीं थी और मौका पाकर मायके आ गई। लोरिक लुंक छिप कर चन्दा के साथ प्रणय-प्रसंग बढ़ने लगा। सती जैसी पत्नी मंजरी को पाकर भी चंन्दा का प्रेम लोरिक के मन पर अधिकार जमा चुका था। दुर्गा माता के मन्दिर में शीश नवा कर लोरिक व चन्दा हल्दी गढ़ की ओर पलायन कर गये। गुरदमक पहलवान को पछाड़ कर राजा हरेबा से व्याकुल प्रजा को छुड़ाया। फिर वहां काफी समय रह कर वापस पिपरीगढ़ को कोल किरातों को हराया। अपने लड़के अभोरिक को अपनी बिजुरिया तलवार दे दी और देवाइच (सांवर का पुत्र) को सॉवर का तीर-धनुष। और लोरिक ने गंगा के तट पर प्राण त्यागे।

सामन्तवादी सत्ता के विरुद्ध निरन्तर संघर्ष व मानवीय मूल्यों की रक्षा हेतु धर्म व नैतिकता की पुनरस्थापना लोरिक के उच्च आदर्श थे। इस उपन्यास में इतिहास, धर्म व साहित्य का सुन्दर समन्वित प्रतिपादन हुआ है। लेखक बधाई के पात्र हैं।

—राम निवास तिवारी, 663, सेक्टर-28,
नोयडा, यू. पी.

समर्पण

[पुस्तक : समर्पण; लेखिका : श्रीमती कांता शुक्ला; प्रकाशन : श्री कमल प्रकाशन, चकेरी रोड, कानपुर (उ. प्र.), मूल्य : 60 रुपए]

मैंने श्रीमती कान्ता शुक्ला द्वारा विरचित इस कृति का अनुशीलन किया। वस्तुत: यह पवित्र मन, वचन, कर्म द्वारा किया गया समर्पण है। इसमें 60 (साठ) कविताओं को दो भागों में बांटा गया है। प्रथम खण्ड 'संदर्शिका' में अभिव्यक्ति परक 29 कविताओं को रखा गया है—कर रहे उपकार, कैसे भूल जाती, पुष्प पूजा के चढ़ाऊं, कैसे कह दूँ? आदि उसी स्वर की कविताएं हैं, जिनमें अव्यक्त और अप्राप्त तत्व के प्रति भावों को छन्दों में बांधा गया है। दूसरा खण्ड 'निवेदन, समर्पण एवं एकत्व की चाह' नाम से 39 कविताओं को प्रस्तुत करता है। इसमें ओ प्रिय मेरे, आ रही है शाम, शाश्वत् शान्ति अपार, स्वयं ही कारण-शीर्षक कविताएँ आध्यात्मिक और सूक्ष्म चिन्तन को हृदय के स्तर पर प्रकट करती है।

भक्ति और अध्यात्म में सर्वाधिक प्रश्रय दिया गया है—प्रपत्तिभाव को। यही सम्पूर्ण आत्मविसर्जन ही आराधक में प्रपत्तिभाव भरता है और यही आराध्य में शरणागत: वत्सलता का हेतु बनता है।

श्रीमती शुक्ला ने शब्दाडम्बर के बिना निष्कपट भाव से यह नैवेध परम प्रभु को समर्पित किया है। प्राय: अध्यात्म चिन्तन करते हुए लेखक दर्शन की जटिलता का लोभ संवरण नहीं कर पाते, किन्तु श्रीमती शुक्ला ने अपने रसचिन्तन द्वारा यह सिद्ध कर दिया है कि वे सहज भक्ति अथवा सहज साधना में ही तल्लीन है।

यही इस कृति की विशिष्टता है ऐसी रम्य रचना के लिए मैं लेखिका को साधुवाद देता हूँ और पाठकों से यह अनुशंसा करता हूँ कि वे इसे ज्ञानयोग से अधिक 'भावयोग' के स्तर पर हृदयंगम करें।

—डा. सूर्यप्रसाद दीक्षित, आचार्य एवं अध्यक्ष,
हिन्दी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।

देवनागरी टंकण : सिद्धान्त तथा व्यवहार

[पुस्तक : देवनागरी टंकण : सिद्धान्त तथा व्यवहार; लेखक : रमेशचन्द्र; प्रकाशक : मूर्ति प्रकाशन, 46/22, पिंक इंडिया फैक्टरी के पीछे गुड़गांव (हरियाणा); प्रथम संस्करण : 1997; मूल्य : 101/- रुपये]

देवनागरी टंकण और व्यवहार से संबंधित अनेक पुस्तकें बाजार में उपलब्ध हैं, लेकिन इन पुस्तकों से देवनागरी टंकण के सिद्धान्त और व्यवहार की पूरी जानकारी पाठकों को नहीं मिल पाती है।

भारतीय मानक ब्यूरो के उप निदेशक श्री रमेशचन्द्र द्वारा लिखित प्रस्तुत पुस्तक "देवनागरी टंकण : सिद्धान्त तथा व्यवहार" उपर्युक्त कमी को काफी हद तक दूर करती है। प्रस्तुत पुस्तक दो भागों में विभक्त की गई है। प्रथम भाग में देवनागरी टाइपराइटर के विभिन्न भागों की विस्तृत जानकारी (चित्र सहित) दी गई है। कुंजी पटल की सभी कुंजियों का विस्तृत विवरण भी दिया गया है। पुस्तक में टाइप पारिभाषिक शब्दावली, टाइपराइटर पर कार्य करने की विधियों पर भी पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। इसके अलावा अनुस्वार और अनुशासिक का प्रयोग क्यों किया जाए, बढ़िया टंकण के लिए टाइपराइटर के विभिन्न अंगों का प्रयोग कैसे किया जाए, संख्याओं के मानक शब्द रूप, वैज्ञानिक संक्षिप्तियों के मानक रूप की विस्तृत जानकारी तथा कुछ कठिन शब्दों के शुद्ध रूप तथा व्याकरणिक जानकारी भी इस पुस्तक में संकलित है। गति निकालने के नियम, टाइपराइटर की देखभाल आदि विषय भी शामिल हैं।

भाग "ख" में व्यावहारिक पक्ष दिया गया है। वर्णों, मात्राओं की विस्तृत जानकारी तथा उनका अभ्यांस, सरकारी तथा गैर सरकारी प्रयोग हेतु प्रारूप, पत्र, स्टेंसिल, सारणी, पांडुलिपि आदि की विस्तृत जानकारी दी गई है। इसके अतिरिक्त देवनागरी टाइप सीखने के तथा उच्च गति प्राप्त करने हेतु 65 सरल अभ्यास तरतीब से दिए गए हैं, जिनका अभ्यास करके कोई भी विद्यार्थी देवनागरी टाइप सीखकर टाइपिंग में उच्चगति प्राप्त कर सकता है।

यह पुस्तक टंककों, आशुलिपिकों के लिए तो उपयोगी है ही, साथ ही यह प्राइमर स्टेज के छात्रों के लिये विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध होगी क्योंकि वे अपने अध्ययन काल में ही इस पुस्तक को पढ़कर टाइपराइटर के बारे में विस्तृत जानकारी तथा टंकण में उच्चगति प्राप्त कर सकते हैं। पुस्तक की उपयोगिता को देखते हुए भारत सरकार द्वारा लेखक को "इन्दिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार 1994-95" से सम्मानित भी किया जा चुका है। लेखक का यह प्रयास सराहनीय है।

—पुष्पा गुप्ता, राजभाषा विभाग

बालू के गुम्बद

[पुस्तक : बाल के गुम्बद; लेखिका : विजया गोयल; प्रकाशक : आर्य बुक डिपो, करोल बाग, नई दिल्ली-110005; मूल्य : 40/- रुपये]

साहित्य व कला से जुड़ी विजया गोयल की यह कृति "बालू के गुम्बद" एक अनूठा प्रयोग है जिसमें लेखिका का अपने आस-पास के घटनाक्रम का अनुभव, जीवन की टीस व कटुता समाहित है। यह कृति सम्प्रति समाज में व्याप्त दोहरा मापदण्ड व बदलते नैतिक मूल्यों को उजागर करने में सहायक होगी।

"रसौ वै स:" कितना सटीक है जब लेखिका कहती हैं "ईश्वर की वन्दना हमेशा आरती, भजन, कैरोलज, नाद या शब्द से ही क्यूं होती है। क्यूं गीता, रामायण, गुरु ग्रन्थ साहब, बाइबिल पद्य में लिखे गये? जो भगवान् की छवि पद्य में उभरी है क्या वह गद्य में नहीं उतारी जा सकती थी। ईश्वर भी शायद पद्य से ही प्रसन्न होते हैं। ..... । चाहे वे लोक गीत हों, दोहे हों, भजन हों, किसी राग के बोल लिखे गये होंगे तो वह मात्र कविता ही होगी।"

उनतालीस कविताओं का समावेश है बालू के गुम्बद में जिसमें ईसा की बेटी, नारी, महानगर, चाँद, आधे-अधूरे, विष, अहसास, एक कण, हादसे, भीख, प्रणाम कीजिए, सपने, रूप, लावारिस, कोंपले, क्यूं, फाग, पुरस्कृत, मत लुटाओ, इच्छा, मेरे आंगन का पेड़, एक प्रश्न, आभास,

भोर का तारा, हादसा, मैं, रास्ते, बीनस, अन्तराल, हस्ताक्षर, साक्षी, अतीत, वक्त, अर्पिता, नगमा, तुम, चाह, तुम्हारे लिए और वो शामिल हैं।

कविताओं के शीर्षक से ही विषय-विविधता का अनुमान होता है परन्तु प्रत्येक कविता में लेखिका की मौलिकता निहित है। भाषा सरल व सुबोध है। आइये कुछ हृदय स्पर्शी व मन को उद्वेलित करने वाली कविताओं का अवलोकन करें :—

आज की आतंकित व भयभीत मानवता के साथ कभी भी कहीं भी कोई हादसा हो सकता है, चाकू का वार हो सकता है, खंजर घोंपे जा सकते हैं या विस्फोट से सब खाक हो सकता है। दो कवितायें शीर्षक "हादसे" व "हादसा" प्रस्तुत हैं :—

1. "हादसे"

हादसा दर हादसा
कदम दर कदम
.....
जैसे हादसे हों मील के पत्थर
मानुष मुसाफिर सा
सीने पर हादसे खंजरों से चुभते हैं
रक्त से सने मन-तन
टुकड़ा-टुकड़ा बटते कटते लोग
हादसे के जंगलों में
बिखरते रहते हैं, जंगली लोग
.....

2. "हादसा"

एक बस में सवार यात्री
खचाखच भरी, जा रही थी चली
.....
किसी के पांव के पास की लाल टोकरी,
फट उठी धमाके के साथ
सब नष्ट हो गया
चीखें धुँआ, लहू का फुहारा
व उड़ते मानस अंग
.....

आज कौन पूज्य हैं, किस का आदर करें, किसे पुरस्कार दें जानने के लिये दो कवितायें उद्धृत हैं :

1. "प्रणाम कीजिये"

"जिसके हाथ में लाठी हो
और गरीब की पीठ पर
रौब जमाती हो
उसकी प्रभुता को प्रणाम कीजिये।
.....
जो राम और रहीम को
शत्रु बना दे
हर घर बांट सीमाओं में
इक देश बना दे
घर के दीपक से
घर को जला दे
जवान बेटों की लाशों को
कन्धों पर उठवा दे
मन में छिपे उस रावण को
प्रणाम कीजिये
.....
....."

सूची लम्बी है जिन्हें प्रणाम करना है। अब दूसरी कविता देखें :—

पुरस्कृत"

सुबह सवेरे समाचार पत्र बोला
मंत्री जी ने सेविका से किया बलात्कार
दासी थी उनकी उन्हें जो,
चाहें करने का था अधिकार
मगर सन्न सा हुआ मन
देखा जो टेलीवीजन
साँझ को
मंत्री जी को
राष्ट्रपति
महिला उद्धार के लिये
दे रहे थे पुरस्कार ॥

निर्धन नन्हें हाथ मजदूरी करते जाड़े में किस असहाय स्थिति का सामना करता है "भीखू" कविता किस प्रकार हृदयग्राही है अनुभव करें :—

"भीखू"

जाड़े के महीने में
.....
चेष्ठा में पत्थर तोड़ने की
मार बैठा है हथौड़ा हाथ पे
शुष्क नसों से लहू
टिप टिप टिप टिपटिपाता
.....
फटे कुर्त्ते से कतरन
फाड़ता है जबरन
.....
तो भूल सा जाता है
पीठ की खाल काटेगा जाड़ा
.....

इसी प्रकार नारी पीड़ा व अन्य छिट-पुट विषयों पर भी कवितायें अच्छी बन पड़ी हैं। पुस्तक विषय-वस्तु, भाषा, शैली व यथार्थ चित्रण की दृष्टि से सराहनीय है

—राम निवास तिवारी, 663/28, नोयडा।

नैतिकता और रोजी-रोटी के मध्य सेतु की तलाश :

आजीविका-साधक हिन्दी

['पुस्तक : आजीविका-साधक हिन्दी'; डॉ. पूरनचन्द टण्डन; इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, 71-के, कृष्ण नगर, दिल्ली-110051; प्र. सं. 1998; पृ. 1304; मूल्य-275.00 रुपए]

तथाकथित-विरोधों के बावजूद, स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात् राजभाषा के पद पर आसीन होने के बाद हिन्दी भाषा के विकास के अनेक आयाम उजागर हुए हैं। वैचारिक धरातल पर भावात्मक एकता स्थापित करने वाली, साहित्य की इस प्रतिष्ठित एवं जन-जन में प्रिय हिन्दी भाषा ने जिन क्षेत्रों में अपनी पैठ बढ़ाई है उनमें से 'रोजगार' भी एक है। ऐसे में भाषा की रोजगार-क्षमता ने हिन्दी के प्रयोजनमूलक, उपयोगमूलक, प्रयोगमूलक और कामकाजी रूप से संबंधित विशिष्ट प्रकार की कल्पना को मूर्त रूप प्रदान किया है। इस परिकल्पना ने हिन्दी को 'पत्रकारिता की भाषा' 'कार्यालयी हिन्दी', 'विज्ञान की भाषा', 'प्रौद्योगिकी की भाषा', 'साहित्य की भाषा', 'शिक्षण-प्रशिक्षण की भाषा' जैसे दायरों से निकालकर हिन्दी के अन्य प्रयोजनमूलक परिदृश्यों को उद्घाटित किया है। यह प्रयोजनपरक रूप हिन्दी को वास्तविक एवं व्यावहारिक आयाम प्रदान करके, सुख-सुविधाओं से सम्पन्न आज की व्यावसायिक दौड़ में प्रत्यक्ष रूप से आजीविका से जोड़ता है। रोजगार जीवन-यापन के लिए धनार्जित करने का एक सशक्त उपकरण है, जन-सामान्य का अस्तित्व इस प्रश्न से जुड़ा हुआ है। भाषा का रोजगार के रूप में सार्थक सिद्ध होने की दिशा में आज हिन्दी की स्थिति का अवलोकन करना आवश्यक ही नहीं, नितांत अनिवार्य भी हो गया है। इसके लिए, दैनंदिन की इस कामकाजी हिन्दी के विविध पक्षों-आयामों का उद्घाटन करना अपेक्षित है, अनेक नये क्षेत्रों और परिदृश्यों का अन्वेषण करके आम आदमी के समक्ष लाने की आवश्यकता है। यह कार्य फौरी तौर पर नहीं हो सकता है—इसके लिए हम सभी को संकल्पबद्ध विचार-दृष्टि से सम्पन्न होना होगा और अनवरत् श्रम करना होगा। 'कमर-कस-श्रम' और 'संकल्प-बद्ध-सोच' को अवलम्ब बनाते हुए इस दिशा में नई संभावनाएं तलाशने के साथ-साथ वस्तु-स्थिति से अवगत कराने का सार्थक प्रयास डॉ. पूरनचन्द टण्डन ने अपनी कृति 'आजीविका-साधक हिन्दी' में किया है। व्यावहारिक जगत् में, एक संकल्पना के रूप में 'आजीविका-साधक हिन्दी' के अभिनव-अधुनातन क्षेत्रों का अन्वेषण करने का यह संभवत: प्रथम प्रयास है।

कृति के आलोक में समीक्षण करने से पूर्व यहां यह स्पष्ट करना भी अनुचित न होगा कि 'आजीविका-साधक हिन्दी' से क्या अभिप्राय है, इसका उद्भव और विकास कब हुआ। हिन्दी के क्षेत्र में 'आजीविका-साधक हिन्दी' एक विशेष प्रकार की कल्पना की उपज कही जा सकती है। इस संकल्पना का संबंध प्रत्यक्ष रूप से भाषा की रोजगार-क्षमता से है। हिन्दी भाषा को साहित्य से इतर एवं धनार्जन के माध्यम के रूप में प्रयुक्त करना हिन्दी का आजीविकापरक रूप है। यहां ध्यान देने की बात यह भी है कि हिन्दी को व्यवसाय के रूप में प्रयुक्त करना नहीं है—बल्कि इसके मूल में हिन्दी के माध्यम से व्यवसाय करना है, धन-उपार्जित करना है। हिन्दी का यह रूप, व्यावहारिक जगत् से जुड़ा हुआ है। हिन्दी का आजीविकामूलक रूप, गत कुछ वर्षों में उभरा है। पिछले एक दशक में हिन्दी भाषा का एक नया चरित्र विकसित हुआ है। यह नया चरित्र रोजगारपरक शिक्षा के अंतर्गत विकसित हुआ। लेखक ने हिन्दी के इस रूप की सराहना इन शब्दों में की है— "इस वास्तविक एवं व्यावहारिक हिन्दी को नए आयाम देकर उसे आज की इस व्यावसायिक दौड़ में सीधे-सीधे आजीविका परक बनाने का जो कार्य विगत पाँच वर्षों में प्रारम्भ हुआ है वह सराहनीय है।" (प्र. 10) में आजीविकापरक हिन्दी, वस्तुत: आज के समय की माँग है। समय के साथ चलने के लिए यह परिवर्तन आवश्यक है।

आलोच्य कृति-लेखक ने इस उद्देश्य से अपनी कृति की रचना की है जो अनेक वर्षों की अथक मेहनत के पश्चात मूर्त रूप पा सकी है। डॉ. टण्डन का कहना है कि "इस पुस्तक के माध्यम से मेरा उद्देश्य यह भी रहा है कि समस्त हिन्दी जगत यह जान सके कि हमें ऐसे पक्षों और क्षेत्रों की, आयामों और परिदृश्यों की निरन्तर तलाश करनी है और इस दिशा में कमर-कस-श्रम तथा संकल्प-बद्ध-सोच का अविलम्ब अपनाना है। हम सभी का यह नैतिक दायित्व है कि हम अंग्रेजी या अन्य प्रतिष्ठित विश्व भाषाओं की तरह हिन्दी के लिये वह सब कुछ करें जो हम कर सकते हैं। तन, मन, धन से हमें इस भाषा को अब 'मध्य प्रदेश' अर्थात् 'उत्तर-प्रदेश' से भी जोड़ना होगा। दिल और दिमाग से तो यह जुड़ी ही है।" (पृ. 11)

डॉ. टण्डन ने अपनी इस कृति में हिन्दी भाषा के सैद्धांतिक पक्ष, व्याकरणिक संदर्भ और प्रयोजनपरक परिदृश्य को अत्यंत प्रभावी ढंग से व्यवस्थित करके प्रस्तुत किया है। इस हेतु लेखक ने अपने 17 गंभीर आलेखों को इस पुस्तक में तीन खंडों में विभाजित किया है। खंड-1 में छह आलेख हैं। इनके शीर्षक हैं—'देवनागरी लिपि : परिचय और विशेषताएँ', 'मानक हिन्दी : स्वरूप और प्रकृति', 'हिन्दी में अशुद्धियाँ : कारण और निवारण', 'हिन्दी की प्रमुख बोलियाँ', 'हिन्दी की प्रमुख शैलियाँ'; और 'मुहावरे और लोकोक्तियाँ : स्वरूप एवं विस्तार'।

खंड-दो में आठ आलेख हैं, जिनके शीर्षक हैं—'प्रयोजनमूलक हिन्दी और उसका प्रयोजन', 'राजभाषा और राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी', 'कार्यालयी पत्र लेखन', 'व्यावसायिक पत्राचार', 'संक्षेपण : अभिप्राय, प्रयोजन एवं महत्व', 'पल्लवन : अभिप्राय, प्रयोजन एवं महत्व', 'प्रतिवेदन लेखन', 'अपठित गद्यांश'। हिन्दी के आजीविकापरक रूप के परिप्रेक्ष्य में इन आलेखों का विशेष महत्व है।

खंड-तीन आलोच्य कृति का अंतिम खंड है। इसमें 'बैंकों में हिन्दी का प्रयोग' और 'समाचार लेखन' से संबंधित दो आलेख हैं और अंत में व्यावसायिक एवं प्रशासनिक शब्दावली; प्रशासनिक एवं बैंकिंग संबंधी शब्दावली; और व्यावसायिक एवं बैंकिंग संबंधी शब्दावली के क्रमश: 150, 150 और 200 शब्द दिए गए हैं। बैंकों में हिन्दी का प्रयोग से संबंधित आलेख में बैंकों में हिन्दी के प्रयोग के आयामों—ग्राहकों से संपर्क, और आंतरिक कार्य—के अतिरिक्त क्षेत्रीय भाषाएँ राजभाषा नीति, हिन्दी प्रयोग के असहजता के संदर्भ में विचार किया गया है। और लेख के अंत में बैंकों में प्रयुक्त होने वाली मुख्य पारिभाषिक शब्दावली के लगभग 300 हिन्दी के शब्द और उनके अंग्रेजी पर्याय दिए हुए हैं।

आजीविका-साधक हिन्दी' कृति की रचना की शुभ परिणति यह रही है कि लखनऊ विश्वविद्यालय के प्रोफेसर सूर्य प्रसाद दीक्षित सरीखे विद्वान् हिन्दी के आजीविकापरक रूप पर अपना अभिमत व्यक्त करते हुए संभावनाओं के अनेक रूपों को पुस्तक में 'मंगलाशा' शीर्षक के अंतर्गत उजागर करते हैं। ये क्षेत्र हैं—विज्ञापन, स्लोगन निर्माण; प्रचार-साहित्य-लेखन; दुभाषिया प्रशिक्षण; भाषा-शिक्षण; संचालन (कम्पेयरिंग); कमेंट्री-प्रशिक्षण; उद्घोषण कला; वाचन (समाचार वाचन/कविता/कहानी वाचन); डबिंग; स्क्रिप्ट लेखन; संवाद लेखन; बधाई पत्र, पोस्टर आदि के संदेश लेखन; भेंटवार्ता; फीचर-लेखन; रेडियो-वार्ता लेखन; डाक्यू ड्रामा/टेलीड्रामा तथा डाक्यूमेण्ट्री लेखन; रेडियो नाटक लेखन; रंगमंच प्रशिक्षण; संभाषण कला प्रशिक्षण; देह भाषा प्रशिक्षण; कोश विज्ञान आदि। लेकिन यहाँ यह उल्लेख करना भी अनुचित न होगा कि प्रो. दीक्षित ने इस विषय पर चिंतन करने का यह प्रथम-प्रयास नहीं किया है। वे, वस्तुतः, हिन्दी के प्रयोजनमूलक अथवा कामकाजी रूप से संबंधित संकल्पना के उद्भवकाल से ही जुड़े रहे हैं। 'मंगलाशा' में उनका यह कथन इसी तथ्य की पुष्टि करता है—"मुझे इस बात से बड़े संतोष का अनुभव हो रहा है कि 1987 में हमारे विभाग ने प्रयोजनमूलक हिन्दी के नाम से जो पाठ्यक्रम पहले-पहल लखनऊ विश्वविद्यालय में आरम्भ किया और अपना प्रस्ताव विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के समक्ष प्रस्तुत किया, उसे आज राष्ट्र-स्तरीय मान्यता मिल गयी है। भव्य भवन बन जाने के बाद नींव का पत्थर सबको दिखायी नहीं देता, किन्तु उसका अस्तित्व इससे निष्प्रभाव अथवा निश्शेष नहीं हो जाता।" (पृ. 7)

हिन्दी के आजीविकापरक रूप का भविष्य उज्ज्वल है। हिन्दी के प्रति हमारी मानसिकता बदलने की दृष्टि से यह पक्ष अवश्य ही प्रासंगिक सिद्ध होगा। आवश्यकता केवल बाजार-क्रांति की इस विपणन कला को पहचानने की और सर्जनात्मक क्षमता और आधुनिक प्रौद्योगिकी से सुपरिचित भाषाविदों-लेखकों द्वारा इसका संवेदन करने की। ऐसे में प्रो. सूर्य प्रसाद दीक्षित की यह 'मंगलाशा' सटीक है कि "इनमें अपेक्षाकृत सर्वोपरि है—दिनचर्या की आमफहम वाली हिन्दी का वाणिज्यिक उपयोग। यही हिन्दी भावी पीढ़ी का पाथेय बनेगी। इसे सीख लेने से भौतिक संसाधन के नए गवाक्ष खुलेंगे। इससे हिन्दी-भाषियों का आर्थिक स्तर सुधरेगा जो सामाजिक प्रतिष्ठा को बढ़ावा देगा।" (पृ. 8)

जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है कि आलोच्य कृति के अंत में व्यावसायिक एवं प्रशासनिक शब्दावली; प्रशासनिक एवं बैंकिंग संबंधी शब्दावली; और व्यावसायिक एवं बैंकिंग संबंधी शब्दावली के क्रमशः 150, 150 और 200 शब्द दिए गए हैं। इससे ऐसा महसूस होता है कि इस पुस्तक की रचना में कहीं न कहीं विश्वविद्यालय की पाठ्यचर्या को ध्यान में रखा गया है। अन्यथा इन्हें समाविष्ट न किया जाता या फिर इसकी तुलना में और अधिक शब्दावली पुस्तक में अवश्य ही स्थान पाती। हालांकि इस शब्दावली को कृति में समाविष्ट न करने पर भी इसकी प्रासंगिकता स्वतः ही बनी रहती।

मुद्रण की दृष्टि से पुस्तक अच्छी है, विशेष रूप से पुस्तक का आवरण-पृष्ठ। यह आकर्षक है और बाजार को साधने वाले इस अधुनातन बाजार-तंत्र की अपेक्षाओं के अनुरूप हैं। इसके लिए प्रकाशक श्री अशोक शर्मा अवश्य ही बधाई के पात्र हैं। प्रूफ संबंधी गलतियाँ भी बहुत ही कम हैं। कथ्य के अनुरूप, बाहरी सौंदर्य की दृष्टि से भी पुस्तक को काफी मेहनत से तैयार किया गया है।

इस कृति में हिन्दी के आजीविका-परक रूप के अनेक पक्षों पर विचार किया गया है। वैसे ये सभी पक्ष आजीविका-साधक हिन्दी को समग्रता प्रदान नहीं करते हैं क्योंकि लेखक ने अपने प्राक्कथन में इस तथ्य को स्वयं किया है। (पृ. 12) इस आधार पर इस पुस्तक की अपनी कतिपय सीमाएँ भी हैं। किन्तु, साथ ही यह भी वास्तविकता है कि पुस्तक की प्रकाशकीय सीमा को नकारा नहीं जा सकता। इसलिए उन विषयों एवं क्षेत्रों का छूट जाना खलता नहीं है। यह तो सर्वविदित है कि भाषा मानवीय क्षमता के विस्तार का मूल स्रोत है, उसमें अपार संभावनाएँ होती हैं। आवश्यकता तो केवल इतनी है कि इच्छा-शक्ति से आगे बढ़ा जाए। उपनिषदों में भाषा का यह महत्व पूर्णतः प्रतिष्ठित है और उसमें भाषा को दुधारू गाय कहा गया है। भाषा-रूपी इस दुधारू गाय को दुहने वाला ही पीयूष-रस प्राप्त करने का अधिकारी होता है। हिन्दी भाषा के इस विकासमान आजीविकापरक रूप के परिप्रेक्ष्य में आवश्यकता दुधारू गाय को दुहने की है। 'आजीविका-साधक हिन्दी' को पढ़कर यह विश्वास बनता है कि डॉ. टण्डन ने सच्चा दोग्धा बनकर भाषा के विस्तार की संभावनाएँ तलाशने में सार्थक प्रयास किया है।

—हरीश कुमार सेठी, हिन्दी विभाग, मानविकी विद्यापीठ,
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय,
मैदानगढ़ी, नई दिल्ली-110068

प्रतिनिधि बाल कहानियां

[पुस्तक : प्रतिनिधि बाल कहानियां; लेखक : डॉ. दिनेश चमोला; प्रकाशक : आत्मा राम एण्ड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली-6; मूल्य : 300/-; पृष्ठ : 392; प्रथम संस्करण : 1998]

बाल साहित्य की रचना एक दुर्लभ, जटिल व जोखिम भरा कार्य है, किन्तु इसकी कसौटी पर खरा उतर पाना विरले साधकों के ही बस की बात है। कहा जा सकता है कि बाल-मन किसी भी दिशा में पदार्पण करने के लिए सदैव स्वतंत्र होता है। इस पर विजय बरबसता, मजबूरी अथवा दबाव से नहीं बल्कि आत्मीयता, वास्तविकता व गहरे अपने पन से ही सम्भव होती है।

'बाल प्रतिनिधि कहानियां' में डॉ. चमोला द्वारा लिखित एक सौ एक बाल कहानियों का संग्रह है। बाल साहित्य किसी भी साहित्य के पड़ावों की प्राथमिक सीढ़ी है, इन कहानियों की जीवंतता व यथार्थ के स्वरूप पर लेखक के ये विचार इनकी भूमिका में अत्यंत महत्वपूर्ण हैं :—

"किन्तु वे संदर्भों व सरोकारों से परे असीमित परिवेश की कहानियां थीं। वे पाताल की कोख से उगती, धरती के आंचल में लहराती, व्यापक ब्रह्माण्ड तक को अपने सौरभ से आप्लावित करती थीं। उनका स्रोत, कथ्य व संवेदना का तत्व पाठ्यक्रमीय कहानियों के फलक से कहीं विस्तृत शाश्वत व अमिट होता था।"

दूसरी ओर लेखक के ये विचार कि बाल साहित्य में व्यावहारिक रूप में बच्चों की मानसिक भूख को तृप्ति प्रदान करने की क्षमता होनी आवश्यक है। बाल साहित्य के स्फुरण व यर्थाथपरक संदेश पर लेखक के ये विचार कि :—

"बाल साहित्य का स्फुरण संस्कारों की कोख से होता है जो : मूल्य की गोदी में संरक्षण नैतिकता व मौलिकता की खाद से तरंगायित होता हुआ भूत, भविष्य व वर्तमान के बीच ज्ञान के सेतु का कार्य करता है। संस्कार मन की अच्छी आदतों का सुधरा हुआ मर्यादित रूप है। इसीलिए संस्कार देने से पूर्व गहराई से संस्कारित होना अनिवार्य है।"

संस्कार उपदेश के आधार पर नहीं बल्कि आचरण व व्यवहार की कसौटी पर कसे व प्रासंगिक होने चाहिए। बाल साहित्य के लिए बाल मनोविज्ञान की गहरी पकड़ ही इसके अपने क्षेत्र की मौलिकता का एहसास करा सकती है। कृत्रिमता की पृष्ठभूमि से उभरी कहानियां अपना कृत्रिम ही प्रथम प्रभाव छोड़ पाने को विवश होती है जबकि यथार्थ, गहरी संवेदना व मूल्यों के धरातल पर केन्द्रित कहानियां न केवल प्रेरणा बिन्दु का मूल स्वर बनती हैं बल्कि मन व मस्तिष्क के भीतर अपनी चारित्रिक, भौतिक व मानसिक उपस्थिति से जीवन मूल्यों में निखार लाने में भी सक्षम होती है।"

प्रस्तुत संग्रह में अधिकांश जीवन के कटु यथार्थों का बेबाक वर्णन करती संवेदना परक कहानियां हैं। ये कहानियां केवल कहानी की कहानी न कहकर मन के भीतर सोये हुए कर्म को जगाने में पूर्णत: सफल सिद्ध हैं। कहीं गहरे यथार्थ का यह स्वर न केवल बाल मन को बुदबुदाता है बल्कि बाल मनोविज्ञान का संबल बन कर प्राण चेतना का स्वर भी संस्कारित करता है।

कुछ कहानियां जीव जन्तुओं के नायक तत्व को धारण करने वाली कहानियां हैं। इनके पास भले ही जीव-जन्तु हों लेकिन ये मानवीय संबंधों व संवेदनाओं को गहराई से अभिव्यक्त करने में सफल हुई हैं। थे कहानियां पशु-पक्षियों के परिवेश में बंधी होने पर भी गहरे बाल-मनोविज्ञान को रेखांकित करती हैं।

कुल मिलाकर जीवन की विविधरंगी छटा बिखेरती ये कहानियां न केवल बालकों को संस्कारित करती हैं बल्कि युवाओं व वृद्धों को भी बच्चों के प्रति दयार्थ व स्नेहपूर्ण रवैया अपनाने के लिए आगाह करती है। मौलिकता की पृष्ठभूमि से उभरी ये कहानियां जहां लेखक को स्वस्थ बाल साहित्य यात्रा की शुभकामनाएं देती हैं वहां बाल साहित्य के क्षेत्र में एक मील का पत्थर सिद्ध होती हुई नवोदितों को भी प्रेरित करने की क्षमता रखती है। बाल साहित्य के क्षेत्र में व्यक्तिगत की रचनाधर्मिता का इतना दुर्लभ ग्रन्थ जहां बाल साहित्य सेवा तथा इसकी गहरी पकड़ को भी रेखांकित करता है वहीं रचनाकार की निष्ठावान बाल साहित्य सेवा को भी रेखांकित करता है।

इस प्रकार के प्रयास हर भाषा के स्तर पर भी किए जाएं तो बालकों के नैतिक विकास में अवश्य सहायक होंगे।

—सुभाष तनेजा,

12/531, ऋषि नगर, सुभाष पार्क, सोनीपत, (हरियाणा)

'दसवें की राख'

[पुस्तक : दसवें की राख; लेखक : राजेश श्रीवास्तव; प्रकाशक : संजीव प्रकाशन 3613, दरियागंज, नई दिल्ली; पृष्ठ : 104; मूल्य : 65.00 रुपए; वर्ष : 1997]

'दसवें की राख' युवा लेखक राजेश श्रीवास्तव की नवीनतम रचना है जिसमें उनकी कुछ नई और कुछ पुरानी कहानियों को संग्रहित किया गया है। कुछ कहानियों का कलेवर अत्यंत छोटा है लेकिन अभिव्यक्ति, भाव प्रवणता और सटीकता की दृष्टि से वे अन्य लम्बी कहानियों की तुलना में किसी भी प्रकार से कम नहीं हैं। कुल 14 कहानियों के इस संग्रह में 'बदचलन', 'कांसे का कटोरा' और "जरासंध नहीं हूं मैं" जैसी तीन कहानियां अत्यंत मार्मिक बन पड़ी हैं। 'बदचलन' कहानी में एक स्त्री द्वारा परिवार की इज्जत बचाने के लिए अपनी लाज की बलि देने की दुखपूर्ण विवशता है तो "कांसे का कटोरा" कहानी में एक उपेक्षित और तिरस्कृत बूढ़े पिता की मार्मिक पीड़ा को अभिव्यक्त किया गया है।

"जरासंध नहीं हूं मैं" कहानी में एक विवश पुत्र की व्यथा को व्यक्त किया गया है। वह मां और पत्नी के बीच में बार-बार सेतु बनने का प्रयास करता है लेकिन महज एक दीवार बनकर रह जाता है। दोनों की अपनी-अपनी जिद, अपना-अपना स्वाभिमान आकर पुत्र को मुँह चिढ़ाता रहता है।

"चालाक हत्यारा", एक कहानी कम किसी जासूसी उपन्यास का हिस्सा अधिक प्रतीत होती है। "बाबू साहब", "प्रश्न" और "गुंडा" कहानियां प्रभावपूर्ण और मर्मस्पर्शी कहानियां हैं।

संग्रह की शीर्षक कहानी "दसवें की राख" में खून के रिश्तों में आई औपचारिकता को अत्यंत मार्मिक ढंग से व्यक्त किया गया है। आज के मशीनी युग में रिश्तों की गहराई तथा उनके प्रति भावनाओं को महसूस करने का समय शायद किसी के पास नहीं है। यहां तक कि मां बेटे और पिता-पुत्र जैसे संबंध भी इसके अपवाद नहीं है। इस कहानी में भी पुत्र अपनी मां के अंतिम संस्कार में न पहुंच पाने पर दुख व्यक्त करने के बजाय उसकी राख प्राप्त करने पर ही अपने आपको संतोष दे लेता है। दिखावटी सहानुभूति, मजबूरी में अंतिम संस्कार में शामिल हो जाना तथा बूढ़े लाचार व्यक्तियों को बोझ समझने की मानसिकता वास्तव में व्यक्ति को कहां ले जाएगी।

संग्रह की बाकी कहानियां भी पठनीय हैं तथा भाषा भी बोधगम्य है। कुल मिला कर यह संग्रह पठनीय, रोचक तथा जीवन के अनुभवों से अनुस्यूत और यथार्थ की पथरीली धरती से जुड़ा हुआ है तथा अपने उद्देश्य को व्यक्त करने में सफल रहा है।

—राकेश कुमार,

अनुसंधान अधिकारी, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग

कार्यशाला

भारतीय होटल निगम, मुम्बई

भारतीय होटल निगम के मुख्यालय के हिन्दी अनुभाग द्वारा दिनांक 9 व 10 मार्च, 1998 को द्विभाषी कम्प्यूटर तथा शब्द संसाधन संबंधी विशेष हिन्दी कार्यशाला का आयोजन सेन्टॉर होटल, मुम्बई एअरपोर्ट में किया गया।

उक्त कार्यशाला में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आई.आई.टी.) मुम्बई, के हिन्दी अधिकारी श्री अर्जुन महतो ने हिन्दी साफ्टवेयर पैकेज तथा शब्द संसाधन (वर्ड प्रोसेसिंग) संबंधी महत्वपूर्ण व्याख्यान दिये तथा कम्प्यूटर पर प्रात्यक्षिक दिखाए।

कार्यशाला के अंतिम सत्र में साफटेक लि. की कु. यामिनी कुलकर्णी ने "अक्षर" द्विभाषी साफ्टवेयर (शब्द संसाधन) के बारे में विस्तृत रूप से प्रशिक्षण दिया व कम्प्यूटर पर प्रशिक्षार्थियों से गहन अभ्यास करवाया।

इस विशेष कार्यशाला का आयोजन व संचालन निगम के राजभाषा अधिकारी श्री वी. आर. जनावडेजी के मार्गदर्शन में निगम के हिन्दी अधिकारी श्री रमेश सावंत ने हिन्दी सहायक श्री गिरीश श्रीवास्तव, श्री श्याम सुन्दर प्रसाद व श्री सुरेन्द्र तिवारी के सहयोग से किया।

परमाणु ऊर्जा विभाग भारी पानी संयंत्र-तूतीकोरिन, तमिलनाडु

परमाणु ऊर्जा विभाग भारी पानी संयंत्र-तूतीकोरिन (तमिलनाडु) में दिनांक 11 एवं 12 मार्च, 1998 को संयंत्र के 20 कर्मचारियों के लिए चौदहवीं हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया।

श्री एस. सुन्दरसेन, उत्पादन प्रबंधक ने अपने भाषण में बताया कि हिन्दी ही ऐसी भाषा है जो भारत में सबसे अधिक लोगों द्वारा बोली जाती है। अपनी मातृभाषा/प्रान्तीय भाषा के अलावा हिन्दी को जानना अनिवार्य है। भारत जैसे विशाल देश की प्राकृतिक सुन्दरता, कला और विभिन्न सांस्कृतियों का आनन्द उठाने के लिये जनसंपर्क भाषा के रूप में हिन्दी को जानना जरूरी है।

श्री डब्ल्यू. एस. ए. कान्तैया, उप महाप्रबन्धक व अध्यक्ष-राजभाषा कार्यान्वयन समिति ने अपने संबोधन में बताया कि मनुष्य दूसरों से संपर्क करने, अपना ज्ञान बढ़ाने और व्यापार के लिये किसी भाषा को सीखता है। प्रांतीय भाषा जानने से हम केवल उस प्रदेश के भागीदार बनते हैं जबकि हिन्दी जानने से हम पूरे भारतवर्ष के सभी प्रांतों के भागीदार बनते हैं। हिन्दी सीखना आसान है और अपनी प्रांतीय भाषा द्वारा हिन्दी सीखना और भी आसान होगा। उन्होंने उपस्थित कर्मचारियों से अपील की कि वे सब हिन्दी सीखने में पूरी रूचि दिखायें और अपने परिवार के सदस्यों को भी हिन्दी पढ़ायें।

श्री एम. पी. महाजन, महा प्रबन्धक ने अपने उद्घाटन भाषण में राजभाषा हिन्दी की महानता के बारे में बोलते हुए कहा कि इस महान देश के नागरिक होने का हम सब को गर्व है और आसान, सरल व सक्षम भाषा हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में पाने का भी। भारत की विभिन्न संस्कृति, कला, दर्शन और जनता जनार्दन को एक सूत्र में बांधने वाली भाषा हिन्दी ही हो सकती है—अंग्रेजी नहीं। भारत की सभी भाषाओं में संस्कृत के शब्द देखने को मिलते हैं और हिन्दी का मूल भी संस्कृत ही है।

संकाय सदस्यों ने इस दो दिवसीय हिन्दी कार्यशाला में हिन्दी भाषा संरचना, शब्द, व्याकरण, सरल हिन्दी, हिन्दी शिक्षण योजना, प्रोत्साहन योजनायें तथा राजभाषा नियमों की संक्षिप्त जानकारी दी जिससे सभी प्रतिभागियों को भारत सरकार की राजभाषा नीति के तहत विभिन्न कार्यक्रमों/पुरस्कारों संबंधी जानकारी मिली।

समापन सत्र के दौरान, महा प्रबंधक श्री एम. पी. महाजन ने प्रतिभागियों को विभिन्न योजनाओं का लाभ उठाकर हिन्दी सीखने के लिये प्रेरित किया।

इंजीनियर्स इंडिया लिमिटेड

ई आई एल, नई दिल्ली में दिनांक 11 मार्च, 1998 को स्तर 13 से 15 के अधिकारियों के लिये एक दिन की हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया। कार्यशाला का उद्घाटन डॉ. आर.के.एम. भण्डारी महाप्रबंधक (इंजीनियरी), ने किया। कार्यशाला का उद्घाटन करते हुए डॉ. भण्डारी ने कहा कि हमारा देश एक बहुभाषी देश है, परन्तु भाषाओं और बोलियों की इन विविधताओं में हिन्दी एक सम्पर्क भाषा के रूप में कायम है। देश को एक सूत्र में पिरोने में हिन्दी का बहुत बड़ा योगदान है।

इसी तथ्य को आत्मसात् करके राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने राष्ट्रीय आन्दोलन को हिन्दी माध्यम से चलाया। डॉ. भण्डारी ने बताया कि चीन और जापान देश हमारे सामने ऐसी मिसाले हैं जिन्होंने विश्व स्तर पर वर्चस्व बनाने में अंग्रेजी का दामन नहीं थामा। इन देशों ने यह साबित कर दिया है कि देश के सर्वांगीण विकास में अपनी भाषा का महत्वपूर्ण योगदान होता है। उन्होंने कहा कि इस कार्यशाला की सार्थकता यही है कि आप यहां से जो कुछ भी सीखें उसे कार्यरूप में परिणत करें और हिन्दी में काम करने की शुरुआत करें।

उद्घाटन सत्र में डॉ. कृष्ण मोहन मित्तल, उप महाप्रबंधक (राजभाषा एवं कार्मिक) ने भी प्रतिभागियों को संबोधित किया। कार्यशाला के आरम्भ में डॉ. मित्तल ने डॉ. राबीर सिंह, वरिष्ठ कार्यपालक को हिन्दी में डॉक्टरेट की उपाधि मिलने पर बधाई दी और आशा व्यक्त की कि इससे कम्पनी में हिन्दी के कामकाज में और निखार आयेगा। अपने संबोधन में उन्होंने कहा कि स्वतन्त्रता आंदोलन के नायकों की भाषा हिन्दी ही थी चाहे वह बंगाल के नेताजी सुभाष चन्द्र बोस थे या फिर पंजाब के सरदार भगत सिंह। "मेरा रंग दे बसन्ती चोला" या "फिर कदम-कदम बढ़ाये जा" जैसे राष्ट्र भक्ति के ओजपूर्ण गीतों की रचना हिन्दी में ही की गई। शहीदों ने "भारत माता की जय" बोलते हुए फांसी के फंदे चूम लिये थे। हमारी कंपनी भारत सरकार का उपक्रम है जहां राजभाषा नीति का अनुपालन अपेक्षित है। उन्होंने बताया कि प्रबंधन हर वर्ष 12 कार्यशालाएं आयोजित

करता है जिसमें से 6 कार्यशालाएं साइटों पर तथा 6 मुख्यालय में की जाती हैं। इस वर्ष कई कार्यशालाएं पूर्वोत्तर क्षेत्रों (असम, डिगबोई) में भी आयोजित की गई। इन कार्यशालाओं का उद्देश्य यही होता है कि प्रत्येक अधिकारी तथा कर्मचारी को राजभाषा नीति की अपेक्षित जानकारी हो। उन्होंने कहा कि प्रबंधन हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने के लिए प्रतिबद्ध है। उन्होंने सभी प्रतिभागियों से अनुरोध किया कि वे कंपनी में राजभाषा प्रयोग को बढ़ाने के लिए अपना सक्रिय योगदान दें, स्वतंत्रता की स्वर्ण जयंती पर शहीदों को यही हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

उद्घाटन सत्र में इससे पहले डॉ. राजबीर सिंह ने सभी का स्वागत किया तथा कार्यशाला के उद्देश्यों पर प्रकाश डाला।

कार्यशाला में "भारत सरकार की राजभाषा नीति" विषय पर अतिथि वक्ता श्री डी. पी. बन्दूनी, उप निदेशक, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, ने सत्र का संचालन किया। उन्होंने अपने व्याख्यान में हिन्दी को राजभाषा बनाए जाने की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालते हुए हिन्दी की संवैधानिक स्थिति, राजभाषा अधिनियम 1963 की धाराओं, उप धाराओं तथा राजभाषा नियम 1976 की विभिन्न अपेक्षाओं पर विस्तृत जानकारी दी।

"मानक हिन्दी वर्तनी" विषय पर अतिथि वक्ता डॉ. रामकरण डबास, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, राज्य शैक्षिक तथा प्रशिक्षण अनुसंधान परिषद् ने सत्र लिया। उन्होंने अपने व्याख्यान में मानक हिन्दी वर्तनी की जानकारी दी।

"देवनागरी में कंप्यूटर सुविधाएं" विषय पर श्री उपेन्द्र तिवारी ने सत्र लिया। "पत्राचार अभ्यास" और "राजभाषा प्रोत्साहन योजनाएं" विषयों पर डॉ. राजबीर सिंह ने सत्र लिए जिसमें उन्होंने कंपनी में प्रयोग में लाए जा रहे विभिन्न पत्राचारों की जानकरी दी तथा प्रतिभागियों से अभ्यास कराया।

कार्यशाला के अंत में परीक्षा ली गई जिसका संचालन श्री नगेन्द्र मिश्र ने किया, जिसमें 2 पुरस्कार प्रदान किए गए। हिन्दीभाषी क्षेत्र में पुरस्कार सिस्टम इंजीनियरी एवं कंप्यूटर सेवाएं विभाग के श्री आर. के. बहल (मातृभाषा-हिन्दी) को तथा अहिन्दीभाषी क्षेत्र में पुरस्कार लागत इंजीनियरी विभाग के श्री सुनंजय वैष्णव (मातृभाषा-बंगला) को मिला।

देना बैंक, क्षेत्रीय कार्यालय, स्टेशन रोड, भुज

देना बैंक, क्षेत्रीय कार्यालय, भुज ने दिनांक 13-14 मई 1998 को अधिकारी संवर्ग हेतु द्वि-दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया।

इस कार्यशाला में देना बैंक के साथ-साथ कच्छ ग्रामीण बैंक, सैंट्रल बैंक एवं पंजाब नेशनल बैंक के अधिकारियों ने भाग लिया।

कार्यशाला के उद्घाटन के अवसर पर अपने प्रवचन में आकाशवाणी, भुज के केन्द्र निदेशक श्री जयंती जोशी 'शबाब' ने कहा कि हिन्दी इस धरती की तथा धरती-पुत्रों की भाषा है, यह एकता की भाषा है। इसमें प्रचुर मात्रा में साहित्य तथा संदर्भ साहित्य उपलब्ध है। उन्होंने कहा कि हमें इसे केवल संवैधानिक प्रावधानों के कारण ही नहीं अपितु पूरे देश को एकसूत्र में बाँटने तथा आम व्यक्ति से जुड़ने हेतु भी इसे मन से अपनाना चाहिए।

इस अवसर पर देना बैंक के क्षेत्रीय प्राधिकारी तथा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, भुज के अध्यक्ष श्री नितिन त्रिवेदी ने अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में कहा कि हिन्दी भाषा के माध्यम से हम लोगों के दिलों तक पहुंच सकते हैं और इस तरह हम न केवल अपनी नैतिक एवं संवैधानिक जिम्मेदारी को निभा पाएंगे, अपितु बैंकिंग कारोबार को और ज्यादा जनोन्मुखी भी बना सकेंगे।

कार्यशाला के समापन समारोह की अध्यक्षता करते हुए कच्छ ग्रामीण बैंक के अध्यक्ष श्री मनुभाई पंडित ने कहा कि अंग्रेजी के माध्यम से हम गांव-गांव तक नहीं पहुंच सकते और न ही आम जनता तक अपनी बात पहुंचा सकते हैं तथा न ही उनकी बात समझ सकते हैं, इसलिए हमें चाहिए कि हम जितनी जल्दी हो सके, अंग्रेजी भाषा से अपना पीछा छुड़ा लें तथा राजभाषा के प्रचार प्रसार में अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगा दें।

आकाशवाणी : कटक

आकाशवाणी, कटक केन्द्र द्वारा दिनांक 17-2-98 से 19-2-98 तक एक त्रिदिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला में आकाशवाणी, कटक केन्द्र के अधिकारि/कर्मचारियों के साथ ओडिशा स्थित अन्य आकाशवाणी एवं दूरदर्शन केन्द्र के अधिकारि एवं कर्मचारियों ने भाग लिया। उद्घाटन सत्र में सभी अतिथियों एवं प्रतिभागियों का स्वागत श्री वासुदेव सिंह, हिन्दी अधिकारी ने किया। दिनांक 17-2-98 दिन को केन्द्र निदेशक, श्री हृषिकेश पाणि ने कार्यशाला का उद्घाटन किया। उन्होंने प्रतिभागियों को संबोधित करते हुए कहा कि, हिन्दी हमारी राजभाषा है। यह सारे हिन्दुस्तान में समझी और बोली जाती है। उन्होंने सभी प्रतिभागियों का स्वागत करते हुए संघ सरकार की राजभाषा नीति को सही ढंग से अनुपालन करने का उपदेश दिया।

उद्घाटन सत्र में आकाशवाणी के अधीक्षक अभियंता, श्री राम नारायण चौधरी सम्माननीय अतिथि थे। उन्होंने कहा कि हिन्दी हमारी राजभाषा होने के नाते हम सबको हिन्दी में कार्यालयीन काम-काज करना चाहिए।

कार्यशाला में विभिन्न अधिकारियों/विद्वानों ने राजभाषा हिन्दी के संबंध में अपने व्याख्यान दिए।

समापन समारोह के अवसर पर डॉ अजय पटनायक रेवेंशॉ महाविद्यालय, कटक के हिन्दी विभागाध्यक्ष मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे। उन्होंने अपने संबोधन में कहा कि, हिन्दी हमारी राजभाषा है। एक आजाद राष्ट्र के लिए एक संविधान, एक झंडा, एक राष्ट्रगान एवं एक राष्ट्रभाषा होनी चाहिए। उन्होंने कहा कि आजादी से पहले हिन्दी राष्ट्र की भाषा रही है और आज भी है। हिन्दी देश का एक सूत्र में पिरोने का माध्यम है। उन्होंने कहा लाठी चार्ज, घेराव आदि कई शब्द हिन्दी से भी अंग्रेजों ने लिए हैं। उसी प्रकार सारी भाषाओं से शब्द लेकर हिन्दी समृद्ध हुई है। आप लोग कार्यशाला में प्रशिक्षित हुए हैं। मैं कार्यशाला को यज्ञशाला मानता हूं। इसमें पाये ज्ञान को जरूर व्यवहार में लाने की कोशिश करें। अत: कार्यालय में हिन्दी में काम करें। इसके तुरंत बाद सभी प्रतिभागियों को मुख्य अतिथि के कर कमलों से प्रमाण-पत्र वितरित किए गए।

समापन समारोह के अवसर पर अध्यक्षता कर रहे थे आकाशवाणी, कटक केन्द्र के अधीक्षक अभियंता, श्री राम नारायण चौधरी। अपने अध्यक्षीय अभिभाषण में उन्होंने कहा कि, किसी भी स्वाभिमानी देश के लिए किसी भी गुलामी भाषा को स्वीकार करना ठीक नहीं है। जहां तक हिन्दी का प्रयोग कार्यालय से संबंधित है, उसे लिखा पढ़ी, बोलचाल एवं व्यवहार में लायें।

नेशनल इन्श्योरेन्स कंपनी लिमिटेड दिल्ली क्षेत्रीय कार्यालय-2, नई दिल्ली

नेशनल इन्श्योरेन्स कंपनी लिमिटेड के दिल्ली क्षेत्रीय कार्यालय-2 में राजभाषा विभाग द्वारा दिनांक 28-1-98 को एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला में मंडल-8 तथा अधीनस्थ पंजाबी बाग शाखा, डी. ए. वी., कर्मपुरा, कर्मपुरा शाखा तथा जनकपुरी शाखा कार्यालय के 35 अधिकारियों/कर्मचारियों ने भाग लिया। इस कार्यशाला में मुख्य अतिथि के रूप में श्री डी. पी. बन्दुनी, उप निदेशक, हिन्दी कार्यान्वयन कार्यालय (नई दिल्ली), राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय उपस्थित थे।

कार्यशाला के प्रथम सत्र में श्री डी. पी. बन्दुनी, उप निदेशक ने अपना व्याख्यान दिया। व्याख्यान का विषय था 'संघ की राजभाषा नीति और हमारा दायित्व-आधुनिक उपकरणों के संबंध में'। उन्होंने संघ की राजभाषा नीति, राजभाषा अधिनियम, 1963 तथा राजभाषा नियम 1976 के प्रावधानों की जानकारी दी। संक्षेप में कंप्यूटरीकरण पर भी सारगर्भित जानकारी दी।

दूसरा व्याख्यान श्री शंकरदेव वर्मा, प्रशा. अधिकारी, दि. क्षे. का. ने 'राजभाषा कार्यान्वयन का व्यावहारिक पक्ष' पर दिया। उन्होंने हिन्दी तिमाही प्रगति रिपोर्ट सही-सही भरने, राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों के आयोजन व वार्षिक कार्य योजना के विषय में उपयोगी जानकारी दी।

तीसरा व्याख्यान श्री वेद प्रकाश, प्रशा. अधिकारी, दि. क्षे. का.-2 ने 'हिन्दी में किया जा सकने वाला सामान्य पत्राचार' विषय पर दिया। उन्होंने प्रतिभागियों को जानकारी देते हुए बताया कि हिन्दी में पत्राचार करते समय किन-किन बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए।

कार्यशाला का अंतिम व्याख्यान श्री आर. पी. शर्मा, प्रशा. अधिकारी ने 'द्विभाषिक फार्मों को हिन्दी में भरना' विषय पर दिया। उन्होंने प्रतिभागियों से द्विभाषिक फार्मों को हिन्दी में भरने का भी अभ्यास कराया।

समिति समाचार

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, कानपुर

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, कानपुर की वर्ष 1997-98 की दूसरी बैठक 22 जनवरी, 1998 को अपर महानिदेशक, आयुध निर्माणी तथा सदस्य आयुध निर्माणी बोर्ड श्री आर.एन. महतानो की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। बैठक में 96 सदस्यों ने भाग लिया।

बैठक में राजभाषा हिंदी की प्रसार वृद्धि के संबंध में चर्चा हुई। इलैक्ट्रानिक टाइपराइटर उपलब्ध करवाने, कंप्यूटर प्रशिक्षण की व्यवस्था करने आदि के विषय में निर्णय लिए गए। हिंदी की तिमाही प्रगति रिपोर्टों की समीक्षा करते समय सदस्य सचिव ने बताया कि उन्हें 66 सदस्य कार्यालयों से यह रिपोर्ट प्राप्त हुई है जबकि पिछली बैठक में 111 कार्यालयों से रिपोर्टें प्राप्त हुई थी। राजभाषा अधिनियम की धारा 3 (3) का शत-प्रतिशत अनुपालन करने, हिंदी में मूल पत्राचार, हिंदी में नोटिंग आदि के संबंध में निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए संबंधित कार्यालयों को आवश्यक निर्देश जारी करने के लिए निर्णय लिए गए। बैठक में अधिकारियों ने राजभाषा हिंदी को बढ़ावा देने के संबंध में अनेक सुझाव दिए, जिन पर अध्यक्ष महोदय ने आवश्यक कार्रवाई करने के लिए कहा। अध्यक्ष ने अपने वक्तव्य में कहा कि राजभाषा अधिनियम 1976 के प्रावधानों के अनुसार सरकार के प्रत्येक कार्यालय के प्रशासनिक प्रधान का उत्तरदायित्व है कि वह यह सुनिश्चित करे कि राजभाषा अधिनियम और नियम के उपबंधों और केन्द्र सरकार द्वारा जारी किए गए निर्देशों का समुचित रूप से अनुपालन हो रहा है। उन्होंने कहा कि राजभाषा नीति के अनुपालन हेतु विभिन्न मंत्रालयों, विभागों एवं कार्यालयों आदि द्वारा किए गए। उन्हें अपने कार्यों के लिए प्रोत्साहन एवं पुरस्कारों की व्यवस्था है। प्रोत्साहनों के साथ ही कार्यशालाएं, प्रशिक्षण कार्यक्रम, प्रतियोगिताएं, पत्रिकाओं का प्रकाशन आदि हिंदी के प्रगामी प्रयोग को बढ़ाने और इसकी प्रसार वृद्धि में सहायक होते हैं। राजभाषा हिंदी में अधिकाधिक कार्य करने के बारे में उन्होंने कहा कि आवश्यकता इस बात की है कि ऊंचे अधिकारी अपने अधीनस्थ अधिकारियों/कर्मचारियों को नेतृत्व एवं प्रेरणा प्रदान करें।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, आगरा

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, आगरा की 33वीं बैठक श्री जे.एस.आर. अहलूवालिया, आयकर आयुक्त की अध्यक्षता में दिनांक 29-1-98 को सम्पन्न हुई। बैठक का शुभारम्भ माँ सरस्वती की प्रतिमा पर माल्यार्पण एवं दीप प्रज्वलित कर हुआ। इसके बाद राजभाषा हिंदी विषयक विभिन्न मदों पर चर्चा की गई। बैठक में सदस्य सचिव ने बताया कि केन्द्र सरकार के 64 कार्यालयों में से 15 कार्यालयों की रिपोर्टें. 26 उपक्रमों में से 10 उपक्रमों की रिपोर्टें और 16 बैंकों में से 7 बैंकों की तिमाही प्रगति रिपोर्टें प्राप्त हुई हैं। इससे यह जाहिर होता है कि सदस्य कार्यालय तिमाही प्रगति रिपोर्टों को भेजने में कोताही बरतते हैं और इससे उनके कार्यालयों में हिंदी की प्रगति का सही मूल्यांकन नहीं हो पाता है। अध्यक्ष महोदय ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि भारत में लिखे जा रहे शोध-पत्रों को यदि हिंदी में लिखा जाए तो भारत के शोधार्थियों को तो लाभ होगा ही और इससे अन्य देशों के लोग भी हिंदी भाषा सीखने के लिए बाध्य होंगे। इसके लिए उन्हें अनुवादक भी रखने पड़ेंगे। उन्होंने यह भी कहा कि जहां तक संभव हो शोधार्थियों में हिंदी भाषा के प्रति प्रेम की भावना जाग्रत की जानी चाहिए, जिससे कि वे अपने शोध-पत्र हिंदी भाषा में लिखने के लिए प्रेरित हो सकें।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, भोपाल

भोपाल नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक श्री के.के. महनती, मुख्य आयकर आयुक्त की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। बैठक में अनुपस्थित अधिकारियों को अध्यक्ष स्तर पर पत्र भेजना, कार्यसाधक ज्ञान के लिए अधिकारियों एवं कर्मचारियों के लिए अलग-अलग कार्यशालाएं आयोजित करना, समिति के स्तर पर पत्रिका प्रकाशित करना आदि निर्णय लिए गए। बैठक में गृह मंत्रालय राजभाषा विभाग के उप निदेशक भी उपस्थित थे। उन्होंने कहा कि इस तरह की बैठकों की सार्थकता और महत्व तभी है जब बैठकों में लिए गए निर्णयों के अनुसार कार्यालयों में हिंदी का कामकाज बढ़े। अध्यक्ष महोदय ने कहा कि वे स्वयं अहिंदी भाषी अधिकारी हैं, हिंदी हमारी राजभाषा है और यह जैसे बोली जाती है वैसे ही लिखी भी जाती है। जहां तक हिंदी बोलने, समझने और पढ़ने की जरूरत है उसमें कहीं कोई कठिनाई नहीं होती है। जहां तक लिखने की बात है तो कार्यालयों का कामकाज टंकण यंत्रों के द्वारा होता है जो सुगमता से हिंदी में किया जा सकता है। अध्यक्ष महोदय ने कहा कि कुछ लोगों को ठीक से अंग्रेजी नहीं आती और वे गलतियां भी बहुत करते हैं, लेकिन फिर भी वे अंग्रेजी में काम करते हैं। जिसका एक कारण यह है कि उन्होंने अपनी मानसिकता नहीं बदली है।

खाद्य और नागरिक पूर्ति विभाग

खाद्य और नागरिक पूर्ति विभाग तथा शर्करा और खाद्य विभाग की संयुक्त राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक 27 मार्च, 1998 को संयुक्त सचिव प्रशासन की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। बैठक में खाद्य मंत्रालय को "परिचय" नामक पत्रिका को फिर से प्रकाशित करने और इसमें मंत्रालय के अधिकारियों/कर्मचारियों के लेख प्रकाशित करने के बारे में निर्णय किया गया। इसी तरह भारतीय खाद्य निगम के "अन्नपूर्णा" नामक पत्रिका जिसे फिलहाल प्रकाशित नहीं किया जा रहा है उसे पुन: प्रकाशित करने का निर्णय किया गया। केन्द्रीय भण्डारण निगम से भी एक मासिक पत्रिका प्रकाशित करने के लिए कहा गया। हिंदी पत्राचार के प्रयोग की स्थिति पर चर्चा करते समय यह निर्णय किया गया कि जिन कार्यालयों में हिंदी पत्राचार में गिरावट आई है, उन कार्यालयों का निरीक्षण किया जाए जो प्रभागाध्यक्ष बैठक में उपस्थित नहीं थे, अध्यक्ष महोदय ने सुझाव दिया कि भविष्य में उनके प्रतिनिधि बैठक में अवश्य भाग लें।

पश्चिम रेलवे

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, रतलाम की बैठक दिनांक 23-3-98 को श्री डी.एन. माथुर, मंडल रेल प्रबंधक, रतलाम की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। बैठक में कर्मचारियों के हिंदी ज्ञान एवं प्रशिक्षण, हिंदी टाइपराइटरों की स्थिति आदि के संबंध में चर्चा की गई। राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) के अनुपालन के संबंध में चर्चा करते समय समिति को बताया गया कि पंजाब नेशनल बैंक, दूरदर्शन केन्द्र द्वारा इस मद का अनुपालन नहीं किया जा रहा है। इन दोनों कार्यालयों को इस ओर विशेष ध्यान देने के लिए कहा गया। कुछ कार्यालयों द्वारा हिंदी में प्राप्त पत्रों के उत्तर अंग्रेजी में दिए जा रहे हैं। ऐसे कार्यालयों को हिंदी में प्राप्त पत्रों के उत्तर हिंदी में देने के लिए ही कहा गया और इन्हें भविष्य में इस ओर विशेष निगरानी रखने के लिए कहा गया।

आकाशवाणी, जबलपुर

आकाशवाणी, जबलपुर की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की तिमाही बैठक 23 जनवरी, 1993 को श्री वीरेन्द्र कुमार सिंगला, अधीक्षक अभियंता की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। बैठक में हिंदी की तिमाही प्रगति रिपोर्ट पर चर्चा की गई और समिति को बताया गया कि धारा 3(3) का शत-प्रतिशत अनुपालन हो रहा है। हिंदी में प्राप्त पत्रों के उत्तर हिंदी में दिए जाते हैं तथा प्रेषण विभाग को निदेश दिए गए हैं कि क्षेत्रवार पत्रों को वर्गीकृत करके उनका प्रतिशत ज्ञात किया जाए तथा अंग्रेजी में प्राप्त पत्रों के उत्तर हिंदी में ही दिए जाएं। अधिकारियों एवं कर्मचारियों के ज्ञानवर्धन के लिए उपयोगी संदर्भ साहित्य को उपलब्ध करवाने के बारे में भी निर्णय लिए गए। अधिक से अधिक संख्या में हिंदी में तार भेजने हेतु एक कार्यशाला के आयोजन के संबंध में भी निर्णय लिए गए।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, मणिपुर, इम्फाल

इम्फाल, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक दिनांक 23-1-98 को श्री के. खाइफेई, महालेखाकार (ल.प.) मणिपुर की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। बैठक में वार्षिक कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के संबंध में विचार-विमर्श हुआ और आवश्यकतानुसार समुचित निर्णय लिए गए। अध्यक्ष महोदय ने कार्यालय प्रमुखों से आग्रह किया कि वे निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने की कोशिश करें। इस बैठक में जो कमियां रह गई हैं, अगली बैठक में ये कमियां पुनः नहीं आनी चाहिए। उन्होंने सभी कार्यालयों में राजभाषा कार्यान्वयन समितियों के अविलम्ब गठन तथा राजभाषा अधिकारी को शीघ्र नामित करने के संबंध में भी निदेश दिए।

कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग

कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग की नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक श्री रमेश कुमार टण्डन, संयुक्त सचिव (प्रशा.) की अध्यक्षता में दिनांक 4-2-98 को सम्पन्न हुई।

बैठक में अध्यक्ष महोदय ने सर्वप्रथम उपस्थित सदस्यों का स्वागत किया, साथ ही उन्होंने यह खेद भी प्रगट किया कि लगातार अनुरोध करने के बाद भी कुछ विभागों के प्रभागाध्यक्ष इस बैठक में उपस्थित नहीं होते हैं। इस संबंध में उन्होंने अनुपस्थित सदस्यों के संबंधित विभागाध्यक्ष, प्रभागाध्यक्ष आदि को एक अ.शा. पत्र अपनी ओर से भेजने के लिए संबंधित अधिकारी को कहा। अधिकाधिक सरकारी कामकाज हिंदी में करने के लिए तिमाही प्रोत्साहन स्वरूप नगद पुरस्कार योजना को वित्तीय वर्ष के आधार पर संचालित करने का निर्णय किया गया और इसे वित्त वर्ष 1998-99 से लागू करने के लिए भी कहा गया। समिति को बताया गया कि बार-बार अनुस्मारक जारी करने के पश्चात् भी कुछ प्रभाग/अनुभाग/डेस्क अपनी तिमाही प्रगति रिपोर्ट समय पर नहीं भेजते हैं। इस संबंध में अध्यक्ष महोदय ने सर्वसंबंधितों का ध्यान आकृष्ट किया और कहा कि तिमाही प्रगति रिपोर्ट समय पर भेजी जाए। हिंदी कार्यशालाओं के आयोजन एवं अधिकारियों/कर्मचारियों के कंप्यूटर पर हिंदी में काम करने के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था करने के बारे में आवश्यक कार्रवाई करने के लिए कहा।

केन्द्रीय उत्पाद तथा सीमा शुल्क आयुक्त का कार्यालय, औरंगाबाद

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, औरंगाबाद की बैठक श्री ए.एस. सिद्धु, आयुक्त की अध्यक्षता में दिनांक 20-2-98 को सम्पन्न हुई। बैठक में राजभाषा हिंदी के प्रयोग को बढ़ाने के लिए निर्णय किया गया। अध्यक्ष महोदय ने कहा कि समिति की बैठक को गंभीरता से लिया जाना चाहिए और बैठक में किए गए निर्णयों पर आवश्यक कार्रवाई की जानी चाहिए। उन्होंने अधिकारियों/कर्मचारियों से यह भी अनुरोध किया कि जब वे बैठक में आएं तो वे अपनी पूरी तैयारी करके आएं। उन्होंने हिंदी पत्रों की प्राप्ति एवं प्रेषण के लिए भी अलग-अलग रजिस्टर बनवाने के लिए निदेश दिए।

लेकिन अब समय आ गया कि हम अपनी भाषा से जुड़ें और एक आम व्यक्ति की सामान्य बोलचाल की भाषा हिंदी में काम करें जिससे लोगों में हिंदी भाषा के माध्यम से परस्पर प्रेम और विश्वास बढ़ सके। उन्होंने अपने संबोधन में आगे कहा कि कार्यालयों में हिंदी में कामकाज करने में कुछ कठिनाइयां आ सकती हैं, जिन्हें आपसी सहयोग से दूर किया जा सकता है। जरूरत इस बात की है कि हम निष्ठा से हिंदी में काम करने का संकल्प लें।

महाराष्ट्र राज्य स्तरीय बैंकर समिति (राजभाषा)

बैंक ऑफ महाराष्ट्र के संयोजन में महाराष्ट्र राज्य स्तरीय बैंकर समिति (राजभाषा) की तेरहवीं बैठक दिनांक 22 दिसंबर, 1997 को बैंक के प्रधान कार्यालय, पुणे में संपन्न हुई। बैठक की अध्यक्षता बैंक ऑफ महाराष्ट्र के अध्यक्ष व प्रबंध निदेशक श्री टी.एस. राघवन ने की। बैठक में भारत सरकार, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के अनुसंधान अधिकारी

श्री मोतीलाल गुप्ता तथा भारतीय रिज़र्व बैंक, बैंकिंग परिचालन व विकास विभाग के महाप्रबंधक डॉ. राजेश्वर गंगवार विशेष रूप से उपस्थित थे। महाराष्ट्र राज्य में स्थित सरकारी क्षेत्र के बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के वरिष्ठ कार्यपालकगण और राजभाषा प्रतिनिधियों ने बैठक में भाग लिया। बैंकिंग प्रभाग (वित्त मंत्रालय) के प्रतिनिधि अपरिहार्य कारणों से बैठक में उपस्थित नहीं हो सके।

सर्वप्रथम बैंक ऑफ महाराष्ट्र के उप महाप्रबंधक (कार्मिक) श्री आर.एस. चिंचालकर ने सभी उपस्थितों का स्वागत किया। अपने स्वागत भाषण में उन्होंने कहा कि बैंकिंग के दैनिक कामकाज में हिन्दी का प्रयोग एक अनिवार्यता बनती जा रही है और व्यवहार की दृष्टि से भी इसे हर स्तर पर आवश्यक पाया जा रहा है।

तत्पश्चात बैंक के महाप्रबंधक (आयोजना, विकास व निगमित सेवाएँ) श्री प्रकाश नेने ने अपने भाषण में कहा कि जनमानस हिंदी को सहजता से समझता है, अतः ग्राहक सेवा की दृष्टि से भी यह अत्यंत अनुकूल है। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि जहां कहीं मनोवैज्ञानिक रुकावटें हैं, उसे दूर करने का सार्थक प्रयास किया जाए।

इसके उपरांत सहायक महाप्रबंधक (औ.सं.व मा.सं.वि.) श्री एम. एस. जोशी ने बैंको में राजभाषा कार्यान्वयन पर टिप्पणी प्रस्तुत की। विभिन्न बैंको के राजभाषा कार्य और उपलब्धियों का उल्लेख करते हुए श्री जोशी ने कहा कि हिन्दी के प्रयोग की दिशा में बैंकिंग उद्योग ने सदैव पहल की है और बैंको तथा वित्तीय संस्थाओं में राजभाषा का प्रयोग निरंतर गतिशील है। उन्होंने कहा कि हिंदी ने सशक्त संपर्क भाषा के रूप में अपनी पहचान बनाई हैं।

तत्पश्चात सदस्य-सचिव व प्रभारी वरिष्ठ प्रबंधक (राजभाषा) डॉ.दामोदर खडसे ने पिछली बैठक में लिए गए निर्णय और की गई कार्यवाई की जानकारी प्रस्तुत की और उसके बाद सदस्यों ने सर्वसम्मति से पिछली बैठक के कार्यवृत्त की पुष्टि की।

बैठक में अनुवाद प्रशिक्षण, धारा 3(3) का अनुपालन हिंदी पत्राचार आदि मदों पर विचार- विमर्श किया गया और यथोचित निर्णय भी किए गए।

भारतीय रिजर्व बैंक के महाप्रबंधक डॉ.राजेश्वर गंगवार ने अपने प्रेरक उद्बोधन में कहा कि यह अत्यंत सराहनीय बात है कि अब इस समिति की अध्यक्षता के दायित्व का निर्वाह बैंक ऑफ महाराष्ट्र के अध्यक्ष व प्रबंध निदेशक कर रहे हैं। वरिष्ठतम स्तर पर राजभाषा के प्रति यह जग रूकता सभी को प्रेरित करती है।

सदस्य बैंकों की शंकाओं का निवारण करते हुए डॉ. गंगवार ने कहा कि रिपोर्टिंग में गलतियों का प्रमुख कारण यह है कि हम मदों को ठीक तरह से पढ़कर विचार नहीं करते। यह अपेक्षित है कि रिपोर्ट की प्रत्येक मद पर उचित रूप से ध्यान देकर इसे स्पष्टता तथा पारदर्शिता के साथ भरा जाए।

उन्होंने समिति को सूचित किया कि शाखाओं में कंप्यूटर के इस्तेमाल के संबंध में द्विभाषिक सुविधा युक्त नए सॉफ्टवेयरों पर विचार किया जा रहा है। उन्होंने आशा व्यक्त की कि शीघ्र ही यह सुविधा बाज़ार में उपलब्ध हो जाएगी। उन्होंने कहा कि केवल द्विभाषिक सुविधायुक्त कंप्यूटर खरीदना ही पर्याप्त नहीं है, उन पर राजभाषा का समुचित इस्तेमाल भी आवश्यक है।

समिति के अध्यक्ष व बैंक ऑफ महाराष्ट्र के अध्यक्ष व प्रबंध निदेशक श्री टी.एस.राघवन ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि आज बैंकिंग उद्योग स्पर्धा के युग में प्रवेश कर चुका है। ऐसी स्थिति में बैंक अपने विकास के लिए जनता पर अधिक निर्भर करते हैं। हिंदी और भारतीय भाषाएं राष्ट्र के लोगों तक पहुंचने का महत्वपूर्ण माध्यम हैं, इसलिए राजभाषा केवल सांविधिक आवश्यकता न रहकर हमारे लिए सशक्त जनसंपर्क का प्रभावी और सार्थक माध्यम है।

श्री राघवन ने कहा कि राजभाषा के समयबद्ध कार्यान्वयन के लिए भारत सरकार द्वारा इस वर्ष जारी लक्ष्यों को जिन बैंकों ने अब तक प्राप्त नहीं किया है, वे शेष अवधि में इसके लिए आवश्यक प्रयास करें। उन्होंने विश्वास व्यक्त किया कि भारत सरकार व रिजर्व बैंक की अपेक्षाओं को पूरा करते हुए नई उपलब्धियां प्राप्त की जाएंगी।

संगोष्ठी/सम्मेलन

राजभाषा सम्मेलन, मिजोरम

देश के सुदूर पूर्व में स्थित मिजोरम के मनोरथ प्रदेश में राजभाषा हिन्दी के प्रति अनन्य प्रेम, उत्साह और आदर का भाव है। इसकी अत्यन्त सुखद अनुभूति वहां जाने पर ही होती है। इसका अनुमान वहां जाए बिना लगाया ही नहीं जा सकता क्योंकि अहिंदी भाषी राज्य हिंदी भाषी राज्यों से काफी दूर होने के कारण सामान्यत: यही समझा जाता है कि वहां हिन्दी जानने और समझने वालों की संख्या सीमित होगी।

सम्मेलन का शुभारंभ 19 सितम्बर को राष्ट्रगान से किया गया जो कि मिजोरम के स्कूलों की छात्राओं द्वारा प्रस्तुत किया गया था। शुरू में ही इन पंक्तियों के लेखक ने स्वागत भाषण दिया और उसके बाद मिजोरम हिन्दी प्रचार सभा के अध्यक्ष प्रो. दारछौना ने भी महामहिम राज्यपाल जी के स्वागत में दो शब्द कहे और अपनी सभा की गतिविधियों पर प्रकाश डाला। केन्द्रीय सचिवालय हिंदी परिषद के महामंत्री सरदार दर्शन सिंह ने परिषद की गतिविधियों और इस सम्मेलन के उद्देश्य के बारे में चर्चा की तथा राजभाषा विभाग के उप सम्पादक श्री सुरेन्द्र लाल मल्होत्रा ने कहा कि सम्भवत: यह पहला अवसर है कि इस दूरस्थ सीमावर्ती क्षेत्र में राजभाषा सम्मेलन आयोजित किया जा सका। उन्होंने भारत सरकार की हिंदी को प्रोत्साहन देने संबंधी गतिविधियों का संक्षिप्त उल्लेख भी किया। उन्होंने आशा वक्त की कि इस सम्मेलन से मिजोरम लोगों के हिंदी प्रेम में और भी वृद्धि होगी। अपने उद्घाटन भाषण में महामहिम राज्यपाल श्री पी.आर. किंडिया ने इस आयोजन के लिए केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद और मिजोरम हिन्दी प्रचार सभा की सराहना की और कहा कि हिंदी परस्पर सहयोग से ही आगे बढ़ेगी। उन्होंने आगे कहा कि हिंदी केवल सरकार की भाषा ही बन कर न रह जाए बल्कि इसे जनभाषा बनना चाहिए। उनका विचार था कि हिंदी की शिक्षा विद्यार्थियों को शुरू में ही प्राथमिक स्तर पर दी जानी चाहिए। उन्होंने भाषण के अन्त में जवाहर लाल नेहरू के उन शब्दों को उद्धृत किया जिनमें नेहरू जी ने कहा था कि हमें अपनी भाषाओं का सामर्थ्य और ताजगी बनाए रखने के लिए उनकी खिड़कियां और दरवाजे एक दूसरे के लिए ही नहीं बल्कि विश्व की अन्य भाषाओं के लिए भी खुले रखने चाहिए। इनसे हमारे देश की और भाषाओं की ताज़गी बनी रहेगी। बाद में मिजोरम के शिक्षा मंत्री जी ने धन्यवाद ज्ञापन करते हुए मिजोरम भाषा में अपना भाषण दिया।

उद्घाटन सत्र के बाद विभिन्न विषयों पर चिन्तन सत्र शुरू हुए। इनमें से पहले सत्र का विषय था "मिजोरम में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में हिंदी के प्रयोग की स्थिति।" इस सत्र की अध्यक्षता इन पंक्तियों के लेखक को सौंपी गई थी। प्रथम वक्ता मिजोरम के निदेशक डाक सेवा एवं अध्यक्ष नगर राजभाषा कार्यान्वयन समति, आइजोल थे। उन्होंने बताया कि आइजोल में हिन्दी के प्रशिक्षण की केन्द्र सरकार द्वारा कोई व्यवस्था नहीं है। कार्यालयों में कार्यरत अधिकांश कर्मचारी स्थानीय हैं। उन्हें हिंदी का कार्यसाधक ज्ञान न होने के कारण हिंदी में कार्य नहीं हो रहा है। फिर भी जहां-जहां हिन्दी जानने वाले कर्मचारी हैं वहां कुछ काम हिंदी में भी होता है। इस संदर्भ में उन्होंने एस.आई.बी. का उल्लेख किया। मिजोरम स्थित केन्द्रीय सरकार के किसी भी कार्यालय में हिंदी अधिकारी का कोई पद नहीं है। उन्होंने आश्वस्त किया कि नराकास के अध्यक्ष के रूप में वह मिजोरम में हिंदी के शिक्षण की व्यवस्था का प्रयास करते रहेंगे। इसके बाद आकाशवाणी केन्द्र आइजोल के सहायक निदेशक ने बताया कि उनके कार्यालय के कुछ कर्मचारी हिंदी में प्रशिक्षित हैं। कार्यालय के नामपट्ट और मोहरें आदि हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में हैं। द्विभाषी इलैक्ट्रानिक टाइपराइटर भी हैं तथा हिंदी में कार्य करने को प्रोत्साहित किया जाता है। अगले वक्ता सीमा सड़क संगठन की पुष्पक परियोजना के मुख्य अभियन्ता थे। उन्होंने बताया कि उनके कार्यालय में राजभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार के सभी उपाय किए जा रहे हैं। वहां हिंदी टंकक/हिंदी आशुलिपिक भी उपलब्ध है और परियोजना के सभी अधिकारी और कर्मचारी हिंदी जानते हैं उन्होंने बताया सप्ताह में एक दिन कार्यालय का पूरा काम हिंदी में किया जाता है और फाइलों पर टिप्पणी तथा प्रारूप भी हिंदी में लिखे जाते हैं। इसके बाद जिला प्रबंधक, दूरसंचार, आईजल ने अपने कार्यालय में हिंदी के प्रयोग की स्थिति पर प्रकाश डाला उन्होंने कहा कि उनके कार्यालय के 60% कर्मचारी हिंदी जानते हैं। कार्यालय में आयोजित हिंदी प्रतियोगिताओं में पुरस्कार पाने वाले 90% कर्मचारी अहिंदी भाषी होते हैं। सभी हिन्दी पत्रों का उत्तर हिंदी में दिया जाता है और कार्यालय की सभी रबड़ की मोहरें, नामपट्ट आदि द्विभाषी हैं। हिंदी कार्यशाला का आयोजन भी किया जाता है। उन्होंने भी आइजौल में हिन्दी प्रशिक्षण की व्यवस्था के अभाव का उल्लेख किया और कहा कि नराकास के स्तर पर मिल बैठकर इसका कोई हल निकाला जाएगा। इसके बाद राजभाषा विभाग के पूर्व उप सचिव, श्री हरिबाबू कंसल ने अपने वक्तव्य में कहा कि कार्यालयों में कार्यरत 50% से अधिक कर्मचारी हिंदी जानते हैं और उन्हें हिंदी में कार्य करने में संकोच नहीं करना चाहिए। उन्हें तथा कथित टूटी-फूटी हिंदी के इस्तेमाल से घबराना नहीं चाहिए और हिंदी लिखने और बोलने का निरन्तर अभ्यास करते रहना चाहिए। मिजोरम में कई सौ की संख्या में हिंदी शिक्षक हैं और हिंदी के प्रचार-प्रसार के कारण मिजोरम की जनता का भविष्य उज्जवल होगा और वे संघ लोक सेवा आयोग तथा कर्मचारी चयन आयोग की परीक्षाओं में हिंदी माध्यम के विकल्प का लाभ भी उठा सकेंगे।

प्रो. रासा सिंह रावत, सांसद, ने अपने प्रभावी और सारगर्भित भाषण से सभी को मंत्रमुग्ध कर दिया। उन्होंने अन्य देशों चीन, रूस, जापान, फ्रांस आदि का उदाहरण देते हुए बताया कि सभी देश अपनी-अपनी राष्ट्रभाषा में ही सरकारी कामकाज करते हैं। भारत के संविधान में राजभाषा के रूप में घोषित हिंदी अन्य भारतीय भाषाओं की बड़ी बहन है जो कि सभी छोटी बहनों से प्यार करती है। उन्होंने मोतियों की माला का उदाहरण देते हुए बताया कि सभी भाषाएं इस माला के मोतियों के समान हैं। भारत देश बहुभाषा भाषियों, बहुजातियों और बहु धर्मावलम्बिों का देश है और यदि समस्याएं उत्पन्न होती हैं तो मिल बैठकर उनका समाधान ढूंढा जा सकता है। उन्होंने मिजोरम स्थित केन्द्रीय कार्यालयों से अनुरोध किया कि

वे हिंदी का अधिक से अधिक व्यवहार करें और राष्ट्र की मुख्य धारा से जुड़ जाएं। उन्होंने आशा व्यक्त की कि मिजोरम की जनता भी हिंदी के प्रचार-प्रसार में किसी से पीछे नहीं रहेगी। उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में सभी पूर्व वक्ताओं की सराहना की। उन्होंने यह भी याद दिलाया कि संसदीय राजभाषा समिति के प्रतिवेदन के तीसरे खण्ड में की गई सिफारिशों पर महामहिम राष्ट्रपति जी के आदेशों के अनुसार केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों का हिंदी प्रशिक्षण एक निर्धारित समय सीमा के अन्तर्गत पूरा किया जाना है। इसलिए मिजोरम स्थित कार्यालयों को मिल बैठकर इसकी समुचित व्यवस्था करनी चाहिए। जैसा कि विद्यमान वातावरण की मांग भी है, मिजोरम में पहली कक्षा में हिंदी पढ़ाई जानी चाहिए। जिन कार्यालयों, बैंकों, उपक्रमों आदि में 25 से अधिक कर्मचारी हैं वहां अनुवादकों के पदों का सृजन किया जाना चाहिए।

दूसरे सत्र का विषय था, "मिजोरम में हिन्दी का प्रचार-प्रसार" और इसकी अध्यक्षता श्री सी. नाग, सचिव शिक्षा एवं मानव संसाधन, मिजोरम ने की। सबसे पहले मिजोरम हिंदी प्रचार सभा के अध्यक्ष, प्रो. दारछौना ने बताया कि उनकी सभा अपनी स्थापना के समय से ही हिंदी के प्रचार में लगी हुई है। सभा ने हिंदी प्रवीण परीक्षा भी शुरू की थी किन्तु मान्यता प्राप्त न होने के कारण लोगों में हिंदी के प्रति अपेक्षित अभिरुचि नहीं आ पाई। अब भी प्रवीण और प्रबोध की कक्षाएं आयोजित की जाती हैं। केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकार से कुछ अनुदान भी मिलता है। उन्होंने सुझाव दिया कि हिंदी की पढ़ाई प्राइमरी स्तर से शुरू की जाए, हिंदी के विकास हेतु हिंदी भवन की स्थापना की जाए, सरकारी अधिकारियों और राजनेताओं के सहयोग तथा हिंदी के लिए राज्य सरकार के सचिवालय में एक निदेशालय की स्थापना की जाए। उन्होंने यह भी मांग की कि हिंदी अध्यापकों के वेतनमान में बढ़ोतरी की जाए। इसके बाद स्पेशल हिंदी स्कूल के प्राचार्य ने बताया कि मिजोरम में 1960 में नाम मात्र की हिंदी थी। 1972 में जब मिजोरम केन्द्र शासित प्रदेश बना तो हिन्दी में अधिक काम शुरू हुआ। उन्होंने अधिक स्पेशल हिंदी स्कूल खोलने और राज्य सरकार में हिंदी निदेशालय की स्थापना की मांग की। अगली वक्ता मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, आईजौल की उप प्राचार्या (श्रीमति) डा. सी. चोड, थनमोई ने अपने विद्वत्तापूर्ण और विस्तृत भाषण में मिजोरम में हिंदी के प्रचार और प्रसार के पूरे इतिहास पर विस्तार से प्रकाश डाला और हिंदी भाषा के प्रति मिजो जनजातियों की ऐतिहासिक मानसिकता एवं विचारधारा का उल्लेख किया। उन्होंने हिंदी के प्रचार-प्रसार में आकाशवाणी की भूमिका की तरफ भी ध्यान दिलाया। इसके बाद लुंगलई के श्री एच.पाहलीश ने संक्षिप्त भाषण देते हुए बताया कि वे वहां पर हिंदी प्रचार का काम पिछले 35 वर्षों से कर रहे हैं। उन्होंने हिंदी को सम्पर्क भाषा के रूप में आगे बढ़ाने पर जोर दिया। साथ ही उन्होंने इसके लिए सरकारी सहायता की मांग की। इसके बाद डॉ. सी.ई.जीनी, रीडर, केन्द्रीय हिंदी संस्थान, आगरा, ने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा कि भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले ही संतों एवं भक्तों की वाणी के प्रचार द्वारा हिंदी का परिचय हिंदीतर प्रदेशों के लोगों को होता रहा है। इधर पूर्वांचल में महापुरूष शंकरदेव के समय (सन् 1449-1568) में ब्रजबुलि नामक रचनाएं प्रचलित हुईं जिनमें ब्रजभाषा शैली का पुट था। किन्तु मिजोरम में हिंदी का प्रचार स्वतंत्रता प्राप्ति के समय से ही होने लगा था। मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार को और आगे बढ़ाने के लिए उनका सुझाव था कि वहां पहली कक्षा से ही हिंदी की पढ़ाई शुरू हो। अतिरिक्त हिंदी अध्यापकों की नियुक्ति के लिए केन्द्र सरकार राज्य को आवश्यकतानुसार अनुदान प्रदान करे। अन्य विषयों की तरह स्कूलों की समय सारणियों में हिंदी को भी बराबर का समय (पीरियड) दिया जाए। हिंदी अध्यापकों को प्रोन्नति की शर्तें और सुविधाएं अन्य विषयों के अध्यापकों के समान दी जाएं। उत्तरपूर्वी पर्वतीय विश्वविद्यालय के आईजोल कैम्पस में हिंदी के बी.ए. स्तर पर आधुनिक भारतीय भाषा के रूप में हिंदी और वैकल्पिक हिंदी दोनों के अध्ययन के लिए सुविधाएं प्रदान की जाएं। पुस्तकालयों में पर्याप्त हिंदी पुस्तकों की व्यवस्था की जाए। राज्य के शिक्षा सचिवालय और निदेशालय में हिंदी का कार्य देखने के लिए उपशिक्षा निदेशक स्तर पर सक्षम अधिकारी नियुक्त किया जाए। छात्रों के बीच हिंदी बोलने और लिखने आदि के प्रोत्साहन के लिए समय-समय पर प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाए। मिजोरम हिंदी प्रचार सभा को जनजाति भाषाओं के साहित्य को हिंदी में अनुदित करने के लिए और उन्हें प्रकाशित करने के लिए पर्याप्त मात्रा में अनुदान दिया जाए। तत्पश्चात इस सत्र के अध्यक्ष महोदय ने सभी विद्वान वक्ताओं को धन्यवाद देते हुए कहा कि उन्होंने बहुत अच्छे सुझाव दिए हैं जिन्हें कार्यान्वित करने से राज्य में हिंदी का प्रचार-प्रसार बढ़ेगा। उनका भी विचार था कि हिंदी की पढ़ाई पहली कक्षा से शुरू होनी चाहिए और 12वीं कक्षा तक हिंदी की पढ़ाई का प्रबंध होना चाहिए। उनका ख्याल था कि हिन्दी शिक्षकों की कमी ट्रेनिंग के बाद नहीं रहेगी।

अगले दिन 20 सितम्बर को तीसरे सत्र का विषय था राष्ट्रीय एकात्मकता में हिंदी का योगदान और इसकी अध्यक्षता इन पंक्तियों के लेखक को सौंपी गई। इसमें सैंट्रल यंग मिजो एसोसियेशन के अध्यक्ष श्री वनलाल जमा और मिजोरम बैप्टिस्ट चर्च के रेवरंड लालचुंगनुगा ने प्रभावोत्पादक भाषण दिए। उन्होंने देश की एकता और अखण्डता को अक्षुण्ण रखने के लिए और राष्ट्र को मुख्य धारा में लाने के लिए हिंदी की आवश्यकता बताई। डॉ. सी.ई. जीनी ने अपने भाषण में कहा कि भाषा, धर्म, संस्कृति और राष्ट्रीयता चार तत्व ऐसे हैं जो मानव जाति को आपस में मिलाते हैं और एक दूसरे से अलग भी करते हैं। भारत जैसे बहुभाषिक देश में एक राष्ट्रभाषा-राजभाषा का होना आवश्यक है जो विविधता को एकता में आबद्ध करती हो और जिसमें परस्पर समरसता का भाव हो। हिंदी में प्रशासन और जनता के बीच की दूरियों को पाटने की क्षमता है। इसमें राष्ट्रीयता की उत्तम भावना ओत-प्रोत है। प्रसिद्ध वैयाकरण डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी ने हिंदी को भारत की सर्वाधिक समृद्ध भाषा बताया क्योंकि इसका व्याकरण अत्यन्त सुगम है और यह सहज ग्राहय है। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान उत्तर हो या दक्षिण, पूरब हो या पश्चिम सभी ने एक मत होकर यह माना था कि राष्ट्र की एकता के लिए हिन्दी ही खरी उतरती है। मुम्बई टेलीफोन्स के महाप्रबंधक श्री जे. चाको ने कहा कि देश में धार्मिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और भौगोलिक भिन्नता होते हुए भी भाषाई एकता से राष्ट्रीय एकता का निर्माण होता है। देश में सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा होने के नाते ही हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया गया है।

चौथे सत्र का विषय था, "देवनागरी लिपि की उपयोगिता" जिसकी अध्यक्षता सांसद, प्रो. रासा सिंह रावत ने की। नागरी लिपि परिषद् के मंत्री डा. परमानन्द पांचाल ने इस विषय में विस्तार से बताया कि देवनागरी लिपि में सर्वोत्तम लिपि के सभी गुण विद्यमान हैं और इसे सभी भाषाओं की वैकल्पिक लिपि के रूप में स्वीकार कर लिया जाए तो सुविधा होगी

और सभी भारतीय भाषाएं एक दूसरे की निकटता प्राप्त करेंगी। इतना ही नहीं लिपि को आसानी से अपनाया जा सकता है। जिन भाषाओं और बोलियों की अपनी लिपि नहीं है जैसे कि मिजो भाषा है उन्हें देवनागरी को अपनाना चाहिए न कि रोमन को जो कि ध्वन्यात्मक नहीं है। श्री हरिबाबू कंसल ने कहा कि देवनागरी में उच्चारण अधिक शुद्ध होता है और पूर्वांचल की भाषाओं का उच्चारण भी इनमें सही रूप से हो सकता है। उनके लिए यदि इस लिपि को अपनाया जाए तो पूर्वांचल के लोग देश की मुख्य धारा से शीघ्र जुड़ सकेंगे। राजकीय उच्चतर माध्यमिक स्कूल, आइजोल, के अध्यापक श्री आर. तावना ने भी इस विषय पर अपने विचार प्रकट करते हुए देवनागरी की विशेषताओं पर प्रकाश डाला। डॉ. सी.ई. जीनी ने कहा कि भारत में प्रचलित अधिकतर भाषाओं की लिपि की शैलियां हैं। हिंदी, मराठी और संस्कृत की लिपियां पूर्णतया देवनागरी है जबकि गुजराती, बंगला, असमिया और पंजाबी की लिपियां इससे बहुत कुछ मिलती हैं। तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम और उड़िया की वर्तमान लिपियों का संबंध देवनागरी के प्राचीन रूप से है। उन्होंने देवनागरी के विकास के इतिहास पर भी संक्षिप्त रूप से प्रकाश डाला। सन्त विनोबा के देवनागरी लिपि संबंधी आंदोलन का भी उन्होंने उल्लेख किया। इस लिपि की तुलना फारसी लिपि और रोमन लिपि से करते हुए उन्होंने अनेक उदाहरण देते हुए देवनागरी की वैज्ञानिकता को भी स्पष्ट किया। प्रोफेसर रासा सिंह रावत, सांसद ने भी इसके महत्व पर प्रकाश डाला और आशा व्यक्त थी कि यदि पूरे भारत में इसका प्रयोग सभी भाषाओं के लिए होने लगे तो लोगों में एकात्म भाव सुप्रतिष्ठित होगा।

समापन सत्र की अध्यक्षता श्री रासा सिंह रावत, सांसद ने की और इसमें मिजोरम के मुख्य मंत्री श्री ललपनहवला मुख्य अतिथि थे। सबसे पहले मिजोरम हिंदी प्रचार सभा के अध्यक्ष प्रो. दारछौना ने मुख्य मंत्री जी का स्वागत किया और उन्हें सम्मेलन के बारे में विस्तार से बताया। केन्द्रीय सचिवालय हिंदी परिषद् ने इस सम्मेलन की सफलता के लिए इसके आयोजन में सहयोग देने के लिए तथा राजभाषा हिंदी की लम्बे समय से सेवा के लिए मिजोरम की डा. सी. ई. जीनी को सम्मानार्थ शाल भेंट करने की घोषणा की जिसे माननीय मुख्य मंत्री जी ने उन्हें अपने कर कमलों से ओढ़ाया। तत्पश्चात् राजभाषा विभाग के पूर्व संयुक्त सचिव, श्री निशिकान्त महाजन ने इस सम्मेलन में तैयार की गई सात सिफ़ारिशें हिंदी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं में पढ़ कर सुनाईं जिनका प्रतिभागियों द्वारा करतल ध्वनि से स्वागत किया गया। इन सिफारिशों का उल्लेख आगे किया गया है। इस सत्र के मुख्य अतिथि, मुख्य मंत्री श्री ललथनहवला ने, सराहना की और अपनी सहमति व्यक्त करते हुए कहा कि उनकी सरकार भी मिजोरम राज्य में पहली कक्षा से ही हिन्दी की पढ़ाई शुरू करना चाहती है जैसा कि हिंदी विशेष स्कूल में हो भी रहा है। उन्होंने इस बात से भी सहमति व्यक्त की कि ऐसा करने से बच्चे हिन्दी भाषा की बारीकियों और विशिष्टताओं की जानकारी सहज रूप से प्राप्त कर सकेंगे। उन्होंने बताया कि राज्य में त्रिभाषा सूत्र के अनुसार पांचवीं से आठवीं कक्षा तक हिंदी अनिवार्य रूप से पढ़ाई जाती है जबकि नवीं कक्षा से इसे वैकल्पिक विषय के रूप में पढ़ाने की व्यवस्था की गई है। उन्होंने इस बात पर भी जोर दिया कि हिंदी को सम्पर्क भाषा के रूप में अपनाना भी जरूरी है।

सम्मेलन में निम्नलिखित सात सिफारिशें की गईं :—

1. मिजोरम वासियों की यह हार्दिक इच्छा है कि यहां हिंदी शिक्षा का स्तर ऊंचा उठे। इसके लिए यह आवश्यक है कि हिन्दी की शिक्षा प्राइमरी स्तर से आरम्भ की जाए, उसका शिक्षण दसवीं कक्षा तक अनिवार्य हो तथा हिंदी विषय में निर्धारित अंक प्राप्त कर उत्तीर्ण होना आवश्यक माना जाए। साथ ही बारहवीं कक्षा तक हिंदी को एक ऐच्छिक विषय के रूप में पढ़ाने की व्यवस्था की जाए।

2. मिजोरम सरकार हिंदी के लिए एक स्वतंत्र निदेशालय की स्थापना करे और उसका कार्य भार उच्चस्तरीय पूर्णकालिक अधिकारी को सौंपा जाए जो हिंदी के शिक्षण, प्रशिक्षण, विकास, प्रचार-प्रसार आदि विभिन्न गतिविधियों को समन्वय तथा प्रभावी संचालन कर सके ताकि इस कार्य में लगाए गए संसाधनों से अपेक्षित परिणाम प्राप्त किए जा सकें।

3. यह संतोष का विषय है कि मिजोरम सरकार और स्वैच्छिक संस्थाओं के सद्प्रयत्नों के फलस्वरूप राज्य में इस समय हिंदी जानने वाले व्यक्ति काफी बड़ी संख्या में हैं, किन्तु बोलने और लिखने के अभ्यास के अभाव में उन्हें हिंदी के व्यवहार में संकोच का अनुभव होता रहा है। इस संकोच को मिटाने तथा हिंदी के प्रति अनुकूल वातावरण बनाने के उद्देश्य से समय-समय पर हिंदी बोलने और लिखने के अभ्यास वर्ग और प्रतियोगिताएं आयोजित की जाएं और उनमें भाग लेने वालों को पुरस्कारों, प्रमाण-पत्रों आदि द्वारा प्रोत्साहित किया जाए।

4. आइजौल में आयोजित अखिल भारतीय हिन्दी सम्मेलन को इस बात का हर्ष है कि मिजोरम में सुयोग्य हिन्दी अध्यापकों की कमी नहीं है। उनके हिंदी उच्चारण का स्तर ऊंचा रहे और उनके अध्यापन कौशल में वृद्धि होती रहे, इस ओर निरन्तर ध्यान देने की आवश्यकता है। केन्द्रीय हिंदी संस्थान, आगरा में अहिंदी भाषी अध्यापकों को प्रशिक्षित करने की जो सुविधाएं उपलब्ध हैं, उनका उपयोग करते हुए, वहां प्रति वर्ष पर्याप्त अवधि के ऐसे पुनश्चर्या कोर्स आयोजित किए जाने चाहिएं जिनमें मिजोरम के अध्यापक बारी-बारी से जाकर, हिंदी भाषा क्षेत्र में मध्य में रह कर, अपने हिंदी ज्ञान की वृद्धि कर सकें और हिंदी वार्तालाप में अधिक प्रवीण हो सकें।

5. मिजोरम में जिन प्रकार छात्र-छात्राओं को हिंदी पढ़ाने की व्यवस्था है, वहां ऐसा भी होना चाहिए कि मिजोरम सरकार के अधिकारी तथा कर्मचारी भी हिंदी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर सकें। इसके लिए मिजोरम की स्वैच्छिक संस्थाओं का भी लाभ उठाया जा सकता है। केन्द्रीय सरकार को भी अपने कर्मचारियों को हिन्दी सिखाने की व्यवस्था को सुदृढ़ करना चाहिए। केन्द्रीय और राज्य सरकारों के अधिकारियों के हिंदी ज्ञान की क्षमता से मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार को बल प्राप्त होगा।

6. मिजोरम तथा आस-पास के क्षेत्रों के जो व्यक्ति केन्द्रीय सरकार की सेवाओं से संबंधित परीक्षाओं में हिन्दी माध्यम से बैठने के इच्छुक हों उनकी तैयारी में सहायता करने हेतु भारत सरकार विशेष कोचिंग केन्द्रों की स्थापना करे।

7. मिजोरम भाषियों को हिंदी सीखने में सहायक शब्दकोशों के निर्माण तथा प्रकाशन की व्यवस्था की जाए। मिजोरम के जन जीवन से संबंधित कुछ साहित्य हिन्दी में प्रकाशित करने हेतु उचित प्रोत्साहन दिया जाए। ऐसा कुछ साहित्य स्थानीय भाषा में किन्तु देवनागरी लिपि में भी प्रकाशित किया जाए।

प्रस्तुति : कृष्ण कुमार ग्रोवर, पूर्व सचिव, संसदीय राजभाषा समिति

औरंगाबाद में क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन

दिनांक 17 व 18 मार्च, 1998 को औरंगाबाद के संत एकनाथ मंदिर में पश्चिम व मध्य क्षेत्रों का संयुक्त राजभाषा सम्मेलन आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में गुजरात, महाराष्ट्र, गोआ, मध्यप्रदेश, राजस्थान राज्यों व केन्द्रशासित प्रदेश दमण, दीव व दादरा नगर हवेली के लगभग पांच सौ प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

इस सम्मेलन में पश्चिम व मध्य क्षेत्रों के अंतर्गत आने वाले केन्द्रीय कार्यालयों, बैंकों व उपक्रमों तथा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों को राजभाषा के उत्कृष्ट कार्य के लिए पुरस्कृत किया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि भारतीय कपास निगम के अध्यक्ष व प्रबंध निदेशक श्री एम. बी. लाल ने दीप प्रज्वलित कर किया। उद्घाटन व पुरस्कार वितरण कार्यक्रम की अध्यक्षता भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग के उप सचिव (कार्यान्वयन), श्री ए. एस. गोदरे ने की। कार्यक्रम में केन्द्रीय उत्पाद शुल्क आयुक्तालय के आयुक्त श्री ए. एस. सिद्धू अतिथि विशेष के रूप में उपस्थित थे। इसके अलावा केन्द्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान के निदेशक, श्री बी. डी. पाण्डे तथा राजभाषा विभाग के निदेशक (तकनीकी), श्री विजय गोयल भी उपस्थित थे। आरंभ में पश्चिम क्षेत्र की उप निदेशक (कार्यान्वयन) श्रीमती सुधा श्रीवास्तव ने अतिथियों का स्वागत किया। उसके पश्चात् पुरस्कार विजेताओं को पुरस्कार वितरित किए गए। मुख्य अतिथि के रूप में बोलते हुए श्री एम. बी. लाल ने कहा कि हिंदी कार्य के लिए प्रेरणा, प्रोत्साहन व सद्भाव की शक्ति दण्ड बल से अधिक कारगर है। अतिथि विशेष श्री ए. एस. सिद्धू का कहना था कि जब तक हिंदी शब्द कोश से बाहर नहीं निकलेगी तब तक हिंदी की तरक्की नहीं हो सकेगी। इस अवसर पर उप सचिव (कार्यान्वयन) श्री ए. एस. गोदरे ने भी अपने विचार व्यक्त किए। अंत में मध्य क्षेत्र के उप निदेशक (कार्यान्वयन) श्री जी. आर. वधवा ने धन्यवाद ज्ञापन प्रस्तुत किया। उद्घाटन व पुरस्कार वितरण सत्र का संचालन भारतीय नौवहन निगम के उप प्रबंधक श्री राजीव शर्मा व केनरा बैंक की वरिष्ठ प्रबंधक सुश्री मंजु तिवारी ने किया।

सम्मेलन में वक्ताओं, अतिथियों तथा प्रतिनिधियों द्वारा राजभाषा हिन्दी के संबंध में निम्नलिखित सुझाव प्राप्त हुए :

1. नीतिगत सुझाव :

''क'' व ''ख'' क्षेत्र में कार्यरत हिंदी भाषियों के लिए हिंदी में कार्य अनिवार्य किया जाए। न समझने वालों को दिक्कत है न लिखने वालों को।

''क'' व ''ख'' क्षेत्र में स्थित प्राइवेट कंपनियों को ऐसे आदेश हों कि इन क्षेत्रों में स्थित सरकारी विभागों के साथ व्यवहार हिन्दी में करें।

धारा 3(3) के अंतर्गत जारी कागजात ''क'' व ''ख'' क्षेत्र में केवल हिंदी में जारी किये जा सकते हैं। यहाँ अंग्रेजी की अनुपस्थिति को अनदेखा किया जाना चाहिए।

सरकारी नौकरियों के विज्ञापन में लिखा जाए कि अंग्रेजी के साथ हिंदी ज्ञान भी आवश्यक है। टंककों/आशुलिपिकों के लिए भी हिंदी टंकण, हिंदी आशुलिपि की जानकारी मांगी जाए।

राजभाषा विभाग आदेश जारी करे कि कम्प्यूटर पर हिंदी में पत्र तैयार करने पर कर्मचारी उसी प्रकार मासिक भत्ते के पात्र होंगे जैसे अंग्रेजी टाइपिस्ट हिंदी पत्र तैयार करने पर पात्र होते हैं।

गोपनीय रिपोर्ट में स्वमूल्यांकन में हिंदी कार्य प्रतिशत का विवरण मांगा जाए तथा लक्ष्य प्राप्ति के न होने पर उसके कारण भी पूछे जाएं। पदोन्नति में भी राजभाषा में कार्य के अंक रखे जाएं।

राजभाषा नीति का निगमों आदि की निगमित नीति (कॉर्पोरेट पॉलिसी) में शामिल किया जाना चाहिए।

हिंदी अधिकारी या हिंदी विभाग को सीधे कार्यालय प्रधान के अंतर्गत रखा जाए।

फिलहाल प्राज्ञ की परीक्षा उत्तीर्ण करने पर राशि या एक वर्ष के लिए वेतन वृद्धि दी जाती है। जिसे प्राप्त करने के बाद हिंदी कार्य करने की कोई बाध्यता नहीं होती। भले ही वेतनवृद्धि नियमित हो लेकिन उन्हीं को दी जाए जो परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद यह घोषणा पत्र दे कि वे भविष्य में अपना सारा कार्य हिंदी में ही करेंगे। यदि ऐसा नहीं होता तो दी गई राशि वापस लेने का प्रावधान हो।

2. कार्यान्वयन संबंधी सुझाव

तिमाही रिपोर्ट में मूल पत्राचार की संख्या मांगी जाती है। किसी भी कार्यालय द्वारा मूल पत्राचार का अलग से विवरण नहीं रखा जाता अत: मूल पत्राचार की बजाए ''कुल पत्राचार'' के आंकड़े मांगे जाने चाहिए।

कार्यालयों द्वारा क्षेत्रीय भाषाओं में किए जा रहे पत्राचार के आंकड़ों का जिक्र नहीं होता। ऐसे पत्राचार को छोड़कर कुल पत्राचार में से ही हिन्दी पत्राचार का प्रतिशत मांगा जाना चाहिए।

यदि ''क'' क्षेत्र में स्थित मंत्रालयों आदि से पत्राचार लक्ष्यानुसार होने लगे तो पूरे देश में हिंदी के कार्य को बढ़ावा मिलेगा। अत: मंत्रालयों में हिंदी कार्य पर अधिक जोर दिया जाना चाहिए।

तिमाही रिपोर्ट में पत्राचार आदि की जानकारी प्रेषण रजिस्टर या ऐसे किसी सुनिश्चित आधार पर दिया जाना अनिवार्य किया जाए ताकि सही जानकारी मिले व उसी के अनुसार समीक्षा आदि हो सके।

बहुत से संस्थानों में हिंदी कार्य की बजाए हिंदी कार्यक्रमों पर सारी शक्ति व धन खर्च किया जा रहा है अत: ऐसे कार्यक्रम ही किए जाएं जिनका सीधा संबंध राजभाषा कार्यान्वयन से हो।

हिंदी अधिकारियों का काम अनुवाद आदि पूर्णत: विशिष्ट कार्य है अत: ऐसे आदेश दिए जाएं कि इन पदों पर राजभाषा विभाग द्वारा निर्धारित न्यूनतम योग्यताओं वाले अधिकारियों की पूर्णकालिक नियुक्ति हो।

3. हिंदी पदों संबंधी सुझाव

हिंदी पदों पर कार्यरत अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए समयोबद्ध पदोन्नति की व्यवस्था की जानी चाहिए।

सभी बैंकों में हिंदी पदों के सृजन व भरने की अलग-अलग पद्धतियां चल रही हैं। कहीं क्षेत्रों में भी पद है तो अंचलों में भी नहीं। इस संबंध

में राजभाषा विभाग द्वारा एक आदेश जारी किया जाना अपेक्षित है।

4. प्रशिक्षण व अनुवाद संबंधी सुझाव

1. त्रैमासिक अनुवाद प्रशिक्षण सत्र अन्य शहरों में भी आयोजित किए जाने चाहिएं। सभी को मुंबई भेजना संभव नहीं होता।

2. विधि संबंधी के दस्तावेजों के अनुवाद हेतु केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो व विधि विभाग (भगवान दास रोड, नई दिल्ली) से कोई सहायता प्राप्त नहीं होती। इस संबंध में कोई प्रत्युत्तर भी नहीं मिलता। राजभाषा विभाग इस संबंध में स्पष्ट निर्देश व जानकारी दे।

3. "क" व "ख" क्षेत्र में कार्यरत अधिकांश कर्मचारी व अधिकारी हिंदी प्रथम या द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी पढ़ते हैं। यहां प्राय: सभी को हिंदी का कार्यसाधक ज्ञान है। अत: इन्हें नियमित कार्यशाला प्रशिक्षण दिया जाना अपेक्षित है। "क" व "ख" क्षेत्रों में कार्यरत ऐसे लाखों कर्मचारियों को नियमित प्रशिक्षण देने का यह बहुत बड़ा काम हिंदी शिक्षण योजना द्वारा किया जाए। फिलहाल हिंदी अधिकारी अपना काम छोड़कर एक दूसरे के कार्यालय में मानदेय के आधार पर कार्यशालाओं में जाते हैं। इससे सरकारी धन की बचत होगी। तब हिंदी प्रशिक्षण के संसाधनों का समुचित और बड़ी संख्या में शेष कर्मचारियों को नियमित कार्यशाला प्रशिक्षण मिल सकेगा।

राज्यों आदि के जो संस्थान या प्राइवेट संस्थान जो अन्य भाषाओं की टाइपिंग/आशुलिपि सिखाते हैं ऐसे कुछ संस्थानों को हिंदी टाइपिंग/आशुलिपि या कम्प्यूटर प्रशिक्षण हेतु विनिर्दिष्ट किया जाए। परीक्षा भले ही राजभाषा विभाग ले। इससे दूर-दराज के क्षेत्रों में यह प्रशिक्षण पूरा किया जा सकेगा।

प्रोबेशन काल में ही हिंदी का कार्यसाधक ज्ञान व हिंदी टं./आशु. प्रशि. प्राप्त करना अनिवार्य होना चाहिए।

टंककों/आशुलिपिकों को परिवीक्षाकाल में ही हिंदी टंकण/आशुलिपि प्रशिक्षण प्राप्त करना अनिवार्य होना चाहिए।

कार्यसाधक ज्ञान की एक स्पष्ट और अंतिम परिभाषा निर्धारित की जाए ताकि प्रशिक्षण की प्रक्रिया आरंभ करते समय अंतिम मानदण्ड के रूप में आधार बनाया जा सके।

प्राध्यापकों व प्रशिक्षकों आदि को नियमित रूप से प्रशिक्षण की नई आवश्यकताओं के अनुसार प्रशिक्षित किया जाना चाहिए तथा प्रशिक्षण कक्ष शांत साफ सुथरे होने चाहिएं।

हिंदी टंकण/आशुलिपि परीक्षा में फेल हो जाने वाले कर्मचारी भी हिंदी टंकण/आशुलिपि कार्य करने में सक्षम हैं।

ऐसे प्रमाण पत्र यदि हिंदी शिक्षण योजना द्वारा दिये जाएं तो उनसे कार्यालय में काम लिया जा सकता है।

नाभिकीय ईंधन सम्मिश्र, हैदराबाद

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिंदी को बढ़ावा देने के प्रयोजन से इस वर्ष नाभिकीय ईंधन सम्मिश्र, हैदराबाद में 26-12-1997 को "गैर-परंपरागत ऊर्जा स्रोत" विषय पर हिंदी में वैज्ञानिक संगोष्ठी का आयोजन किया गया। सर्वप्रथम सहायक निदेशक (राजभाषा) गजानन पाण्डेय ने आमंत्रित वक्ताओं, उपस्थित जनों का स्वागत किया। राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष श्री यू.सी. गुप्ता ने अपने अध्यक्षीय भाषण में सम्मिश्र में पूर्व आयोजित वैज्ञानिक संगोष्ठियों के संबंध में विवरण दिया और बताया कि 1986 से प्रारम्भ इन संगोष्ठियों की यह विशेषता है कि इसमें अहिंदी भाषी वैज्ञानिक अपने शोधपत्र हिन्दी में प्रस्तुत करते हैं।

इस संगोष्ठी का उद्घाटन किया—दक्षिण मध्य रेलवे के महाप्रबंधक श्री निर्मल चन्द्र सिन्हा ने। आपने इस पर प्रसन्नता व्यक्त की कि सम्मिश्र में वैज्ञानिक संगोष्ठियां हिंदी में होती हैं। उन्होंने कहा कि आज हिंदी सरकारी आंकड़ों तक सिमट कर रह गई है। देश में हिंदी में काम हो सकता है और जब मौलिक रूप से हिन्दी में काम होने लगेगा तो हिंदी का तेजी से विकास होगा।

इस अवसर पर सम्मिश्र के मुख्य कार्यपालक श्री के.के. सिन्हा का 40 वर्षों की हिन्दी सेवाओं के लिये सम्मिश्र के पूर्व मुख्य कार्यपालक श्री बी.पी. पाण्डे ने शाल एवं पुष्पमाला द्वारा सार्वजनिक रूप से अभिनंदन किया। उनका जीवनवृत्त एवं उपलब्धियों का विवरण श्री यू.सी. गुप्ता ने पेश किया।

अपने संबोधन में श्री के.के. सिन्हा, मुख्य कार्यपालक जी ने कहा कि—हिंदी का काम राष्ट्र का काम है।.....उन्होंने आगे कहा कि हमें इस पर विचार करना होगा कि हम ऊर्जा की किस प्रकार बचत कर सकते हैं, साथ ही "ऊर्जा क्षमता" पर भी विचार होना चाहिए।

अंत में मुख्य प्रशासनिक अधिकारी श्री वी. आर. विजयन ने सभी के प्रति धन्यवाद ज्ञापित किया।

इस संगोष्ठी के तकनीकी सत्रों में—गैर परंपरागत ऊर्जा स्रोत विषय पर एन एफ सी के उप मुख्य कार्यपालक श्री यू.सी. गुप्ता ने प्रमुख वार्ता प्रस्तुत की। इसमें आपने इस बात पर जोर दिया कि—"प्राकृतिक संसाधनों के साथ देश में "गैर-परंपरागत ऊर्जा स्रोत" की भी कमी नहीं है आवश्यकता इनके भरपूर उपयोग करने की है। ताकि यह ऊर्जा का एक विकल्प बन सके।" इनके अलावा बीएचईएल, हैदराबाद में गैर-परंपरागत ऊर्जा विभाग के प्रबंधक श्री रमेश पवार ने "सौर-फोटोवोल्टाईक पंप" विषय पर, परमाणु खनिज प्रभाग, हैदराबाद के वैज्ञानिक अधिकारी श्री यू.के पाण्डे व आचार्युलु ने "भूतापीय ऊर्जा एक उपयोगी अपारंपरिक ऊर्जा स्रोत" पर, एन.जी.आर.आई, हैदराबाद के वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. मधुसूदन जोशी ने—"ऊर्जा के विकल्प और प्रयत्न" शीर्षक पर, एनएफसी के उपप्रबंधक श्री आर.एस.झा, तारापुर परमाणु बिजलीघर, ठाणे के वैज्ञानिक अधिकारी श्री प्र.भ. खरात, भारी पानी संयत्र कोटा के श्री के. रामप्रसाद, वैज्ञानिक अधिकारी ने भी उपर्युक्त विषय पर आलेख प्रस्तुत किये। "सूर्य देवता" शीर्षक पर श्री रमेश चन्द्र शुक्ल, ने कविता प्रस्तुत की।

इस अवसर पर विभिन्न हिंदी प्रतियोगिताओं के विजेताओं को वीडियोकॉन नर्मदा इलेक्ट्रॉनिक लि. के सेवानिवृत्त मुख्य कार्यपालक एवं एनएफसी बोर्ड के सदस्य श्री वी.वी. रत्नम ने पुरस्कार प्रदान किये।

वरिष्ठ कार्यपालक राजभाषा सेमिनार

चण्डीगढ़ बैंक नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की पिछली बैठक में लिये गये निर्णय के अनुसरण में नगर में स्थित विभिन्न बैंकों, वित्तीय संस्थाओं के वरिष्ठ कार्यपालकों के लिये महाप्रबंधक श्री आर. पी. गुप्ता

की अध्यक्षता में दिनांक 16-5-98 को होटल सनबीम में एक दिवसीय राजभाषा सेमिनार आयोजित किया गया। सेमिनार का संचालन श्री ए. पी. शर्मा, मुख्य प्रबंधक, पंजाब नेशनल बैंक ने किया। इस अवसर पर अपने उद्घाटन सम्बोधन में श्री आर. पी. गुप्ता ने किसी भी देश के लिये उसकी भाषा के महत्व को रेखांकित करते हुए कहा कि राजभाषा का प्रयोग शासन, विधान, न्यायपालिका और कार्यपालिका इन सभी क्षेत्रों में अभिप्रेत है। उन्होंने स्मरण करवाया कि राजभाषा नियम 1976 के नियम 12 के अनुसार राजभाषा नीति का कार्यान्वयन अपने अधिकार क्षेत्र में करवाना सम्बन्धित प्रशासनिक प्रधान की जिम्मेवारी है। इस परिप्रेक्ष्य में कार्यपालकों की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाती है। चूंकि राष्ट्रीयकरण से पूर्व भारत में "क्लास बैंकिंग" थी इसलिए उस समय बैंकों की भाषा विशिष्ट लोगों की भाषा के अनुरूप अंग्रेजी थी। राष्ट्रीयकरण के ऐतिहासिक निर्णय के फलस्वरूप बैंकिंग का स्वरूप अधिक जनोन्मुख हुआ और तदनुरूप सामान्य जन की भाषा हिंदी के क्रमिक प्रयोग का मार्ग प्रशस्त हुआ। 1990-91 में शुरू किए गए आर्थिक सुधारों के फलस्वरूप बैंकिंग क्षेत्र में बढ़ते मशीनीकरण के कारण महानगरीय शाखाओं में हिन्दी के प्रयोग पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता नजर आ रहा है जोकि अत्याधिक चिन्ताजनक है। श्री गुप्ता ने उम्मीद जाहिर की कि वर्तमान सेमिनार ऐसे ही जटिल सरोकारों के समाधान ढूंढने में सफल होगा।

राजभाषा नीति की पृष्ठभूमि की चर्चा करते हुए राजभाषा विभाग, क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय (उत्तर) के उपनिदेशक श्री वी.पी. गौड़ ने स्वदेशी भाषा में अभिव्यक्ति की पूर्ण सक्षमता को वास्तविक स्वतन्त्रता की अनिवार्य शर्त बताया। उन्होंने कहा कि जनमानस लार्ड क्लाइव की दासता से 50 वर्ष पूर्व मुक्त होने के बावजूद अभी भी लार्ड मेकाले की दासता से जूझ रहा है। राजभाषा संबंधी विभिन्न संवैधानिक उपबन्धों के अन्तर्गत अपेक्षित कार्रवाई की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि किसी भी कार्यालय में हिन्दी के प्रयोग की स्थिति प्राय: संबंधित कार्यपालक द्वारा राजभाषा कार्यान्वयन के प्रति दर्शाई जा रही प्रतिबद्धता की ही परिचायक होती है।

राजभाषा कार्यान्वयन में वरिष्ठ कार्यपालकों की भूमिका स्पष्ट करते हुए पंजाब नेशनल बैंक के मुख्य श्री एस. सी. तिवारी ने मत प्रकट किया कि किसी भी कार्यालय में राजभाषा कार्यान्वयन में बेहतर तभी मिल सकते हैं जब सम्बन्धित कार्यपालक का प्रचुर प्रोत्साहन और यथोचित मार्गदर्शन कार्यालय में कार्यरत राजभाषा अधिकारी को मिलता रहे। राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों में कार्यसूची की मदवार गम्भीर समीक्षा करके, फाइलों पर हिंदी में आदेश पारित करके और निरीक्षण के दौरान राजभाषा कार्यान्वयन पर उपर्युक्त टिप्पणी करके वरिष्ठ कार्यपालक अपने समस्त सहकर्मियों को इस संबंध में अपेक्षित गम्भीरता दर्शाने का प्रभावी संकेत दे सकते हैं। संस्था की गृह पत्रिकाओं के हिंदी खण्डों पर वरिष्ठ कार्यपालकों की सारगर्भित समालोचना इन पत्रिकाओं की गुणवत्ता सुधारने में उल्लेखनीय भूमिका निभा सकती है। वरिष्ठ कार्यपालक के दिशानिर्देशन में राजभाषा अधिकारी का कार्यालय के समस्त अनुभागों के साथ तालमेल और अनुभाग के प्रभारियों का राजभाषा कक्ष को सहयोग राजभाषा कार्यान्वयन में अत्यन्त उत्साहबर्द्धक परिणाम दर्शा सकते हैं।

"बदलते बैंकिंग परिदृश्य में राजभाषा कार्यान्वयन की व्यवहारिकता" पर परिचर्चा के दौरान यह आम राय व्यक्त की गई कि तीव्र प्रतिस्पर्द्धा के इस युग में अपनी सेवाओं का विस्तृत और प्रभावी विपणन करने के लिए प्रचार हेतु राजभाषा हिंदी की भूमिका सदैव महत्वपूर्ण रहेगी। सम्प्रेषण केवल दिमाग को ही नहीं छूता बल्कि उससे कहीं अधिक इसे दिल को छूना चाहिए। ऐसा आर्कषक सम्प्रेषण केवल मातृभाषा/राजभाषा के प्रयोग से ही सम्भव हो सकता है। अधिकांश सहभागी कार्यपालकों का मत था कि जनाकांक्षाओं के दबाव में हिंदी का दायरा बढ़ेगा तथा भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया के कारण भारतीय भाषाओं में अनेक विदेशी शब्दों का प्रचलन होगा। आने वाले दिनों में ज्ञान विज्ञान के सम्भावित विस्फोट के कारण अनुवाद की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाएगी और मशीनी अनुवाद का प्रयोग बढ़ेगा। हिंदी में कितना मशीनी अनुवाद सम्भव हो पाएगा—यह सरकार के सम्बन्धित विभागों के अनुसंधान के स्तर, गुणवत्ता और प्रशिक्षण आदि को दिये जाने वाले महत्व पर निर्भर करेगा। सेमिनार में इस बात का मतेक्य था कि बैंकिंग में बढ़ते मशीनीकरण के कारण भारत सरकार के राजभाषा विभाग के तकनीकी कक्ष को नित नई कसौटी पर खरा उतरने के लिए सदैव सजग रहना होगा।

परिचर्चा के दौरान यह तथ्य भी उभर कर सामने आया कि कुछेक बैंकों/वित्तीय संस्थाओं ने अपने समस्त स्टाफ को हिंदी में कम्प्यूटर का प्रशिक्षण दिलवाने की समयबद्ध कार्य-योजना पहले ही तैयार कर ली है तथा उसका कार्यान्वयन शुरू किया जा चुका है।

राजभाषा विषयक चर्चा के दौरान कुछेक वरिष्ठ कार्यपालकों की प्रतिक्रियाएं निम्नानुसार रहीं :

— भारतीय स्टेट बैंक के महाप्रबंधक श्री वी. के. महाजन का मत था कि विदेशी टी वी चैनलों द्वारा हिंदी कार्यक्रमों का प्रसारण इस भाषा की अन्तर्निहित शक्ति का परिचायक है।

— नाबार्ड के उपमहाप्रबंधक श्री एच. के. तलरेजा का कहना था कि "जहां चाह वहां राह" की उक्ति राजभाषा कार्यान्वयन की स्थिति पर स्टीक बैठती है। उनका मानना था कि वरिष्ठ कार्यपालक की "इसे हिन्दी में जारी करें" या "क्या इसका उत्तर हिन्दी में नहीं दिया जा सकता था?"—जैसी टिप्पणियां किसी भी संस्था में राजभाषा कार्यान्वयन के कार्यक्रम को गति प्रदान कर सकती हैं। अधिकारियों की कार्य निष्पादन रिपोर्टों (पी. ए. एफ.) में हिन्दी कार्य के संबंध में उल्लेख उन्हें इस संबंध में गंभीरता दर्शाने को प्रेरित कर सकता है।

— पंजाब नेशनल बैंक के चण्डीगढ़ क्षेत्र के वरिष्ठ क्षेत्रीय प्रबंधक श्री बी. पी. चोपड़ा का मत था कि बैंकिंग की मुख्य धारा से राजभाषा अधिकारी के सघन संबंध से राजभाषा कार्यान्वयन में अपेक्षाकृत अधिक सफलता मिल सकती है।

अन्त में पंजाब नेशनल बैंक के उपमहाप्रबंधक श्री आर. के. रेहानी ने समस्त वरिष्ठ कार्यपालकों तथा राजभाषा अनुभाग के सभी कर्मियों के प्रति आभार प्रकट किया।

विविधा

"हम भारतीय"

प्रत्येक राष्ट्र के जीवन में आत्म विश्लेषण के क्षण आते हैं। इन क्षणों को सावधानी और सर्तकता से समझ लेने के बाद यदि मंथन की प्रक्रिया शुरू होती है तो एक नया निखार आता है। पता चलता है कि राष्ट्र में जीवनी शक्ति कितनी है। जो राष्ट्र या समाज मंथन की ऊहापोह से बचने की कोशिश करता है उसके विकास पर ही ग्रहण नहीं लगता, उसका अस्तित्व भी संदिग्ध हो जाता है।

भारत की स्वतंत्रता की स्वर्ण जयंति ऐसी ही चुनौती प्रस्तुत कर रही है। देश में विचारकों का एक वर्ग मौजूदा स्थिति में चिंतित है। आजादी के बाद हम जिस मोड़ पर आकर खड़े हो गए हैं, उससे हमारा भविष्य बहुत उजला तो नहीं दिखाई देता। चिन्ता का विषय यह नहीं है कि हम पचास सालों में अपने देश की चालीस प्रतिशत आबादी को गरीबी की रेखा से ऊपर नहीं उठा सके, इस बात के लिए भी दुख करना बेमानी है कि हम हजारों गाँवों में पीने का पानी मुहैया नहीं कर सके। इसी तरह स्वास्थ्य, शिक्षा, बेरोजगारी और आवास की समस्याओं को लेकर आजादी की स्वर्ण जयंती पर प्रलाप करना अर्थहीन है। चिन्ता इस बात की होनी चाहिए कि समस्याओं से टकराने का राष्ट्रीय संकल्प क्यों बिखर गया? एक राष्ट्र के रूप में खड़े रहने की दृढ़ता में दरारें क्यों दिखाई देने लगीं। अपने स्व तथा अपने स्वाभिमान के प्रति उदासीनता क्यो छा गई और अंततः हमारी अस्मिता पर संकट कैसे गहरा गया?

जो परिस्थितियाँ और जो चुनौतियाँ हमारे समक्ष उपस्थित हैं उनके लिए दोषारोपण का सिलसिला इतना लम्बा रहा कि आजादी मिले कब पचास वर्ष बीत गए इसका पता भी नहीं चला। कुछ लोग हैं जो इस अंतहीन सिलसिले को जारी रखना चाहते हैं। कुछ लोग ऐसे भी हैं जो परिस्थितियों से चुपचाप समझौता कर लेना पसन्द करते हैं। कुछ इस मौके का फायदा उठाकर समस्याओं के समाधान का नीम-हकीमी नुस्खा बता रहे हैं। कुछ हैं जो भारत के उस चरित्र को ही बदल देना चाहते हैं जिसके कारण शताब्दियों से हमारा देश जाना जाता है। विचार और व्यवहार के इस संक्रमणकाल में कुछ लोग परिस्थितियों को बदलने और चुनौतियों को स्वीकार करने के पक्षधर हैं। वे इस सन्नाटे को तोड़कर स्वतंत्रता, स्वदेशी और स्वाभिमान को जागृत करने का इरादा रखते हैं। देश के विभिन्न भागों में, विभिन्न व्यक्तियों और समूहों द्वारा राष्ट्रीय अस्मिता का संघर्ष लड़ा जा रहा है। इन तमाम राष्ट्र प्रेमियों को एक खुला और व्यापक मंच देने की कोशिश के तहत यह नया अभियान प्रारंभ किया जा रहा है जिसे "हम भारतीय" नाम दिया गया है।

इस अभियान की बुनियाद सात वर्ष पूर्व सन् 1990 में वर्धा में रखी गई थी। उस समय देश भर के चालीस कार्यकर्ताओं ने एकत्र होकर भारत को अंग्रेजी मानसिकता की गुलामी से मुक्त कराने का संकल्प लिया था। तब अभियान का नामकरण "हम चालीस" किया गया था। विगत सात वर्षों में हजारों लोगों ने हिंदी में हस्ताक्षर करने का संकल्प लिया, नामपट्ट हिन्दी में लगाये, पत्र व्यवहार हिन्दी में प्रारंभ किया। हिंदी के पक्ष में देशभर में वातावरण तैयार हुआ। मातृभाषाओं के प्रति चेतना जागृत की गई। 1 और 2 मार्च, 1997 को कलकत्ता में सैंकड़ों कार्यकर्ताओं की उपस्थिति में विचार किया गया कि मानसिक गुलामी के खिलाफ संघर्ष में राष्ट्रभाषा एक शक्तिशाली औजार है, लेकिन राष्ट्रभाषा का विकास भारतीय भाषाओं के बीच सद्भाव से ही संभव है ओर मानसिकता में परिवर्तन के लिए अभियान का दायरा व्यापक किया जाना जरूरी है। स्वतंत्रता की समझ के साथ ही स्वदेशी का दर्शन राष्ट्रीय चेतना को उद्वेलित करेगा और तब राष्ट्र प्रस्तुत समस्याओं के समाधान के लिए अपनी राष्ट्रीय सामर्थ्य और संकल्प को पुनर्जीवित करेगा। इस विचार के आधार पर "हम चालीस" अभियान को "हम भारतीय" अभियान में परिवर्तित करने का निर्णय लिया गया। "हम भारतीय" अभियान की मूल चिंता देश की स्वतंत्रता और स्वाभिमान है। हम देश की मौजूदा स्थिति के लिए किसी पर दोषारोपण करने के विरुद्ध हैं। हमें स्वयं अपने आचरण का विश्लेषण करना चाहिये। देश के निमित हम अपने दायित्वों को ठीक प्रकार से निभाते चलें, तो हम विकास के जनपथ की सही बुनियाद रख सकेंगे। राज्य पर निर्भरता समाज की कर्तव्य शक्ति को पंगु बनाती है। इससे मुक्त होना जरूरी है। राज्य के साथ ही विदेशों पर निर्भरता ज्यादा खतरनाक होती है। हम विदेशी तकनीक अवश्य स्वीकारें, लेकिन विदेशी शर्तों व बंधनों से देश को मुक्त तभी रख सकते हैं जब प्रखर राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत विशाल जनशक्ति किसी भी कष्ट को हंसते हुए सहने को तत्पर रहे। "हम भारतीय" अभियान भारत के नागरिकों को यह गौरवपूर्ण अनुभूति कराना चाहता है कि महात्मा गाँधी, नेताजी सुभाष, भगतसिंह और चन्द्रशेखर आजाद जैसे हजारों शहीदों के बलिदानों से प्राप्त भारत की स्वतंत्रता को निरापद रखने के पवित्र दायित्व को धार्मिक निष्ठा से पूरा करना है। जो जहाँ है उसका हर कार्य देश-हित को आगे बढ़ाने वाला हो। इस तरह राष्ट्रीय स्वाभिमान को जागृत कर, राष्ट्रभाषा और मातृभाषा के प्रति गौरव की अनुभूति करते हुए, आजादी की स्वर्ण जयंती पर गुलाम मानसिकता से मुक्ति का संकल्प ही "हम भारतीय" अभियान है।

—प्रस्तुतिः कैलाशचन्द्र पंत
मध्य प्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

केंद्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिक संस्थान, कोचिन

केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिकी संस्थान में भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति का स्वर्ण जयन्ती समारोह 14 अगस्त, 1997 को बहुत ही हर्ष उल्लास के साथ आरंभ हुआ। इसी अवसर पर संस्थान में 'भारतीयम्' हिंदी प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता का आयोजन 14 अगस्त, 1997 को किया गया।

इस प्रतियोगिता में भाग लिये लेने वाली संस्थान की आठ डिवीजन को भारत की नदियां गंगा, यमुना, कृष्णा, कावेरी, गोदावरी, नर्मदा, ब्रह्मपुत्रा और पेरियार का नाम दिया गया।

प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता के लिए संस्थान के प्रत्येक डिवीजन से तीन कर्मचारियों ने एक दल के रूप में भाग लिया। इसका संचालन कोचिन विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, हिंदी विभाग के आचार्य अरविन्दाक्षन और डॉ. शान्ती नायर, प्राध्यापक मार अत्तेष्यस कालेज ने किया। हिंदी में प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता में पुरस्कार प्राप्त करने वाले तीन दल इस प्रकार हैं :—

प्रथम—कावेरी (विस्तार, सूचना व सांख्यिकी)

द्वितीय—गंगा (मात्स्यकी प्रौद्योगिकी)

तृतीय—गोदावरी (जैव रसायन एवं पोषण)

राजभाषा अनुभाग की ओर से रंगोली प्रतियोगिता का आयोजन स्वतंत्रता दिवस 15वीं अगस्त, 1997 को किया गया। इस में भी कुल आठ डिवीजन थे, इस का विषय "भारतीय स्वतंत्रता" था। इस में प्रत्येक डिवीजन से एक एक 'रंगोली' चतुर्मुख आकार में बनाया गया। इस में तीन डिवीजनों को पुरस्कार दिया गया।

भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति की स्वर्ण जयन्ती के उपलक्ष में स्वतंत्रता दिवस 15 अगस्त, 1997 को संस्थान के निदेशक डॉ. के. गोपकुमार द्वारा ध्वजारोहण के बाद विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। संस्थान के सभी कर्मचारी सदस्यों ने बहुत ही संतोषपूर्वक इस में भाग लिया।

इस कार्यक्रम के अंतर्गत देश भक्ति का आलापन भी किया गया। इसके बाद 14 अगस्त, 1997 को आयोजित हिंदी में प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता विजयी डिवीजनों एवं स्वतंत्रता दिवस सांस्कृतिक कार्यक्रम विजेताओं को निदेशक द्वारा पुरस्कार प्रदान किए गए।

पुलिस वायरलेस

समन्वय निदेशालय पुलिस बेतार के मुख्यालय एवं अधीनस्थ कार्यालयों के अधिकारियों और कर्मचारियों को हिंदी में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से हिंदी की अनेक प्रतियोगिताएं आयोजित की गई थी।

प्रतियोगिताओं में विजेता श्री ओ. एस. अरोड़ा, लेखा अधिकारी, श्री श्रीकृष्ण, सहायक निदेशक, श्री एस. पी. सिंह, तकनीकी सहायक, श्री एस. के. शर्मा, वरिष्ठ तकनीकी सहायक, श्री के. सी. शर्मा, सहायक निदेशक और श्री सतपाल टाइपिस्ट को सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार से सम्मानित किया। यहां यह भी उललेखनीय है कि श्री सतपाल ने हिंदी शिक्षण योजना के तहत आयोजित हिंदी टाइपिंग परीक्षा में 99% अंक प्राप्त करके प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया था। श्री चंचल सिंह, उप-निदेशक श्री के. के. शर्मा, उप-निदेशक एवं श्री एस. सी. शर्मा, सहायक निदेशक को उत्कृष्ट पुरस्कार प्रदान किए गए।

पूरे वर्ष हिंदी में कार्य करने के लिए जम्मू एवं कश्मीर, चंडीगढ़, भोपाल एवं भुवनेश्वर स्थित अधीनस्थ कार्यालयों में तैनात क्रमश: वरिष्ठ तकनीकी सहायक श्री एम. एम. शर्मा, बलदेव सिंह बाजवा, एस. के. शर्मा ओर रेडियो तकनीशियन शेष नारायण एवं एस. के. शुक्ला को सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

इस वर्ष हिंदी प्रतियोगिताओं का उल्लेखनीय पहलू यह था कि समन्वय निदेशालय पुलिस बेतार के विभागाध्यक्ष श्री कमलेश डेका, निदेशक ने भी वाद-विवाद प्रतियोगिता में भाग लेकर द्वितीय स्थान प्राप्त किया। निदेशक श्री कमलेश डेका के प्रतियोगिता में भाग लेने की घोषणा से सभी अधिकारियों और कर्मचारियों में उत्साह की एक उमंग पैदा हो गई। परिणामस्वरूप अनेक व्यक्तियों ने हिंदी प्रतियोगिताओं में भाग लिया।

अधिकारियों एवं कर्मचारियों की हिंदी में कार्य करने की चेतना एवं रूचि जागृत करने के लिए कार्यालय में हिंदी का वातावरण बनाना नितांत आवश्यक है। अत: समय-समय पर हिंदी में अनेक कार्यक्रम एवं समारोहों का आयोजन किया गया। इसी श्रृंखला में 19-05-98 को राजभाषा विभाग के तकनीकी विंग द्वारा निर्मित "नई मंजिल की नई राह" नामक फिल्म का प्रदर्शन किया गया था। यह फिल्म कंप्यूटर पर हिंदी में कार्य करने से संबंधित होने के कारण बहुत ज्ञानप्रद है तथा मनोरंजक भी है। इसका फिल्मांकन उच्चकोटि का है। फिल्म को सभी व्यक्तियों द्वारा सराहा गया है।

श्री वी. के. गोयल निदेशक (तक.) ने सैकड़ों अधिकारियों और कर्मचारियों को संबोधित करते हुए कहा कि राजभाषा विभाग के तकनीकी विंग द्वारा कंप्यूटर पर हिंदी में कार्य करने के संबंध में अनेक अनुसंधान कार्य किए जा रहे हैं ताकि कंप्यूटर पर हिंदी में कार्य करने में किसी तकनीकी कठिनाई का सामना न करना पड़े। उन्होंने कहा कि भारत सरकार के सभी मंत्रालयों/ विभागों और उपक्रमों तथा बैंकों आदि के अधिकारियों और कर्मचारियों को हिंदी में कंप्यूटर पर प्रशिक्षण देने के लिए सघन प्रयास किए गए हैं तथा गत वर्ष में एन. आई. ई. सी., ई. आर. डी. सी. आई. एवं सी. एम. सी. आदि देश के विभिन्न स्थानों पर स्थित प्रशिक्षण संस्थानों में प्रशिक्षण दिलाने की व्यवस्था की गई है। वर्ष 1998 का प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार है और भारत सरकार के सभी कार्यालयों, उपक्रमों और बैंकों को अपने कर्मचारियों को कंप्यूटर पर हिंदी में प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए समुचित मात्रा में व्यक्ति नामित करने हेतु अनुरोध किया गया है।

अंत में श्री बी. के. गोयल, निदेशक (तक.) राजभाषा विभाग ने कहा कि हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने के उद्देश्य से और कर्मचारियों को हिन्दी के प्रति जागरूक करने के लिए विभिन्न विषयों पर कैसिट तैयार किए गए हैं। ऐसे सभी कैसिट मामूली कीमत पर राजभाषा विभाग से प्राप्त

किए जा सकते हैं। उन्होंने आगे कहा कि कंप्यूटर पर हिन्दी में कार्य करना बहुत सरल है। केवल मानसिकता में परिवर्तन लाने की आवश्यकता है।

समन्वय निदेशालय पुलिस बेतार के निदेशक श्री कमलेश डेका ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि हमारे संविधान में हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। देश की समृद्धि के लिए हिंदी को अपनाना हमारा पुनीत कर्तव्य है। राष्ट्रभाषा के प्रयोग से ही देश गौरवान्वित होता है।

श्री डेका ने आगे कहा कि अभी तक पुलिस बेतार प्रणाली में केवल अंग्रेजी का ही प्रयोग हो रहा है। किन्तु अब हमारा विभाग हिंदी में बेतार संदेशों के प्रसारण के लिए प्रयासरत है। आशा है कि शीघ्र ही दूरसंचार प्रणाली में हिंदी का प्रयोग प्रारंभ हो जाएगा जो दूरसंचार के क्षेत्र में एक बहुत बड़ी उपलब्धि होगी।

अंत में श्री डेका ने विशेष रूप से अधिकारियों से कहा कि वे सरकारी कार्य में हिंदी का प्रयोग सुनिश्चित करें। सरकार की नीति के कार्यान्वयन का उत्तरदायित्व सर्वप्रथम अधिकारियों पर होता है। इस दिशा में अधिकारियों के अग्रसर होने पर स्टाफ का रुझान स्वत: हिंदी के प्रयोग के लिए बढ़ेगा। अत: यह हम सबका पुनीत कर्तव्य है कि हम सरकार की राजभाषा नीति का अनुपालन सुनिश्चित करें तथा हिंदी को राजभाषा के रूप में अपनाएं।

नौवहन महानिदेशालय, मुंबई

वर्ष 1993-94 के दौरान संघ की राजभाषा नीति के बेहतर अनुपालन और सरकारी कामकाज में हिंदी के प्रगामी प्रयोग के लिए जल भूतल परिवहन मंत्रालय ने नौवहन महानिदेशालय को राजभाषा शील्ड प्रदान की।

नौवहन महानिदेशक एवं पदेन अपर सचिव, भारत सरकार के मुख्यालय से बाहर होने के कारण उनकी ओर से, भारत सरकार के नाटिकल सलाहकार, कैप्टन एस. एस. नाफडे ने दिनांक 17-4-98 को 11.00 बजे सभाकक्ष में जल भूतल परिवहन मंत्रालय के प्रतिनिधि से यह शील्ड प्राप्त की।

महासर्वेक्षक कार्यालय, भारतीय सर्वेक्षण विभाग, देहरादून

महासर्वेक्षक कार्यालय, भारतीय सर्वेक्षण विभाग, देहरादून में सितम्बर माह 1997 में आयोजित हिंदी विषयक विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कृत करने के लिए 12 दिसम्बर, 1997 को पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया। समारोह की अध्यक्षता भारत के महासर्वेक्षक लेफ्टिनेंट जनरल ए. के. अहूजा ने की।

कार्यक्रम आयोजन समिति के अध्यक्ष श्री सुरेन्द्र मोहन पाल, उपनिदेशक (सिले. ग्रेड) ने समारोह में उपस्थित अधिकारियों एवं कर्मचारियों का स्वागत करते हुए कहा कि सरकारी कामकाज में राजभाषा हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग करने के उद्देश्य से दिनांक 9 सितम्बर, 97 से 11 सितम्बर, 97 तक हिंदी निबंध, हिंदी सामान्य ज्ञान, हिन्दी टाइपिंग, हिंदी सुलेख आदि प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया, जिनमें अधिकांश कर्मचारियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया तथा 15 सितम्बर, 97 से 30 सितम्बर, 97 तक हिंदी पखवाड़ा मनाया गया। पुरस्कार वितरण समारोह के अवसर पर काव्यपाठ का भी आयोजन किया गया। श्री ए. के. अत्रि, सहायक द्वारा प्रस्तुत कविता को श्रोताओं ने खूब सराहा।

इसके बाद महासर्वेक्षक कार्यालय के सहायक निदेशक (रा. भा.) ने वर्ष 1996-97 की हिंदी के प्रयोग संबंधी प्रगति रिपोर्ट प्रस्तुत की। उन्होंने बताया कि महासर्वेक्षक कार्यालय अधिसूचित कार्यालय है तथा इसके आठ अनुभागों को राजभाषा नियम, 1976 के नियम 8(4) के अंतर्गत हिंदी में काम करने के लिए विशेष निर्देश दिए गए हैं। उन्होंने कहा कि अपेक्षित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि उन समस्त कमियों की ओर ध्यान दिया जाए जिनके कारण अभी तक सरकारी कामकाज में राजभाषा हिंदी का उतना प्रयोग नहीं हो सका है जितना किया जाना चाहिए था। इसके लिए हर स्तर पर प्रयास किए जाने की आवश्यकता है।

समारोह में हिंदी विषयक विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं, हिंदी में सर्वोत्तम कार्य करने वाले अनुभागों तथा कंप्यूटर पर हिंदी में कार्य करने वाले कर्मचारियों को पुरस्कृत किया गया। इस अवसर पर वर्ष 1997 में हिंदी कार्यशाला में भाग लेने वाले अधिकारियों/कर्मचारियों को भी प्रोत्साहन स्वरूप हिंदी में उपलब्ध संदर्भ साहित्य का वितरण किया गया। कार्यालय के विनियम अनुभाग एवं बजट अनुभाग को वर्ष 1996-97 में हिंदी में सर्वोत्तम कार्य निष्पादन के लिए संयुक्त रूप से शील्ड प्रदान की गई।

भारत के महासर्वेक्षक ने कहा कि हमारे देश में भिन्न-भिन्न भाषाएं बोली जाती हैं। यहां अलग-अलग धर्म, जाति और रीतिरिवाज हैं। इस विविधता में एकता लाने और देश को सम्पर्क सूत्र में जोड़ने के लिए हमारे देश के संविधान में हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया गया है तथा इसके प्रचार-प्रसार का दायित्व हम सब पर है। उन्होंने कहा कि हमारा कार्यालय हिंदी भाषी क्षेत्र में है और विभाग का मुख्यालय भी है। अत: हमारी जिम्मेदारी राजभाषा हिन्दी के प्रति और भी अधिक है। कार्यालय में, हिंदी के प्रयोग की स्थिति पर संतोष व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा कि यह कार्यालय विभाग के विभिन्न सर्किल/निदेशालयों के साथ-साथ नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, देहरादून के लगभग 90 सदस्य कार्यालयों में भी राजभाषा संबंधी सरकारी नीति के अनुपालन में आवश्यक समन्वय स्थापित करता है। उन्होंने विभिन्न प्रतियोगिताओं में पुरस्कार प्राप्त करने वाले प्रतियोगियों को बधाई देते हुए कहा कि जिन्हें इस वर्ष कोई पुरस्कार नहीं मिल पाया है, वे और मेहनत करके अगले वर्ष पुरस्कार प्राप्त करने का प्रयास करेंगे।

समाचार

उपक्रम भारती का लोकार्पण

दिनांक 3-4-98 को गुजरात रिफाइनरी के नर्मदा अतिथि गृह के सभाकक्ष में नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उपक्रम) वडोदरा की हिंदी पत्रिका उपक्रम भारती के प्रवेशांक का लोकार्पण समारोह आयोजित किया गया। लोकार्पण गुजरात रिफाइनरी के कार्यकारी निदेशक श्री पी. एस. राव के कर कमलों से हुआ। इस अवसर पर उदगार व्यक्त करते हुए श्री राव ने कहा कि ऐसी पत्रिकाओं की महत्ता आज के मीडिया के युग में ज्यादा है क्योंकि लिखा हुआ शब्द प्रभावी तथा अमिट होता है। इन पत्रिकाओं के माध्यम से जहां एक ओर एक दूसरे संस्थानों की राजभाषिक गतिविधियों की जानकारी का आदान-प्रदान होता है वहीं अंतर्निहित प्रतिभाओं को भी प्रकाश में आने का एक उचित मंच मिलता है, गुजरात रिफाइनरी की ओर से इस पत्रिका के प्रकाशन में जो भी सहायता अपेक्षित होगी दी जाएगी। इस अवसर पर उपस्थित उपक्रमों के हिंदी अधिकारियों ने सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव पारित किया कि उपक्रमों की समस्याओं पर चर्चा करने के लिए इंडियन ऑयल कॉ. लि. के मार्गदर्शन में नराकास(उ) की ओर अक्तूबर-नवंबर 98 में वडोदरा में पश्चिम क्षेत्र के राजभाषा अधिकारियों का एक सम्मेलन आयोजित किया जाएगा। बड़े-बड़े संस्थान इंडियन ऑयल, आई. पी. सी. एल., ओ. एन. जी. सी., गेल इंश्योरेंस कंपनियाँ। इस दिशा में पहल करें, गुजरात रिफाइनरी की ओर से अपेक्षित हर संभव सहायता दी जाएगी।

इस अवसर पर सर्जना के नए अंक का भी लोकार्पण श्री पी. एस. राव द्वारा किया गया। समारोह में गुजरात रिफाइनरी के महा प्रबंधक श्री आर. शाह, उप महा प्रबंधक (मा सं) श्री अ कु रौनियार, उप-महा प्रबंधक (तक.) श्री बी. एन. बंकापुर के साथ-साथ उपक्रम तथा दोनों समितियों के राजभाषा अधिकारी उपस्थित थे। कार्यक्रम का संचालन समिति के सदस्य सचिव डॉ. माणिक मृगेश ने किया।

बैंक ऑफ बड़ौदा, मुम्बई

भारतीय रिजर्व बैंक की राजभाषा शील्ड योजना के अन्तर्गत वर्ष 1995-96 के लिए बैंक ऑफ बड़ौदा को "ख" क्षेत्र में प्रथम तथा "क" एवं "ग" क्षेत्र में तृतीय पुरस्कार प्राप्त हुए।

बैंक के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री के. कन्नन ने 7 अक्तूबर, 97 को भारतीय रिजर्व बैंक, मुम्बई के सभागार में आयोजित एक विशेष समारोह में यह पुरस्कार रिजर्व बैंक के गवर्नर डॉ. सी. रंगराजन से प्राप्त किये।

उल्लेखनीय है कि राष्ट्रीयकृत बैंकों एवं वित्तीय संस्थाओं में हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देने तथा इनमें स्वस्थ प्रतियोगिता की भावना उत्पन्न करने की दृष्टि से भारतीय रिजर्व बैंक की ओर से अखिल भारतीय स्तर पर प्रति वर्ष यह प्रतियोगिता आयोजित की जाती है।

इस प्रतियोगिता में प्रत्येक भाषिक क्षेत्र जैसे क्षेत्र "क" (हिंदी भाषी राज्य), क्षेत्र "ख" (गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब तथा चंडीगढ़) और क्षेत्र "ग" (गैर-हिंदी भाषी राज्य) में हिंदी प्रयोग में हुए समग्र कार्यनिष्पादन को ध्यान में रखा जाता है। इसका मूल्यांकन एक उच्चस्तरीय समिति द्वारा किया जाता है, जिसमें भारत सरकार, गृह मंत्रालय, वित्त मंत्रालय तथा भारतीय रिजर्व बैंक के प्रतिनिधि होते हैं।

हिन्दुस्तान प्रिफैब लिमिटेड

राजभाषा के कीर्तिमान

कम्पनी में राजभाषा हिंदी के प्रयोग को बढ़ाने के लिए सकारात्मक प्रयास किए गए हैं। राजभाषा अधिनियम, 1963 (यथा संशोधित, 1967) की धारा 3(3) एवं राजभाषा नियम, 1976 के अनुपालन के संबंध में यहां की विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक में बार-बार ध्यान दिलाया जाता है और उसकी अनुवर्ती रिपोर्ट मांगी जाती है। उक्त राजभाषा अधिनियम व राजभाषा नियमों के अंतर्गत राजभाषा विभाग द्वारा प्रति वर्ष बनाए जा रहे वार्षिक कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उचित कार्रवाई की जाती है। इनके अनुपालन स्वरूप कम्पनी में हिंदी आशुलिपि/टाइपिंग के प्रशिक्षण में 100% उपलब्धि प्राप्त कर ली गई है। हिंदी शिक्षण के क्षेत्र में भी 80% से अधिक अधिकारियों व कर्मचारियों को कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त है। इसलिए कम्पनी का नाम भी अधिसूचित कार्यालयों की सूची में है। यहां सभी नोटिस बोर्ड, रबड़ की मोहरें, नाम पट्ट द्विभाषी में हैं और इनका प्रयोग किया जा रहा है। सभी सामान्य आदेश आदि द्विभाषी में जारी किए जाते हैं और इसके साथ सभी विज्ञापन द्विभाषी में जारी किए जाते हैं। नियम-5 का शत प्रतिशत अनुपालन किया जाता है और मूलपत्रों को अधिक से अधिक हिंदी में लिखा जाता है। 31-12-97 को समाप्त तिमाही रिपोर्ट के आंकड़ों के अनुरूप मूलपत्रों की प्रतिशतता 96.17% रही है। कंप्यूटरों में हिंदी कार्य करने की व्यवस्था उपलब्ध कराई गई है। उपर्युक्त कार्यों में हिंदी की प्रगति प्राप्त करने के फलस्वरूप कम्पनी को निम्नलिखित पुरस्कार प्रदान किए गए हैं :—

(i) इन्दिरा गांधी-राजभाषा पुरस्कार :

कम्पनी में उपर्युक्त कार्यों में हिंदी के प्रयोग को बढ़ाने व प्रशिक्षण कार्यक्रम में कम्पनी द्वारा उपर्युक्त कार्यों में उपलब्धता प्राप्त करने के फल-स्वरूप कम्पनी को वर्ष 1988-89 के लिए इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार के अंतर्गत सांत्वना पुरस्कार से कम्पनी को सम्मानित किया गया। यह पुरस्कार दिनांक 23 मार्च, 1990 को विज्ञान भवन में आयोजित समारोह में डॉ. शंकर दयाल शर्मा, पूर्व उप-राष्ट्रपति द्वारा हमारे अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, श्री शुद्धोदन राय को प्रदान किया गया। यह दिवस कम्पनी के लिए एक ऐतिहासिक दिवस के रूप में चिरस्मरणीय रहेगा।

(ii) ताम्र पत्र :

शहरी कार्य और रोजगार मंत्रालय द्वारा अपने कार्यालयों, उपक्रमों आदि हेतु चलायी जा रही सर्वोत्तम हिंदी पत्रिका प्रकाशन योजना के अंतर्गत वर्ष 1993-94 में कंपनी की गृह पत्रिका "प्रीफैब न्यूज" को द्वितीय पुरस्कार से सम्मानित किया। 23 मई, 1995 को संसद सौंध में आयोजित हिन्दी सलाहकार

समिति की बैठक के दौरान माननीया मंत्री, शहरी कार्य और रोजगार मंत्रालय, श्रीमती शीला कौल द्वारा विशिष्ट ताम्र प्रशस्ति पत्र हमारे अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री शुद्धोदन राय को प्रदान किया गया।

(iii) राजभाषा शील्ड 1995-96 पुरस्कार :

राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, नई दिल्ली द्वारा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उपक्रम), दिल्ली के तत्वाधान में दिनांक 17 दिसम्बर, 1996 को स्कोप आडिटोरियम, नई दिल्ली के सभागार में आयोजित पुरस्कार वितरण समारोह के दौरान श्री चन्द्रधर त्रिपाठी, सचिव, राजभाषा विभाग द्वारा तृतीय राजभाषा पुरस्कार हिन्दुस्तान प्रीफैब लिमिटेड को प्रदान किया गया। उक्त शील्ड वर्ष 1995-96 की अवधि के दौरान हिन्दुस्तान प्रीफैब लिमिटेड संस्थान में हिन्दी की प्रगति के लिए प्रदान की गई।

डॉ. लक्ष्मीनारायण दुबे राष्ट्रपति द्वारा सुब्रह्मण्यम् भारती राष्ट्रीय पुरस्कार

राष्ट्रपति श्री के. आर. नारायणन् ने राष्ट्रपति भवन, नई दिल्ली में केन्द्रीय हिन्दी संस्थान के एक विशेष अखिल भारतीय समारोह में प्रोफेसर लक्ष्मीनारायण दुबे को भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय के शिक्षा विभाग की हिंदी सेवा सम्मान योजना के अंतर्गत वर्ष 1997 के हिन्दी के विकास तथा प्रसार के क्षेत्र में उल्लेखनीय सेवाओं के लिए सुब्रह्मण्यम् भारती राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया जिसके अंतर्गत पन्द्रह हज़ार रुपये की सम्मान राशि, ताम्र-रजत-पत्र का प्रशस्ति-पत्र तथा शाल प्रदान किया गया। इस शुभावसर पर प्रकाशित परिचय-स्मारिका में डॉ. लक्ष्मीनारायण दुबे का जीवन-वृत्त प्रकाशित किया गया है। मानव संसाधन विकास शिक्षा राज्य मंत्री श्री मुहीराम सैकिया ने कार्यक्रम की अध्यक्षता की। डॉ. लक्ष्मीनारायण दुबे विगत चार दशकों से हिंदी, भारतीय संस्कृति, उच्च शिक्षा तथा राजभाषा-विश्वभाषा की सेवा कर रहे हैं।

आशुलिपि में अपने ही पिता का विश्व रिकार्ड तोड़ा

लोकसभा के रिपोर्टर हरीश चन्द्र बिष्ट ने हिंदी आशुलिपि में 260 शब्द प्रति मिनट का नया विश्व कीर्तिमान स्थापित किया है।

श्री बिष्ट गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड्स में अब तक दर्ज विश्व कीर्तिमान को दस शब्द से तोड़कर पुस्तिका में अपना रिकार्ड अंकित कराने में सफल हो गए हैं। पुराना 250 शब्द का रिकार्ड उन्हीं के पिता डॉ. गोपाल सिंह बिष्ट के नाम था। उन्होंने केन्द्रीय सचिवालय हिंदी परिषद् द्वारा आयोजित 36वीं अखिल भारतीय हिंदी आशुलिपि प्रतियोगिता में यह उपलब्धि अर्जित की, जिसमें वह पूरे देश में प्रथम रहे।

परिषद् की विज्ञप्ति के अनुसार श्री बिष्ट को यह सफलता रातों रात नहीं मिली। वह 1984 से परिषद की प्रतियोगिताओं में भाग लेते रहे और 1988 से 1993 तक लगातार छह वर्ष तक पूरे देश में प्रथम रहे। 21 वर्ष की आयु में पहली बार उन्होंने 250 शब्द प्रति मिनट के विश्व कीर्तिमान और इस अवधि में कुल तीन बार विश्व कीर्तिमान की बराबरी की। श्री बिष्ट इस वर्ष सातवीं बार विजेता रहे, जबकि 1962 से चल रही इस प्रतियोगिता के इतिहास में कोई भी पांच बार से अधिक विजेता नहीं बन पाया है।

पुरस्कार स्वरूप श्री बिष्ट को चल जैयन्ती, एक पदक, प्रशस्ति पत्र तथा नकद पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

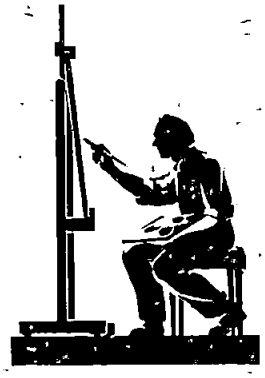

आदेश अनुदेश

राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय) का दिनांक 28-7-1998 का कार्यालय ज्ञापन संख्या-13017/4/90-रा. भा. (नी. स.)

राजभाषा विभाग के दिनांक 12 अगस्त, 1983 के का. ज्ञा. सं. 14012/55/76-रा. भा. (ग) द्वारा, अंग्रेजी के अतिरिक्त हिंदी में सरकारी काम करने के लिए अंग्रेजी आशुलिपिकों/टाइपिस्टों को हिन्दी प्रोत्साहन भत्ता देने की योजना 15 अगस्त, 1983 से लागू की गई। इस योजना के अधीन एक निर्धारित मात्रा (हिंदी में औसतन 5 टिप्पणियां/प्रारूप/पत्र प्रतिदिन अथवा 300 टिप्पणियां/प्रारूप/पत्र प्रति तिमाही टाइप करना) में सरकारी कार्य हिंदी में भी करने के लिए अंग्रेजी आशुलिपिकों/टाइपिस्टों को क्रमश: रुपए 30/- व रुपए 20/- प्रतिमाह विशेष प्रोत्साहन भत्ता स्वीकार किया जा सकता था। इस योजना पर पुन: विचार के पश्चात् इस विभाग के दिनांक 16 अगस्त, 1987 के का. ज्ञा. सं. 13034/31/85-रा. भा. (ग) के अनुसार, उक्त प्रोत्साहन भत्ते की राशि को आशुलिपिकों/टाइपिस्टों के लिए क्रमश: रुपए 60/- व रुपए 40/- कर दिया गया था।

2. इस प्रोत्साहन भत्ते की राशि को 1 अगस्त, 1997 से आशुलिपिकों/टाइपिस्टों के लिए क्रमश: 120/- रुपए तथा 80/- रुपए प्रतिमाह किया जाता है। दिनांक 12 अगस्त, 1983 के का. ज्ञा. सं. 14012/55/76-रा. भा. (ग) में इस योजना के अंतर्गत प्रोत्साहन देने के लिए जो शर्तें दी गई हैं, वे लागू रहेंगी।

3. यह आदेश व्यय विभाग के दिनांक 16-7-98 के यू. ओ. सं. हिन्दी-18/स्था. 3(क)/98 में दी गई सहमति से जारी किया जाता है।

ह.-

बृजमोहन सिंह नेगी,
निदेशक (नीति)

स्वास्थ्य चर्चा

क्या आपने कभी सोचा है कि मौसम बदलाव के साथ हमारे मनोदशा में क्यों परिवर्तन हो जाता है? बारिश के मौसम में अक्सर कुछ लोग उदास हो जाते हैं। ठंडे स्थानों पर रहने वाले लोग अक्सर शीत निष्क्रियता से पीड़ित रहते हैं।

मनोचिकित्सकों के अनुसार आत्महत्या का प्रयत्न, ज्यादा शराब पीना, भूख से अधिक भोजन करने जैसी खराब मनोदशा सर्दियों की अंधेरी रात और मानसून के दौरान बढ़ जाती है।

वैसे ऊब, अकेलापन और घर में ही बैठे रहना भी खराब मनोदशा पर प्रभाव डालने वाले कारक हो सकते हैं लेकिन इसके जैविक कारण भी हैं। हमारे शरीर के सामान्य रूप से क्रिया करने में सूर्य की रोशनी भी एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

अंधेरी सर्दियों और मानसून के महीनों में जब हम घर के अंदर बंद हो कर रह जाते हैं तो सूर्य की रोशनी की आपूर्ति कम होने से मस्तिष्क की पाइनल ग्रंथि पर प्रभाव पड़ता है। कुछ लोगों में इस कारण शारीरिक द्रव्यों में असंतुलन पैदा हो जाता है जिस कारण वे उदास व मूडी हो जाते हैं।

ऐसे लोगों के लिए अधिक से अधिक मात्रा में धूप सेंकना ही इसका इलाज है। घुप्प मौसम में बिजली की तेज रोशनी में रहने से भी मदद मिल सकती है।

संविधान में हिन्दी भाषा के विकास के लिए निदेश

351 संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी के और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं के प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहां आवश्यक या वांछनीय हो वहां उसके शब्द-भण्डार के लिए मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करें।

MGIPRRND-2319/HA/98-10,000 Copies

जितनी कि देश की कोई और भाषा। हमारी अपनी भाषाएँ और लिपियाँ हैं और उनसे हमें भी उतना ही प्यार है जितना हिन्दी भाषियों को हिन्दी से। हम राजभाषा के रूप में हिन्दी को स्वीकार कर रहे हैं क्योंकि अन्य किसी भाषा की तुलना में इसे बोलने वाले कहीं ज्यादा हैं। लेकिन अगर इसी वजह से आप कहें कि हम कल से ही बदल जाएं, हिन्दी कल से ही पूरी तरह अपना ली जाए, तुरत-फुरत राजभाषा बना दी जाए, तो मुझे नहीं लगता कि लोग मानेंगे। उल्टे, ऐसी हठधर्मिता हताशा, निराशा बल्कि और भी बदतर चीजों की ओर ले जा सकती है।"

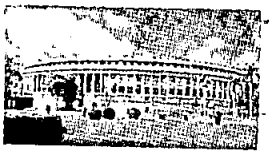

अलगूराय शास्त्री

(संयुक्तप्रांत)

"हमारे स्वाधीनता संघर्ष का शुरू से ही लक्ष्य रहा स्वराज... 'स्वराज' शब्द संस्कृत का है और अपने मूल अर्थ के साथ ही आज यह हिन्दी में प्रचलित हो गया है। व्यापक है अर्थ इस शब्द का। 'स्व' अर्थात अपना व्यक्तित्व, अपनी पहचान, इस प्रकार राजनैतिक संदर्भ में 'स्वराज' का अर्थ है कि बतौर एक राष्ट्र के हमारी अपनी पहचान है।...

आज जब हम स्वराज प्राप्त कर चुके हैं तो हमारे 'स्व' को अभिव्यक्ति का अवसर मिलना ही चाहिए। बड़े दुख: की बात है कि हमारे अपनों में से कुछ लोग ऐसे हैं जो समझते हैं कि हमारी अपनी कोई एक भाषा है ही नहीं, हमारा अपना साझा कुछ है ही नहीं, हमें सब कुछ नये सिरे से गढ़ना है। ऐसे लोगों से मैं अपने अनुभव के आधार पर कहना चाहता हूँ कि हमारी अपनी भी एक भाषा है जो देश के लोगों में अधिकांश समझते और बोलते हैं।

1942 में मुझे उत्तर-पश्चिम सीमा प्रान्त में सरब नदी के किनारे बादशाह खान और उनके भाई से मिलने का अवसर प्राप्त हुआ था। आपका क्या ख्याल है... हमारी बातचीत किस भाषा में हुई? पश्तो में नहीं, अंग्रेज़ी मे हरगिज़ नहीं, बल्कि उसी हिन्दी में जो मैं इस वक्त आपके सामने बोल रहा हूँ। इसी हिन्दी में मैंने बादशाह खान के खुदाई खिदमतगारों से बात की और मैं यकीन दिलाता हूँ आपको कि उनमें से हरएक को अच्छी खासी हिन्दी आती थी। इसके पहले मैं 1928 में लाला लाजपत राय के साथ मद्रास गया था। और वहां के लोगों से भी मैंने हिन्दी में ही बात की थी...

जब हम राष्ट्रभाषा के सवाल पर चर्चा करते हैं तो स्पष्ट है कि अंग्रेज़ी तो हमारी राष्ट्रभाषा रह नहीं सकती।

...अकेली हिन्दी ही ऐसी भारतीय भाषा है जिसे अंत: प्रान्तीय स्वीकृति प्राप्त है। देश के अधिकांश लोग इसे बोलते समझते हैं...

... हिन्दी की प्रतिद्वंद्विता न बंगला के साथ है न कन्नड़ के साथ न किसी भी और भारतीय भाषा के साथ...हिन्दी की प्रतिद्वंद्विता यदि है तो केवल अंग्रेज़ी के साथ।"

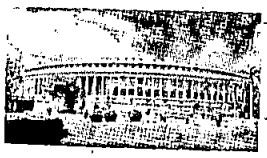

डॉ० श्यामा प्रसाद मुखर्जी

(पश्चिम बंगाल)

"भारत में सदा से अनेक भाषाएँ रहीं हैं। इतिहास साक्षी है कि कोई एक भाषा स्वीकार करने के लिए सारे देश को विवश करना किसी के वश में नहीं रहा है। कुछ मित्रों को लगता है कि भविष्य में भारत में एक ही भाषा का बोलबाला होगा। साफ कहूँ तो ऐसी बातों से मेरी सहमति संभव नहीं है। मैं राष्ट्रीय एकता स्थापित करने की मूलभूत आवश्यकता की उपेक्षा नहीं कर रहा हूँ, लेकिन ऐसी एकता तभी संभव हो सकती है जबकि राष्ट्रीय जीवन के सभी प्राणवान तत्वों को गौरव, आत्मसम्मान और समरसता के साथ विकसित होने का अवसर मिले...।

अगर किसी को लगता है कि संविधान में एक अनुच्छेद डाल देने के बाद कोई भाषा सारे देश पर जबरन थोप देने का रास्ता खुल जाएगा तो यह संभव नहीं है। अनेकता में एकता भारत का मूल मंत्र है और इस एकता को समझदारी, स्वीकृति की प्रक्रिया से ही हासिल किया जा सकता है। ऐसी प्रक्रिया के लिए वातावरण बनाना होगा...

कुछ बातें साफ-साफ कहना जरूरी है, ऐसा क्यों है कि बहुत सारे अहिन्दी भाषी लोग हिन्दी के प्रति आशंकित हैं? हिन्दी के समर्थक मुझे क्षमा करें, यह कहने के लिए कि यदि वे अपनी मांगों में, हिन्दी लागू करने के अपने उत्साह में इतने आक्रामक न होते तो जो कुछ वे चाहते थे उन्हें मिल गया होता, बल्कि

पं. सं. 3246/77

आई एस एस एन 0970-9398

शायद चाहे गए से भी ज्यादा मिल गया होता, और वह भी सारे भारत की जनता के स्वतः स्फूर्त सहयोग के साथ। लेकिन दुर्भाग्य की बात, एक डर बन गया है। और भी दुर्भाग्य की बात कि कई जगह वह डर हकीकत में भी बदल गया है, अन्य भाषा-भाषी लोगों पर ऐसी असुविधाएँ थोप दी गई हैं जो अत्यन्त घृणित विदेशी शासन के दौरान भी नहीं थी।"

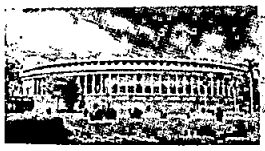

पं० जवाहरलाल नेहरू

"भाषा बड़ी करीबी चीज़ है। समाज द्वारा ईज़ाद की गई चीजों में यह शायद सबसे महत्वपूर्ण है, और इसी से बाकी चीज़े विकसित हुई हैं। इसकी वजह से हम खुद को पहचानते हैं, अपने पड़ोसी को, अपने समाज को पहचानते हैं, इसी की वजह से हम दूसरे समाजों को भी पहचानते हैं। भाषा एकता कायम करती है, लेकिन कई बार इसी की वजह से एकता टूटती भी है... इसलिए जब हम एक सामान्य भाषा की बात करें तो इन दोनों पहलुओं का ध्यान रखें...।

...राष्ट्रपिता ने इस सवाल पर विचार किया था... अपने उसी अनोखे ढंग से जिससे कि वह दीगर बुनियादी सवालों पर विचार करते थे...। ऊपरी-ऊपरी चीज़ों पर वक्त बर्बाद करने की बजाय सीधे सवाल की जड़ को, उसकी बुनियादी नवैयत को समझने की कोशिश करते थे ... उन्होंने भाषा के सवाल पर सिर्फ साहित्यिक रवैया नहीं अपनाया। यह बात और है कि वह स्वयं एक महान साहित्यिक हस्ती थे,... संभवत: अनजाने में ही लेकिन उन्होंने भाषा के सवाल पर साहित्यिक दृष्टि से नहीं बल्कि हिन्दुस्तानी कौम, हिन्दुस्तानी जनता के भविष्य की निगाह से गौर किया...

सबसे पहली बात जो उन्होंने सिखाई वह यह थी कि अपनी सारी महानता और महिमा के बावजूद अंग्रेज़ी इस देश की भाषा नहीं हो सकती, कोई कौम पराई भाषा के बूते पर तरक्की नहीं कर सकती। क्योंकि पराई भाषा जनता की भाषा नहीं हो सकती, वह तो समाज को दो हिस्सों में बांट देगी-पराई भाषा में सोच-विचार, काम-काज करने वाले लोग और उनसे अलग दूसरी दुनिया में रहने वाले लोग...

दूसरी जिस बात पर राष्ट्रपिता का ज़ोर था वह यह कि सरकारी काम-काज की भाषा जनता की भाषा से ही विकसित हो सकती है, चन्द पढ़े-लिखों की भाषा से नहीं।... आखिरकार तो किसी भाषा की महिमा आम जनता और पढ़े-लिखों की भाषा के बीच सही ताल-मेल पर ही निर्भर करती है...

... जिस भी भाषा को हम सारे हिन्दुस्तान की भाषा के रूप में अपनायें, उस भाषा के सिलसिले को हम शुद्धतावाद की हाथीदांती मीनार तक ही सीमित नहीं रख सकते। बेशक भाषा की शुद्धता और मानकता भी जरूरी है लेकिन ऐसे ढंग से नहीं कि भाषा आम जनता से ही कट जाए...

... आखिरी बात जो इस सिलसिले में बापू के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण थी वह यह कि देश की राजभाषा में देश की मिली-जुली संस्कृति झलकनी चाहिए। इस अर्थ में, हिन्दी में न केवल इसके अपने क्षेत्र, उत्तर-भारत की मिली-जुली संस्कृति झलकनी चाहिए बल्कि देश के अन्य भागों की भी संस्कृति इसमें झलकनी चाहिए, जहां कि इस भाषा का बढ़ाव हुआ है। इसलिए बापू 'हिन्दुस्तानी' लफ्ज़ का इस्तेमाल किसी तकनीकी मामले में नहीं उस व्यापक और गहरे अर्थ में करते थे जिसमें कि यह शब्द (हिन्दुस्तानी) खासकर उत्तर-भारत के तमाम, विविध सामाजिक समूहों की संस्कृति को प्रतिबिम्बित करने वाली भाषा की सूचना देता है।

इस अर्थ को बार-बार, अपने जीवन के अंतिम दिनों तक गांधी जी रेखांकित करते रहे - मैं तो बहुत छोटा आदमी हूँ, मेरी तो मजाल नहीं कि मैं यह भी कह सकूँ कि मैं बापू से सहमत या असहमत हूँ, लेकिन पिछले तीसेक बरसों में, पूरी विनम्रता के साथ मैं भाषा के मामले में गांधी जी के विश्वास के साथ जुड़ा रहा हूँ।"

स्रोत : कांस्टीट्यूएंट असेम्बली डिबेट्स
वाल्यूम 9. संख्या 33
पृष्ठ संख्या 1354 से 1411
का अनुवाद

प्रकाशक : मैनेजर पब्लिकेशंस
भारत सरकार प्रेस
नई दिल्ली

हिंदी विशेषांक

ओरिएण्टल पत्रिका

राजभाषा विभाग, भारत सरकार, (गृह मंत्रालय) लोकनायक भवन, नई दिल्ली-110003 के लिए उप संपादक द्वारा प्रकाशित तथा प्रबंधक, भारत सरकार मुद्रणालय, रिंग रोड, मायापुरी, नई दिल्ली-110064 द्वारा मुद्रित।